नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मण हिताय च

भारतीय गोधन।

"धनञ्च गोधनं धान्यं स्वर्णादयो वृथैव हि"।

लेखक—

श्रीयुक्त पण्डित झाबरमल्ल शर्म्मा।

प्रथम संस्करण १००० } १९७९ वि० { मूल्य २)

भारतीय गोधन



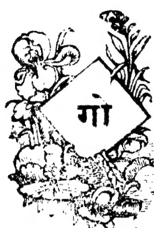
"सजल नयन गोवंश जासु मग अजहुँ निहारत।"

—पं० माधव प्र० मिश्र।

विषय सूची ।

॥ श्रीहरिः ॥

भूमिका ।



साहित्यकी यह पुस्तक ही भूमिका है। इसकी भूमिका क्या लिखी जाय? किन्तु "गतानुगतिको लोकः",—अतएव भूमिकाके नामसे दो बातें कहनी ही पड़ती हैं।

गोरक्षा करना केवल हिन्दुओंकी धार्मिक दृष्टिसे ही नहीं, आर्थिक-विचारसे भी कितना आवश्यक है, इसके सम्बन्धमें विशेष कहनेका प्रयोजन नहीं। सौकी बात एक है और वह यह है कि देशके स्वास्थ्य, धर्म और धन,—इन तीनोंका दारमदार गोरक्षापर है। इसलिये प्रत्येक भारतवासीका गोरक्षाके लिये प्रयत्नवान् होना चाहिये। गोरक्षासे ही भारतवर्षमें घृत, दूध और अन्नकी अधिकता होगी। लोगोंमें गोसाहित्यका प्रचार खूब होना चाहिये। गोचिकित्साकी पुस्तकें दीन किसानोंके हाथोंमें पहुंचनी चाहियें। यदि वे स्वयं न पढ़ सकें, तो उन्हें पढ़ाने और सुनानेके यत्न होने चाहिये। इससे भारतके किसान,

गोप आदि गोवंशकी वृद्धि कर सकेंगे, वे अपनी गाय और बैलोंकी मृत्यु लाचारीसे देखते नहीं रहेंगे। उस समय उनके हृदयसे केवल आहें नहीं निकलेंगी और उनके हाथ पैर भी बंधे हुएसे नहीं रहेंगे। उनके हाथ काम करेंगे और उनकी बुद्धि अपने गोबैलोंकी वृद्धि तथा उन्नतिके लिये नयी नयी बातें सोचेगी। गोरक्षाके पवित्र कार्यके लिये बड़े, बूढ़े, धनी, निर्धन, सभीके सहयोग का प्रयोजन है परन्तु विशेषकर विद्या-बुद्धि और उत्साह सम्पन्न युवक हृदयकी आवश्यकता है। युवक-हृदयमें बल और उत्साहका निवास है। हे देशके युवा-हृदय! क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारा देश लक्ष्मी और सरस्वतीका कृपापात्र बनें, क्या आप चाहते हैं कि आपके देशवासियोंका मुरझाया हुआ मुंह फिर एक बार खिल उठे? यदि 'हां' तो गोरक्षाके कार्यमें व्रती हो जाइये। देवगण आपपर पुष्प-वृष्टि करेंगे।

गोरक्षाका प्रश्न भारतके लिये रोटीका प्रश्न है। प्रसन्नताकी बात है कि देशकी इस क्रन्दमान-आवश्यकताकी ओर हमारे मुसलमान भाइयोंका ध्यान भी गया है। आल इण्डिया मुस्लिमलीगकी पिछली बैठकमें उसके सभापति सदाशय हाजी-कुलमुल्क हकीम अजमलखां साहबने गोरक्षाके विषयमें मुसल-मान-संसारके समक्ष अपने सद्विचार प्रकटकर बकरीदके अवसरपर यथा सम्भव गौकी कुर्बानी न करनेका जो प्रस्ताव

स्वीकार कराया है, उसके लिये हिन्दूजनता उनकी कृतज्ञ है। जिस दिन "यथासम्भव" का शब्द निकलकर उक्त प्रस्ताव कार्यमें परिणत होगा उस दिन हिन्दू-मुसलमानोंके प्रेमकी गांठ अधिकतर दृढ़ हो जायगी, यही नहीं प्रत्युत भारतवर्षकी नयी उन्नतिका क्रम भी आरम्भ हो जायगा। दयामय भगवान् वह दिन शीघ्र दिखावें।

गोरक्षाके उद्देश्यको लेकर पं० भोलानाथजी शर्मा प्रभृति सज्जनोंके प्रयत्नसे अखिल भारतवर्षीय गोमहासभाकी स्थापना गत सन् १९१७ ई० में हुई थी। सन्तोषकी बात है, कि यह सभा अपना कार्य कर रही है। गोमहासभाको प्रार्थनासे भारत सरकारने "पशुगणना" आरम्भ की है, जिसका कार्य शायद इसी मार्च मासमें समाप्त हो जायगा। गोमहासभाको गो-बैलोंका देशसे बाहर भेजा जाना बन्द करनेके लिये भी शीघ्र आन्दोलन आरम्भ करना चाहिये।

अब एक बात इस पुस्तकके प्रकाशनके सम्बन्धमें कह देना चाहता हूं। अबसे प्रायः ५ वर्ष पूर्व श्रीयुक्त बा० हनुमानप्रसाद पोद्दारसे अनुरुद्ध होकर मैंने इस पुस्तकके सङ्कलनका विचार किया था। मेरे आदरणीय मित्र शारदा-सम्पादक पं० चन्द्रशेखर शास्त्रीजीने इस काममें मेरा हाथ बटाया। पोथी तैयार हो गयी। प्रेसमें छपनेको भी दे दी गयी। किन्तु फिर विघ्न पर विघ्न आते रहनेके कारण वर्ष बीत गये। अब बन्धुवर पं०

उमादत्तजी शर्माकी कृपासे यह प्रकाशित हो सकी है। यदि पण्डितजी इसके छपानेमें शीघ्रता न करते तो वर्ष छः महीनें और यों ही निकल जाते। पुस्तकमें जो प्रूफकी अशुद्धियां रह गयी हैं, उनके लिये मैं बहुत ही लज्जित हूं। विशेषकर प्रेसके भूतोंने संस्कृतके श्लोकोंकी कहीं कहीं बड़ी दुर्दशा की है। आशा है, उन्हें पाठक सुधारकर पढ़ेंगे। इस पुस्तकके प्रकाशनमें चित्र विचार-कार्यालयके संस्थापक और अफलातूनी अर्कके आविष्कारक पं० सी० एल० शर्माजीके परामर्शसे बा० लालचन्दजी कसेराने सहायता देकर अपनी गोभक्तिका परिचय दिया है। शर्माजीका कहना है, कि बाबू लालचन्दजीका गोसेवासे बड़ा प्रेम है। इस पुस्तकके लिये अनुराग प्रकाश करना भी गोभक्तिका एक उदाहरण है।

इस पुस्तकका सङ्कलन करनेमें अपने अनुभवके सिवा Cow Keeping in India, खरें गोरक्षण, गोधन, गोपालवान्धव पशुचिकित्सा, तिब्बे हैवानात, पशुपालन, गोपालन, प्रभृति पुस्तकें पढ़नी पड़ी हैं और उनसे आवश्यक सहायता भी ली गयी है, अतएव उनके लेखक और प्रकाशकोंका मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूं। पण्डितवर राधाकृष्णजी मिश्रकी आज्ञा और इच्छा तो मेरे कार्य्योंमें प्रधान है। कलकत्ता-महाविद्यालयके प्रतिष्ठाता "कलकत्ता-समाचार" के प्रधान सम्पादक कुंअर गणेशसिंहजी बी० ए० को धन्यवाद क्या दूं? मेरे सभी कार्य्योंका श्रीगणेश

उनके शुभ परामर्शसे होता है। अलवर-इतिहास-कार्य्यालयके सुयोग्य विद्वान् मित्रवर पं० रामकुमारजी मिश्र और पं० यज्ञेश्वर जी शास्त्रीका धन्यवाद मैं अवश्य करता हूं, जो समय समयपर अपनी सम्मति भेजते रहे हैं।

अन्तमें यह निवेदन कर मैं भूमिका समाप्त करता हूं कि पुस्तक अच्छी हुई है या बुरी, यह तो आप लोग जानें, किन्तु मैंने विषय-सङ्कलनमें कोई कमी नहीं रखी है। भाषाकी सरलताका भी यथासम्भव ध्यान रखा गया है। यदि कहीं क्लिष्टता आ गयी है, तो वह दूसरे संस्करणमें दूर कर दी जायगी। दूसरे संस्करणकी तैयारी है। उसके लिये विस्तृत प्रस्तावना श्रीयुक्त पं० बैजनाथजी चतुर्वेदी महाशय लिख रहे हैं। इस पुस्तकसे लोगोंका ध्यान गो-भक्तिकी ओर आकर्षित होकर गोरक्षाके कार्य्यमें कुछ भी सहायता पहुंचेगी तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगा।

माघ कृष्णा १४
सं० १९७६ वि०
कलकत्ता।

(signature)



भारतीय गोधन



स्वर्गीय राजा जयसिंहजी बहादुर,
खेतड़ी-नरेश।

जिन्होंने

स्वकीय सदाचार-परायणता, विद्यानुरागिता, अध्ययनशीलता,
एवं विचार-प्रवीणतासे अपने गुरुजनोंको मुग्ध कर दिया था,

जो

सच्चरित्रताके आदर्श, सज्जनताके शिखर, प्रतिभाकी प्रतिमा और
शान्तिके निधान थे, वीर-भूमि राजस्थानके क्षत्रियोंको अतीत
और वर्तमान पीढ़ीमें जो अद्वितीय गुण-सम्पन्न तेजस्वी
राजकुमार समझे जाते थे, जिनका हृदय उदारता,
स्वदेश-प्रेम और लोक-सेवाके उच्चभावोंसे
परिपूर्ण था, उन—

खेतड़ीके भूतपूर्व अधीश्वर

स्वर्गीय राजा जयसिंहजी बहादुरकी

पवित्र—स्मृतिमें

यह पुस्तक

उत्सर्ग

हुई ।

स्वर्गीय राजा जयसिंहजी बहादुर।



हाभारतके मत्स्यदेशकी लगभग वही सीमा थी, जो आजकल राजपूतानाके जयपुर राज्यकी है। यहांपर सूर्यवंशी कच्छवाह-कुलके राजाओंका राज्य है, जो गोपाचल (ग्वालियर) के नरवर नगरसे आनकर यहां प्रतिष्ठित हुए। क्रमसे उनकी राजधानी आमेर हुई। वहींपर प्रबलप्रतापी राजा मानसिंह हुए थे जिन्हें अटक भी न अटका सकी और जिन्होंने समुद्रमें खांड़ा (तलवार) पखाला (प्रक्षालन किया) था। इस वंशकी ज्येष्ठ पीढ़ियां तो आमेरके सिंहासनपर रहती गयीं, किन्तु छोटे वंशाङ्कुरोंने अर्धमरु, अर्ध-उर्वर पश्चिमी भागपर अधिकार करके अपने वंशकरके नामपर उसे शेखावाटी बना लिया। ज्येष्ठाधिकारकी राजसी मर्यादाको छोड़कर इस स्वतन्त्रताप्रिय परिवारमें वहांपर भाइयोंके सम-त्रिभागकी चाल चल जानेसे कई छोटे बड़े राज्य होते गये, जो कभी स्वतन्त्र रहते और कभी सामयिक झगड़ोंमें अपने भाग्यकी परीक्षा करके चढ़ पड़का चमत्कार देखते।

आमेरके सिंहासनपर वैदिक कर्मकाण्ड और ज्योतिषके प्रसिद्ध विद्वान् सवाई जयसिंहजी दूसरे हुए, जिन्होंने आमेरकी

राजधानी तथा आमेर राज्यको शिल्प चातुरीके विलासस्थल जयपुर नगर तथा जयपुर साम्राज्यका रूप दे दिया। उस समय मुगल-शासन टूट रहा था, मरहट्ठे बढ़ रहे थे। गली गलीमें राजा और नवाब हो रहे थे। जयसिंहके कौशल और दूरदर्शितासे शेखावाटीके सभी स्वतन्त्र और अर्धस्वतन्त्र राज्य, जयपुरके करद राज्य बन गये। उस समय शेखावाटीके मण्डलेश्वरोंको तो यह सन्तोषकर लेना पड़ा कि इस संशयमय युगके जीवन-संग्राममें बड़े भाईको कर मात्र देनेसे अस्तित्व अक्षण्ण रह गया और सवाई नरेशको अपने ही कुलके स्वाधीनचेता कच्छवाह सामन्त एक ही झण्डेके नीचे खड़े होनेवाले मिल गये। अस्तु,

शेखावाटीके राज्योंमें खेतड़ी विशेष परिगणनीय है। खेतड़ीके अधिपतिको राजा बहादुरकी उपाधि है। जयपुरके दरबारमें उन्हें 'कंवर पदे'की बैठकका सन्मान प्राप्त है। महाराजाधिराज जयपुर खेतड़ीके नरेशका प्रत्युत्थानपूर्वक अभिनन्दन करते हैं, केवल यही नही, 'मोरछल'का मुरतब भी उन्हें मिला हुआ है।

महाप्रतापी वीर भूपालसिंहजीने खेतड़ी राज्यकी स्थापनाकर दुर्गम पर्वतोंमें 'भोपालगढ़' बनाया था। मुगल सम्राट् आलमगीर द्वितीयकी ओरसे उन्हें हजारीका मनसब मिला था। भोपालगढ़के अभेद्य दुर्गसे निकलकर सिंघानेके आधे परगनेपर इन्होंने अपना प्रभुत्व जमाया। संवत् १८६८ में

मांवड़ेके स्थानपर भरतपुरके जाट और जयपुरके कच्छवाहोंका प्रसिद्ध युद्ध हुआ था। उस समय "अन्यैः सह विरोधेतु वयं पञ्चोत्तरं शतं"की नीतिके अनुसार इन्होंने जयपुरका पक्ष-पोषण करके बड़ी वीरतासे युद्ध किया था। वहींपर जाटोंसे आप एक तोप छीन लाये थे, जो भोपालगढ़के कुछ नीचे मोर्चेपर अबतक रखी हुई है और 'बुढ़िया तोप'के नामसे अपने वीर विजेताकी कीर्तिको प्रकट कर रही है। संवत् १८८८ में इन्होंने लोहारूके नवाबपर चढ़ाईकी और विजय पाया। जब विजेता सेना सहित दुर्गमें प्रवेश कर रहा था, तब वहींके शत्रुपक्षके किसी सिपाहीकी गोलीसे उसे वीरगति प्राप्त हुई। भोपालसिंहजीके उत्तराधिकारी बाघसिंहजी हुए। उनके पुत्र अभयसिंहजीकी वीरता तथा दूरदर्शिता इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंसे लिखने योग्य है। उस समय मुगल-साम्राज्यके मुखमें मरहट्ठोंकी सेना सिंधिया और हुलकरकी अध्यक्षतामें 'तुलसी सोना' दे रही थी। राजपूत राज्य, जो दिल्लीकी ढाल थे और शताब्दियोंके मुसलमान-प्रभुत्वमें भी अपनी सत्ताको बनाये रह गये थे, वे मराठा घुड़-सवारोंके पैरोंके नीचे अपने खड़े खेतोंका कुचला जाना देखते, अन्तःसारशून्य होते जा रहे थे। भाई मरहठोंने उनका वह नाश किया, जो विधर्मी यवनोंसे न हुआ। उधर घोर निशाके पीछे उषाकी झलककी तरह अंगरेज अपने व्यवहारोंसे दिखा रहे थे कि जीर्ण मुगलों और उद्दण्ड मरहठोंके उत्तराधिकारी होने योग्य

ईश्वरने उन्हें ही बनाया है। रजवाड़े दूधके जले छाछ फूंक फूंककर पीनेवालेकी तरह कभी तो मरहठों और अंगरेजोंको "रामाय स्वस्ति रावणाय स्वस्ति" कह कर रह जाते, कभी 'न ययौ न तस्थौ'की त्रिशङ्कु-लीला दिखाते। वे इतने व्यस्त हो रहे थे कि मुगल-राज्यकी लूटके उत्तराधिकारी होना तो दूर रहा, यह भी स्थिर न कर सकते थे कि खून चूसनेवाले मरहठों-के साथ रहें या अज्ञातकुलशील किन्तु स्वतन्त्रताकी खरी टक-सालसे आये हुए फिरंगियोंका साथ दें। राजा अभयसिंहजीने विचारकर अपना कर्तव्यपथ स्थिर कर लिया, उन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनीके लादेकी घोड़ीके व्यापारी भेषमें छिपी हुई राजनैतिक रेसमें दौड़कर जीतमें प्रथम आनेवाली घोड़ीको पहचान लिया और उसी पर दाव लगाया। जब जयपुर तटस्थ था, उस समय खेतड़ीकी सेनाने हुलकरके कर्दमसे इस विजयिनी-की विजयिनीको बचाया। खेतड़ीके दलके सभी आदमी काम आये, एक भिश्तीतकने वीरोचित कर्मसे सूर्यमण्डलका भेदन किया। उस समय अङ्गरेज अधिकारियोंने सदाकी मैत्रीकी प्रतिज्ञा और कृतज्ञताभावके सूचक पत्र आपको लिखे। सन् १८०३ में लार्ड लेकने दो लाख रुपये वार्षिक आयका कोट-पूतलीका परगना सनदके साथ आपको दिया।

इनके पुत्र तथा उत्तराधिकारी राजा बख्तावरसिंहजी बहादुर उद्दण्डोंको दमन करनेके राज-कर्तव्यमें पिताकी सत्तामें

ही नाम पा चुके थे और 'बबाई' तथा 'बाघोर', आदि पर खेतड़ीकी ध्वजा फहरा चुके थे।

उनके पुत्र राजा शिवनाथसिंहजीने सोलह ही वर्ष राज्य किया, किन्तु उनके पुत्र राजा फतहसिंहजी अपने समयमें अलौकिक पुरुष हुए। पिताके मृत्यु संवत् सन् १८४३ में ही इनका जन्म हुआ। परन्तु युवावस्था आते ही इन्होंने नाबालिगीके समयमें आजानेवाली दुर्दशाओंके परिहारका यत्न आरम्भ किया। अपने समयके नरेशोंमें राजा फतहसिंहजी बहादुर सामयिक शिक्षासे विभूषित आदर्श शासक थे। अपने राज्यकी बागडोर हाथमें आते ही उन्हें सुधार करनेमें कई प्रकारकी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा। अंगरेजी वैद्यक-विद्यामें उनके अनुरागका साक्षी खेतड़ीका डाक्टरी पुस्तकालय और यन्त्र-संग्रह अबतक विद्यमान है। प्रजाके हितार्थ अस्पताल, स्कूल और पुस्तकालय स्थापित करनेके अतिरिक्त इन्होंने और भी कई विभागोंकी प्रतिष्ठाकी, जो उस समयके और रजवाड़ोंकी शासनावस्था देखते नयी बातें थीं। इन्होंने भ्रमण भी बहुत किया और अपना आत्म-चरित लिखने को राजाओंमें नयी नीति दरसाई। इनके सुप्रबन्धकी प्रशंसा रजिडेण्टसे लेकर गवर्नर जनरल तकने आम-दरबारोंमें की।

संवत् १६२७ में इनका मसूरीमें स्वर्गवास होजाने पर सुगृहीत नामधेय राजा अजितसिंहजी खेतड़ीकी गद्दीपर विराजमान

हुए। उस समय जयपुरमें अद्वितीय प्रतिभाशाली महाराज पुण्यश्लोक श्री सवाई रामसिंहजी सिंहासन पर सुशोभित थे। उन्होंने बहुत कालतक अजीतसिंहजीको अपने पास रखा। सुप्रवन्ध और सुजीवनके वहुतसे भाव अजीतसिंहजीमें उस महा-पुरुषके संसर्गसे आये। महाराजा रामसिंहजीकी स्वीकृति और राजनीति एवं सदाचारके ब्राह्मणाकार अवतार बाबू कान्तिचन्द्र मुकर्जीकी नियुक्तिसे पण्डित गोपीनाथजीने इन्हें सुशिक्षा दी। राज्याधिकार प्राप्त होते ही इन्होंने अपने संस्थानको समुन्नत करनेके उपाय आरम्भ किये, जिनमें यहां तक सफलता हुई कि खेतड़ीकी गणना प्रतिष्ठित राज्योंमें होने लग गयी। अपने अध्या-पक पण्डित गोपीनाथजीको प्रधान-मन्त्रीके पदपर प्रतिष्ठित करके इन्होंने कई योग्य पुरुषोंका संग्रह किया। गणित विद्यामें इनकी गति और अभिरुचि आश्चर्यजनक थी, और थी देश-प्रेम राज्य-प्रवन्ध एवं विद्या-प्रचारमें लोकोत्तर निष्ठा। अपने समयमें गुणके ग्राहक और विद्याके प्रचारक आप एक ही थे। जिस प्रकार राजनीतिके चाणक्य, गणित-विद्याके मिहिर और श्रौत-कर्मके दीक्षित सवाई जयसिंह और परममाहेश्वर महाराज रामसिंहके दो नामोंसे जयपुर राज्यकी सारी उन्नतिकी परिसंख्या हो जाती है, वैसे ही अभयसिंह और अजितसिंह, ये दो नाम ही वर्तमान खेतड़ीके सर्वस्व हैं। जिन स्वामी विवेकानन्दके वेदान्त-व्याख्यानोंकी ध्वजा अमेरिकामें फहराई, उनको यहां लौट आनेपर प्रथम आश्रय

और संवर्धन देनेवाले राजा अजितसिंहजी ही थे। संवत् १९५५ में राजा अजीतसिंहजीने विलायत-यात्रा की। भारतेश्वरी महारानी विक्टोरियाने आपसे विण्डसर-राजभवनमें मुलाकात की और एक स्वर्णपदक अपने करकमलसे प्रदान किया। वहांसे जर्मनी, इटली आदि प्रदेशोंमें भ्रमणकर आप भारतको लौटे। यहां भी आप देश देशान्तरोंमें भ्रमण किया करते थे। काश्मीर-यात्रामें आप सकुटुम्ब गये और वहांके महाराजा साहिबने इनके डेरेमें पधार कर अपना आन्तरिक प्रेम प्रकट किया। श्रीमान् वहांसे आगरे लौटे ही थे कि संवत् १९५७ की माघ कृष्ण १३ को सिकन्दरेकी लाट परसे गिरकर राजपूतानेके इस विचक्षण मेधावी परम-प्रतिभा-सम्पन्न राजमार्तण्डका अस्त होगया।

श्रीमान्का विवाह आउवेके ठाकुर साहिबकी कन्या श्रीमती चांपावतीजीसे हुआ था। इस राजयुगलके तीन सन्तान हुईं, दो कन्या और एक पुत्र। कालकी कैसी अद्भुत गति है! न मालूम किन जन्मान्तरोंके संस्कारोंसे, खेतड़ीको अपने इन चक्षुष्य वंशांकुरोंका अमङ्गल ही श्रवण करनेका दुर्भाग्य प्राप्त हुआ। ज्येष्ठा श्रीमती 'बड़ी बाईजी' का विवाह बड़ी धूमधामसे राजा अजीतसिंहजीने मेवाड़-शाहपुरा राज्यके जेष्ठ महाराजाधिराजकुमारसे किया, किन्तु श्रीमती अपने परोपकारमय विद्या-व्यसनी जीवनका अन्त अपने आशास्पद भाईके वियोगके दुःखमें पा गयीं। छोटी श्रीमती बाईजी साहिबाके विवाहोत्सव तक राजा अजीतसिंहजी

विराजमान न रह सके और वे प्रतापगढ़के महाराजकुमार मान-सिंहजीको व्याही गयीं, किन्तु भ्रातृ-वियोगकी असहनीय ज्वालामें उन्हें पतिवियोगका बज्रादधिक दुःख गत वर्षके इन्फ्लुएञ्जाने दिया। उनके चिरजीव प्रतापगढ़के भंवरलालजीको परमेश्वर मार्कण्डेयकी आयु दे, जो न केवल अपनी दुःखिनी माता और बृद्ध पितामहकी नेत्रोंकी ज्योति हैं, प्रत्युत खेतड़ीके अजित-सिंहजीकी विभूतिके भी स्मारक वंशधर हैं।

राजा अजितसिंहजीकी तीसरी और अन्तिम सन्तान स्वर्ग-वासी जयसिंहजी थे, जिनका जन्म संवत् १९४९ माघ शुक्ला नवमीको रानी चांपावतजीके पवित्र गर्भसे हुआ। राजधानी खेतड़ीमें राजकुमारका जन्मोत्सव ऐसे उत्साह और आयोजनसे मनाया गया कि उस प्रान्तमें ऐसा समारोह कभी दृष्टिपथमें न आया था। राजा अजितसिंहजीने उस समय खजाना ही खोल दिया। महाराज दिलीपकी तरह "अदेयमासीत् त्रयमेव भूपतेः शशिप्रभं छत्रमुभे च चामरे" अपने पितरोंके ऋणमोचनके इस सुअवसरपर कृती अजीतसिंहजीके यहां कई राजा महा-राजा और सामन्तोंका संघट्ट हुआ था। प्रायः ३ लाख रुपये उस स्मरणीय महोत्सवमें व्यय हुए थे। कैदियोंको वन्धन-मुक्त करनेके साथ ही किसानोंकी ओर जो लगान बाकी चला आता था वह भी छोड़ दिया गया था। राजकर्म्मचारियोंकी पोतेदारीकी कटौती भी सदाके लिये माफ कर दी गयी थी। उस

पोतेदारीकी कटौतीकी रकमसे राजकर्मचारियोंको इच्छा और मुन्शी जगमोहनलालजीके प्रस्तावानुसार खेतड़ीमें एक अनाथालय स्थापित किया गया, जो आज तक चल रहा है।

यह सम्भावना किसे थी कि माता पिता और प्रजाके आशा-स्थल जिस कुमारकी अवाईमें इतना हर्ष मनाया गया है, वह यौवन आते न आते यशःशेष हो जायगा। केवल आठ ही वर्षकी अवस्थामें जयसिंहजीके लिये पितृ-वियोगका कष्टदायक प्रसङ्ग उपस्थित हो गया। दश लाखकी रियासत और डेढ़ लाख जनताकी रक्षाका भार आपके सिर आ गिरा। राज्यसिंहासन पर आसीन होते ही राजमाताके साथ आप जयपुर चले गये। वहां श्रीमान् जयपुराधीश खेतड़ी-भवनमें पधारे और उन्होंने प्रचलित रीतिके अनुसार सहानुभूति प्रकाश करके 'मातमपुर्सी' की। कुछ दिनोंतक राज्यकार्य पं० गोपीनाथजी चलाते रहे, किन्तु अपने सुयोग्य शिष्यके वियोगमें शिथिल होकर उन्होंने त्याग-पत्र दे देनेमें मनकी शान्ति पायी।

राजा जयसिंहजी बहादुरके बालिग होने तक राज्य कोर्ट्स आफ वार्ड्सके अधीन किया गया। बड़े राज्य जयपुरकी ओरसे प० शिवनाथजी चक खेतड़ीके मुनसरिम नियत हुए। राजा जयसिंहजीको राजमाताकी आज्ञाके अनुसार शिक्षा-विभाग-के सुपरिण्टेण्डेण्ट प० शङ्करलालजी विद्याभास कराने लगे। उसी समय आपकी विद्यामें अपूर्व अभिरुचि देख लोग चकित होने लग

गये थे। कुछ समय तक राजा जयसिंहजी माताके साथ ननिहाल-में रहे। अपने समशील समवयस्क ममेरे भाई श्रीमान् दलपतसिंह जीसे आपका ऐसा स्नेह हो गया कि लिखना पढ़ना रहना सहना आना जाना खाना पीना, सब कुछ साथ ही होता था। संवत् १९६१ में आपकी स्नेहमयी जननी आपको भगवान्के भरोसे छोड़ स्वर्गको सिधार गयीं। इस अकाण्डापतित विपद्में भी आपने धैर्यको न छोड़ा। आपके संरक्षक श्रीमान् महाराजाधिराज सवाई माधवसिंहजी बहादुरको आपकी समुचित शिक्षा निरीक्षाके लिये चिन्ता हुई। श्रीमान्ने बड़े सोच विचारके बाद आपको शिक्षा और रक्षाका भार हिन्दी-संसारके चिरपरिचित पण्डित चन्द्रधरजी गुलेरी बी० ए०को सौंपा। गुलेरीजी पूर्वीय-पश्चिमीय विद्याके केन्द्र और आचारनिष्ठ विद्वान् हैं। खेतड़ीके भाग्य विधाताको धर्म और समयके अनुकूल शिक्षा देनेके लिये ऐसेही विद्वद्रत्नका प्रयोजन था। सन् १९०४ का जून मास आबूमें बिताकर जुलाईकी ता० ११ को अपने अभिन्न-बन्धु श्रीमान् ठा० दलपतसिंहजीके साथ आप मेयोकालेजमें प्रविष्ट हुए। लामियांके ठाकुर साहिब शिवदानसिंहजी आपकी निगरानी करके अपने मातुल-धर्मको निबाहने लगे। राजाजी बहादुर पढ़नेमें ऐसे दत्तचित्त हुए कि उन्होंने सारी चिन्ताओंको अपने हृदयसे दूर कर दिया, शिक्षा प्राप्तिको ही अपना ध्येय समझ लिया। गुण-सञ्चयमें इतनी तन्मयता कहीं नहीं देखी गयी।

गर्मीका छुट्टियां आप आबूमें ही विताया करते थे। भाईका स्नेह दोनों श्रीमती बहिनोंको भी वहीं खींच लाता था। श्रीमान वीकानेरनरेश, तत्सामयिक महाराज जोधपुर, रेजिडेण्ट साहिब जयपुर और एजेएट टूदी गवर्नर जनरल आदिसे आपका गहरा-स्नेह हो गया था। मेयोकालेजके प्रिंसपल, अध्यापक और छात्रोंका तो रात दिनका साथ था, अतएव उनके प्रेमका कहना ही क्या? सच तो यह है कि आपके सुव्यवहार और बातोंमें अपूर्व सौजन्य समाया हुआ था। आपके शालीनतामय सदालाप और अगर्व मिलनकी स्मृति आवालवृद्धके हृदयमें विद्यमान है। पण्डित चन्द्रधरजीकी प्रकृत शिक्षाने राजाजी बहादुरको सदाचारनिष्ठ बना दिया था केवल यही नहीं, अपनी प्रतिभासे उनकी प्रतिभाको जगा दिया था। संवत् १९६४ में गुलेरीजी जयपुर राज्यके समस्त सामन्तोंकी शिक्षाके सुपरिंटेण्डेएट बना दिये गये और उनके स्थानमें पण्डित सूर्यनारायणजी पाण्डेय एम० ए० राजाजी बहादुरके ट्यूटर नियत हुए। ये भी वड़ी निपुणताके साथ आपको शिक्षा देते रहे।

राजा जयसिंहजी बहादुरने अपने राज्यका दौराकर प्रजाकी वास्तविक दशाका ज्ञान भी प्राप्त किया था। मुझे आपसे मिलनेका सौभाग्य उसी दौरेमें प्राप्त हुआ था। उस अवसरपर मैंने और मेरे मित्र प० रामकुमार मिश्रजीने संस्कृत-हिन्दी-पद्यात्मक एक अभिनन्दन पत्र अर्पित किया था, जिसके उत्तरमें

श्रीमान्‌ने बड़े ही कृपापूर्ण वचन कहे थे। इसके बाद तो आपकी कृपा यहां तक बढ़ी कि पत्रों द्वारा भी अपनी कृपाकी सूचना देते रहते थे।

जिस वर्ष आप मेयोकालेजसे प्रशंसाके साथ डिप्लोमा पाने वाले थे, उसी वर्ष सन् १६१० ई० की ३० वीं मार्चको आपका प्रबल क्षय रोगसे जयपुरमें देहान्त हो गया! आपकी असामयिक मृत्युसे प्रजाके हृदयपर गहरी चोट आयी। खेतड़ीके हितैषियोंको आन्तरिक वेदना हुई। दोनों श्रीमती बहिनोंके मर्मान्तक क्लेशकी सीमा न रही। सरस्वतीके मनस्वी सम्पादकने आपके मृत्यु संवादको सशोक प्रकाशित करते हुए ठीक ही लिखा था कि राजपूतानाके राजाओंकी पिछली पीढ़ी और आगामी पीढ़ीमें ऐसा होनहार और सद्‌गुण सम्पन्न युवक और कोई नहीं हुआ। उनके विनय, शील, विद्याभिनिवेश, सदा हंसता हुआ मुख, देश-प्रेम और लोकोपकारके उच्च विचार सभीका स्मरण इस अकाल मृत्युकी वेदनाको और कालकी करालगतिके अनुशोचनको कई गुना कर देता है। संस्कृत और हिन्दीकी ओर उनका प्रेम बहुत था और दोनोंका कितनाही उपकार उनके हाथों होता। एक समय खेतड़ीके एक उच्च कर्मचारीने उन्हें सम्मति दी कि आप उर्दू का भी अभ्यास कीजिये, क्योंकि उससे बहुत काम पड़ेगा। आपने हंसते हंसते उत्तर दिया कि मैं अपने यहां उर्दू रहने दूंगा, तब काम पड़ेगा न? उनके एक गुरुजन लिखते हैं कि

"शरीरकी गठन और गुणोंके उपचयसे यद्यपि वे हम लोगोंसे बढ़कर होते जाते थे तो भी सदा विनयसे नम्र हुए रहते थे। कभी गुरुओंके सामने उन्होंने अग्रासन नहीं लिया। हां, जाते जाते यह अविनय कर गये कि हम लोगोंको यहांपर तुषाग्निमें अपने हृदयको पकानेको छोड़ा और स्वयं अभय अमर अशोक पदको चले गये।"

गोब्राह्मणोंमें आपकी बड़ी श्रद्धा थी और विद्वान् तथा साधुओंपर परमभक्ति। स्वामी आत्मानन्द स्वयंप्रकाश सरस्वती पर आपकी बड़ी आदर-दृष्टि थी और अन्तकालके समीप उन्हें दर्शनके लिये बुलया था। शिक्षा-प्रचारका आपको बड़ा ध्यान था, क्षत्रियोंको उच्च शिक्षित देखनेका बड़ा उत्साह था।

इमारतें बनानेका भी आपको बड़ा चाव था। सन् १६०५में जयपुरके रेजिडेण्ट साहिब बहादुरके हाथसे अजित हास्पिटल भवनका द्वारोद्‌घाटन कराया था और भी कई ईमारतें आपकी इच्छासे बनी थीं। कोठी जयनिवासका शिलारोपण आपने किया था, किन्तु कराल कालने उसको तैयार देखनेका आपको अवसर नहीं दिया। जयसमंद भी आपका शुभ स्मारक है। राजाजी बहादुरमें सदाचार-परायणताका बड़ा गुण था। मद्यपान आदि दुर्गुणोंका तो आपके पास फटकना ही कहां था? आप सदा अपने समवयस्क लोगोंसे पवित्र जीवन-निर्वाह करने-

की प्रतिज्ञाएं कराते। कई युवा क्षत्रिय उनके उपदेशसे ही सच्चरित्र रह रहे हैं। देशको आपसे बड़ी आशाएं थीं।

सम्प्रति खेतड़ीके राज्यासनपर श्रीमान् राजा अमरसिंहजी बहादुर विराजते हैं। आप जयपुर-नरेशकी आज्ञासे अलसीसर-से गोद आकर खेतड़ीके राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त हुए हैं।

स्वर्गवासी राजा जयसिंहजी बहादुरकी जो अकृत्रिम कृपा मुझ पर थी और जो कुछ देशोन्नतिकी आशाएं उनसे थीं, उनका स्मरण चित्तको बहुत ही विकल करता है। नश्वर शरीरको त्यागकर जो अनश्वर कीर्ति वह छोड़ गये हैं, उसका किसी पुस्तकके साथ सम्बन्ध करनेका मेरा संकल्प बहुत समयसे था। आज उनके पावन यशःकायसे इस पुस्तकको संबद्धकर मैं अपना वह विलम्बित-फल-संकल्प पूर्ण करता हूं।—

"न शोचन्मृतमन्वेति न शोचन्म्रियते नरः
एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमनुशोचसि।"
"अभावादीनि भूतानि भावमध्यानि भारत
अभावे निधनं यान्ति का तत्र परिदेवना॥"

—लेखक।

श्रीहरिः।

भारतीय-गोधन।

प्रथम अध्याय।

गोवंश—माहात्म्य।

अपने प्राचीन माहात्म्यको भूले हुए इस समयके भारतवासियोंके सामने हम यह बात बड़े जोरदार शब्दोंमें उपस्थित करना चाहते हैं, कि पुराने भारतवासी हम लोगोंके पूर्वज गोवंशको किस दृष्टिसे देखते थे? हमारे शास्त्रोंमें गौओंके विषयमें क्या लिखा है? श्रुति, स्मृति, पुराण, काव्य आदिमें इनका कौनसा स्थान है? अपने आदर्शको भूले हुए, अपने कर्तव्योंकी ओर दृष्टि न रखनेवाले भारतवासियोंके सामने इनके पूर्वजोंकी कुछ बातें बतलानी ही चाहिये, इनकी आंखोंके सामने प्राचीन बातें रखकर इनका मिथ्याभिमान दूर करना ही चाहिये। क्योंकि यह समय हैं जीवन और मरणके प्रश्नका, क्या वह

जाति संसारमें जीवित रह सकती है, जिसने अपने कर्तव्यका तिरस्कार किया ? संसारके समस्त मनुष्योंके व्यवहार, उद्देश्य आदिके समान होनेपर भी उनमें देश-भेदसे एक विशेषता होती है। वह विशेषता ही उस जातिका प्राण है। जातिके हितेच्छु उस प्राणकी रक्षा करना आवश्यक समझते हैं, उसकी रक्षाके लिये अनेक प्रयत्न करते हैं। जातीय व्यवहारोंमें परिवर्तनकी आवश्यकता होनेपर भी प्राणमें किसी प्रकार फेर बदल न होनेकी चेष्टा जातिके प्रत्येक हितैषीको करनी चाहिये।

संसारकी अन्य जातियोंमें जिस प्रकार परिवर्तन हुए हैं, उसी प्रकार भारतमें भी परिवर्तन हुए हैं, और उनकी संख्या थोड़ी नहीं है। परन्तु भारतके बुद्धिमान् समाज-शास्त्रज्ञ महात्माओंने अपने अनुपम परिश्रमसे भारतके प्राणमें परिवर्तन होने न दिया। ईश्वरके रूपके विषयमें भारतवासियोंके मत परिवर्तित हुए, ईश्वरके विषयमें अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत, द्वैताद्वैत और द्वैत आदि कितने ही वाद प्रचलित हुए। भारतमें कितने ही सम्प्रदायोंने जन्म लिया, उन सम्प्रदायोंके कारण भारतमें विचार-भेदको महत्वका स्थान मिला। भारतवासियोंके आचार-विचारमें भेद हुए, भावमें भेद हुए, कई बातोंमें भारतवासी आपसमें बिछुड़ गये। इतना होनेपर भी एक बात ज्योंकी त्यों बनी रही। इसमें भेद नहीं हुआ। उसकी पूज्यता,

उपकारिता, रक्षा आदिके विषयमें समस्त भारतवासी एकमत रहे। वह बात है—गोवंशकी महिमा।

पहलेकी बात जाने दीजिये। आज भारतमें कितने ही सम्प्रदाय हैं, जो आपसमें सदा ही लड़ा करते हैं। एक सम्प्रदायवालेके मुंहसे निकली हुई बातको दूसरे सम्प्रदायवाला अपने लिये गाली समझता है, और इस प्रकार वे दोनों आपसमें झगड़ने लगते हैं। शान्ति-स्थापन करनेवाले धर्मको वे कलहका कारण बनाते हैं सही, परन्तु गौके विषयमें किसीको कुछ भी आपत्ति नहीं। सनातनी, जैन, बौद्ध, नानक, कबीर, दादू, ब्रह्म-समाज, आर्य्यसमाज आदि सभी गोरक्षा करना अपना कर्तव्य समझते हैं। यदि कोई हमसे पूछे कि भारतमें वह कौन प्लेटफार्म है जिसपर समस्त भारतवासी हिन्दू आकर खड़े हो सकते हैं तो हम यही उत्तर देंगे, वह प्लेटफार्म है गो-पूजा गो-पूजा करना, गोरक्षा करना समस्त भारतवासी हिन्दू अपना सबसे बड़ा कर्तव्य समझते हैं। अपना सर्वस्व त्यागकर भी गोरक्षा करना भारतवासी हिन्दू नामसे सम्बोधित होनेवाले प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है। गौके लिये सर्वस्व निछावर करनेवाले इसी भारतमें मिलेंगे। हम आगे कुछ शास्त्रीय वचन उद्धृत करते हैं, जिनसे आप लोगोंको यह बात स्पष्ट मालूम हो जायगी कि प्राचीन समयमें गोवंशकी कितनी महिमा थी?

ऋग्वेदकी एक ऋक्में गौकी प्रार्थना की गयी है, उसमें कहा गया है 'गौ मेरी माता है और वृषभ (बैल) मेरा पिता है, ये स्वर्गमें मेरा कल्याण करें और संसारमें मुझे सुखी करें, वह ऋक् नीचे लिखी जाती है :—

"गोर्मे माता वृषभः पिता मे, दिवः शर्म जगती मे प्रतिष्ठा ।"

ऋग्वेदके ऐतरेय ब्राह्मणमें लिखा है—

"आज्यं वै देवानां, सुरभिघातं मनुष्याणां, आयुतं पितॄणां, नवनीतं गर्भाणाम् ।"

इस मन्त्रमें यह बात दिखायी गयी है, कि 'घी, दूध, मक्खन, देवता, पितर, मनुष्य तथा गर्भस्थ बालकोंको भी प्रिय हैं ।' इसी प्रकार अथर्व-वेदके कई सूक्तोंमें गो-प्रार्थना देखी जाती है, छान्दोग्य उपनिषद्में भी इन बातोंका उल्लेख मिलता है । यदि आप कर्म-काण्ड देखें तो गो-वंशकी महिमा स्पष्ट मालूम पड़े, प्राचीन समयमें गो-वंशका क्या स्थान था यह बात अनायास ही विदित हो जाय ।

"वचो विदं वाचमुदीरयन्तीं विश्वाभिर्धीभिरुपतिष्ठमानाम् ।
देवीं देवेभ्यः पर्येयुषीं गामामावृक्त मर्त्यो दभ्रचेताः ॥"

(ऋग्वेद, अ० ६ सू० १० मं० ८)

इस मन्त्रकी व्याख्या करते हुए सायणाचार्यने लिखा है, कि गौओंके द्वारा ही हम लोगोंको वाणी प्राप्त हुई है । यह गौओंकी कृपाका ही फल है, जो हम लोग बोलते हैं । गौओंके

हम्बा-रवसे ही अम्बा शब्दकी उत्पत्ति हुई है। गौ हम लोगोंकी माता तथा देवता हैं, परन्तु मूर्ख मनुष्य इस बातको नहीं जानते और वे गौओंका त्याग करते हैं।'

अग्निपुराणमें गौओंकी एक सुन्दर स्तुति है वह स्तुति अर्थके साथ नीचे लिखी जाती है। उस स्तुतिके पढ़नेसे गौओंकी महिमाका बहुत कुछ ज्ञान हो जायगा।

"गावः सुरभयो नित्यं गावः स्वस्त्ययनं महत्।
अन्नमेव परं गावो देवानां हविरुत्तमम्॥
पावनं सर्वभूतानां क्षरन्ति च हवींषि च।
हविषा मन्त्रपूतेन तर्पयन्त्यमरान् दिवि॥
ऋषीणामग्निहोत्रेषु गावो होम-प्रयोजिका।
सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम्॥
गावः स्वर्गस्य सोपाना गावो माङ्गल्यमुत्तमम्।
गावः पवित्रं परमं गावो धन्याः सनातनाः॥
नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्म-सुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमोनमः॥"

(अग्निपुराण)

'गौएं मनोरथोंको पूरा करनेवाली और मङ्गल देनेवाली हैं। इनके द्वारा मनुष्योंके लिये अन्न और देवताओंके लिये उत्तम हवि उत्पन्न होता है। यह सब भूतोंको पवित्र करने वाली और हविको क्षरण करनेवाली हैं।' यह मन्त्रोंसे पवित्र

हवि द्वारा देवताओंको तृप्ति करती हैं, ऋषियोंका अग्निहोत्र इन्हींकी प्रसन्नतासे चलता है, ये सब प्राणियोंकी रक्षा करनेवाली हैं। इनके द्वारा स्वर्ग और कल्याण प्राप्त होता है। ये पवित्र हैं और धन्य हैं। इन गौओंको नमस्कार, लक्ष्मीयुक्त गौओंको नमस्कार, कामधेनुकी पुत्री गौओंको नमस्कार, ब्रह्माकी कन्या इन गौओंको नमस्कार, इन पवित्र गौओंको नमस्कार।

अग्निपुराणमें ही गो-विषयक राज-धर्म कहते हुए कहा गया है—

"गो-विप्र-पालनं कार्यं राज्ञा गोशान्तिरेव च,
गावः पवित्रा माङ्गल्या गोषु लोकाः प्रतिष्ठिताः।
शकृन्मूत्रं वरं तासामलक्ष्मी-नाशनं परम्,
गवां कण्डूयनं वारि शृङ्गस्याघौघ-मर्दनम्॥

'राजाका धर्म है, कि वह गौ और ब्राह्मणोंका पालन करे, उनकी शान्तिकी व्यवस्था करे, क्योंकि गौएं पवित्र हैं कल्याण देनेवाली हैं उनसे लोकोंकी प्राप्ति होती है। गोमय और गो-मूत्रके द्वारा दरिद्रताका नाश होता है। गौओंको खुजलाना और उनके सींगोंका जल समस्त पापोंका नाश करता है।'

देशमें उत्तरोत्तर रोग-वृद्धि, अनावृष्टि और अन्न-कष्ट हो रहा है, इसका भी कारण हिन्दूजातिके विश्वासानुसार गो-जातिकी दुरवस्था ही है। शास्त्रकार कहते हैं:—

"यावद् गो-ब्राह्मणाः सन्ति तावत् पृथ्वी च सुस्थिरा,
तस्मात् पृथ्वी-रक्षणार्थं पूजयेद् द्विज-गो-सतीः।
स्त्रियो गावो ब्राह्मणश्च पृथिव्यां मङ्गल-त्रयम् ॥
एतेषां द्वेषकृद् यस्तु स मङ्गल-परिच्युतः ॥"

अर्थात् 'जबतक गौ और ब्राह्मण अवस्थित हैं, तबतक ही पृथ्वी स्थिरभावसे अवस्थित रह सकती है। इसलिये पृथ्वीके रक्षणार्थ द्विज, गौ और सती स्त्रीकी पूजा करनी चाहिये। सती स्त्री, गौ और ब्राह्मण—ये ही पृथ्वीके मङ्गल-स्वरूप हैं। जो इनसे द्वेष करेगा वह मङ्गलसे विच्युत होगा।'

हिन्दू-शास्त्र, महादेवजीका वृष और भगवतीका गौ-रूपसे वर्णन करते हैं :—

"ज्ञानशक्तिः क्रिया-धेनुर्देवीरूपा प्रकीर्तिता।"
"नीलग्रीवो महादेवः शरण्यो गोपतिर्विराट् ॥"

गो-शरीरमें किस किस देवका निवास है यह भी सुनिये :—

"पृष्ठे ब्रह्मा गले विष्णुर्मुखे रुद्रः प्रतिष्ठितः,
मध्ये देवगणाः सर्वे रोमकूपे महर्षयः।
नागाः पुच्छे खुराग्रेषु ये चाष्टौ कुल-पर्वताः,
मूत्रे गङ्गादयो नद्यो नेत्रयोः शशि-भास्करौ।
एते यस्यास्तनौ देवाः सा धेनुर्वरदास्तु मे ॥"

गौकी स्तुतिमें हमारे शास्त्रकार कहते हैं :—

"इन्द्रस्य च त्वमिन्द्राणी विष्णोर्लक्ष्मीश्च या स्थिता,
रुद्रस्य गौरी या देवी सा देवी वरदास्तु मे।
या लक्ष्मीर्लोक-पालानां या च देवेष्ववस्थिता,
धेनुरूपेण सा देवी तस्य पाप व्यपोहतु॥
देहस्था या च रुद्राणी शङ्करस्य सदा प्रिया,
धेनुरूपेण सा देवी तस्य शान्तिं प्रयच्छतु।
सर्व-देवमयी दोग्ध्री सर्व-लोकमयी तथा,
धेनुरूपेण सा देवी तस्य स्वर्गं प्रयच्छतु॥"

'गुरु, गङ्गा, माता, पिता, सूर्य, चन्द्र, अग्नि, ब्राह्मण, गौ, परिव्राजक और अतिथि तथा स्त्रियोंके लिये गौ प्रत्यक्ष देवता-स्वरूप हैं, यथा :—

"गुरुर्गङ्गा च माता च पिता सूर्येन्दु-वह्नयः,
प्रत्यक्ष-देवता एताः पतिः स्त्रीणां तथा स्मृतः।
ब्राह्मणाश्च स्त्रियो गावोऽविरतश्च तथातिथिः॥"

भगवान् श्रीकृष्ण, नन्दजीसे कहते हैं :—

"गावोऽस्मद्दैवतं तात।"

'पूतनावधके अनन्तर यशोदा और नन्दजीने पूतनाकी छातीपरसे भगवान् श्रीकृष्णको अपनी गोदमें उठाकर गौकी पूंछ और शुष्क गोमयसे उनका रक्षा-विधान किया था, यथा :—

"आदाय कृष्णं सन्त्रस्ता यशोदापि द्विजोत्तम,
गोपुच्छं भ्राम्य हस्तेन बालदोषमपाकरोत्।

गोः करीषमुपादाय नन्द-गोपोऽपि मस्तके,
कृष्णस्य प्रददौ रक्षां कुर्वंश्चैतदुदीरयन् ॥"

'जिस स्थानमें गौ अवस्थान करती है, वह सदा पवित्र रहता है। गौ-स्पर्शसे सभी वस्तुएं पूर्णरूपसे शुद्ध हो जाती हैं, गोमूत्र और गोमय परम पवित्र हैं' :—

गावो यत्र तु तिष्ठन्ति तत्स्थानं नियतं शुचि,
गवां स्पर्शेण सर्वाणि संशुद्धन्त्येव सर्वथा,
गवां मूत्रं पुरीषञ्च पवित्रं परमं मतम्।

'यात्रा-कालमें सवत्सा गौके दर्शनकर गमन करनेका हिन्दू-शास्त्र आदेश देते हैं' :—

"यात्रा-काले सवत्साञ्च धेनुं दृष्ट्वा सुखं व्रजेत्"

'पितृ-श्राद्धादिके उद्देश्यसे ब्राह्मण भोजन करानेमें यदि किसीकी सामर्थ्य न हो तो वह गो-सेवा करे, उसके उद्देश्यकी सिद्धि हो जायगी'—

"यतः कुतश्चित् संप्राप्य गोभ्यो वापि गवाह्निकम्
अभावे प्रीणयन्नस्मान् श्रद्धा–युक्तः स दास्यति।"

बैलों और गौओंको लट्ठ जमानेमें भी क्रूर-हृदयी लोग दया नहीं लाते ; किन्तु गौको पुष्पसे भी आघात न पहुँचाना चाहिये ! शास्त्रकार कहते हैं कि,—

"ब्राह्मणाश्च स्त्रियो गाश्च पुष्पेणापि न ताड़येत्"

वत्स, गौका दूध पीता है या दूसरेके खेतमें गौ विचरती है, उसके निवारणकी इच्छासे किसीको न कहना चाहिये :—

"धावन्तीं गां परक्षेत्रे न चाचक्षीत कस्यचित् ।"

पुण्य-लाभकी आशासे गृहस्थोंको गो-सेवा करनी चाहिये। शास्त्रोंमें गृहस्थोंके लिये गो-धर्म यों बताया है :—

"गवां सेवा तु कर्तव्या गृहस्थैः पुण्य-लिप्सुभिः ।
गवां सेवा-परो यस्तु तस्य श्रीर्वर्द्धतेऽचिरात् ॥
ताड़नं म्रियतां-वाक्यमाघातं ताल-पत्रतः ।
पदाघातं भक्ष्य-रोधं वर्ज्जयेद् गोषु मानवः ॥
गो-गृहेषु सधूमञ्च क्षौरञ्चामिष-भोजनम् ।
पीठासनं पाणि दाहं व्यायामं मैथुनं तथा ॥
मिथ्या-वाक्यं प्राणि-हिंसां भ्रष्ट-द्रव्यस्य भोजनम् ।
परान्न-भोजनञ्चैव द्वादशैव विवर्ज्जयेत् ॥
गवापराध-दण्डञ्च गृहस्थानां न कारयेत् ।
एतान् द्विजेन्द्र गोधर्मान् गृही कुर्यात् सुखं लभेत् ॥"

प्राचीन भारतवासियोंका जीवन कर्म-मय था। उनका जीवन अनेक प्रकारके कर्मोंसे प्रारम्भ होता था और कर्मके द्वारा ही समाप्त होता था। उन अनेक प्रकारके कर्मोंमें देव, ऋषि, और पितृ-कर्म ही प्रधान थे। देव-यज्ञ-पितृ-यज्ञ और ऋषि-यज्ञ पहलेके प्रत्येक भारतवासीके प्रति दिनके मुख्य कर्तव्य थे। इन यज्ञोंमें दही और घीकी ही मुख्यता

है। देव-यज्ञोंके प्रत्येक कार्य दही-घीके द्वाराही सम्पादित होते हैं। यह बात आज भी स्पष्ट देखी जाती है।

"दधिना जुहुयादग्निं दधिना स्वस्ति वाचयेत्,
दधि दधश्च प्राप्नुयात् गवां व्यष्टिं समश्नुते।"

हवन, स्वस्ति-वाचन, दान आदि प्रत्येक पुण्य कार्यमें दही, घी और दूधकी कितनी प्रयोजनीयता है, यह बात एक भारत-वासी, भारतवासियोंको नहीं समझा सकता है।

माङ्गलिक, आभ्युदयिक वृद्धि-श्राद्ध आदि कृत्योंमें गौरी आदि षोडश मातृकाओंकी पूजा होती है। उसमें दहीका ही नैवेद्य और दध्यक्षत दिया जाता है। आठ प्रकारके विवाहोंमें 'प्राजापत्य' नामका भी एक विवाह है। यह विवाह, गो-दानके द्वारा ही सम्पन्न किया जाता है। जब हम लोग प्रार्थना करते हैं, उसमें अन्य कल्याणोंके साथ साथ गो-प्राप्तिकी भी कामना करते हैं। 'मधुवाता' नामकी एक प्रार्थनाकी जाती है। उसमें कहा जाता है "माध्वीर्गावो भवन्तु नः" हमारी गौएं मधुमती हों।

केवल धार्मिक कार्योंमें ही गौकी प्रधानता हो, ऐसी बात नहीं है, रामायण आदिके देखनेसे पता लगता है कि लोक-स्थितिके लिये भी गौकी आवश्यकता पहले मानी जाती थी। राजा लोग गो-रक्षाको अपना प्रधान कर्तव्य समझते थे और इसके लिये अपने राज्यमें सुप्रबन्ध करते थे। प्रजाके कुशल-समाचार पूछनेके समय वे गौओंका भी कुशल समाचार

पूछते थे। एक राजा जब दूसरे राजासे मिलता था, उस समय भी वह गो-रक्षा विषयक प्रश्न पूछा करता था। वाल्मीकीय रामायणके अयोध्या-काण्डमें इसके प्रमाण मिलते हैं। भगवान् रामचन्द्रजी वनवासी होकर जब चित्रकूट पर्वतपर आये, उस समय भरत उनसे मिलने वहां गये थे। मर्यादा-पुरुषोत्तम रामचन्द्रजीने अन्य समाचारोंके पूछनेके साथ ही साथ यह भी पूछा था :—

"कच्चित्ते दयिताः सर्वे कृषि-गोरक्ष-जीविनः।
वार्तायां साम्प्रतं तात लोकोऽयं सुखमेधते॥"

(रामायण, अयोध्याकाण्ड)

रामचन्द्रजीने भरतसे पूछा—भाई, कृषि और गो-पालन करनेवाले तुमपर प्रेम तो रखते हैं? क्योंकि संसारका सुख-स्वच्छन्द इसी खेतीपर ही निर्भर है।

महाभारतमें लिखा है कि नारदजी एक बार महाराज युधिष्ठिरसे मिलने गये। वहां नारदजीने युधिष्ठिरसे कई प्रश्न पूछे। उन प्रश्नोंमें कृषि सम्बन्धी प्रश्न भी उन्होंने पूछा था—

"कच्चित् अनुष्ठिता तात वार्ता ते साधुभिर्जनैः।
वार्तायां संश्रितं स्रोतो लोकोऽयं सुखमेधते॥"

नारदजीने पूछा बेटा! कृषि और गोपालन सच्चरित्र मनुष्योंके द्वारा सम्पन्न तो हो रहे हैं? क्योंकि यह संसार, कृषि और गोपालनके द्वारा ही सुख पूर्वक चल रहा है।

उस समय राजा महाराजा जब अपने राज्यमें घूमनेके लिये निकलते थे, जब वे अपनी प्रजाकी दुःख-कहानी सुननेके लिये यात्रा करते थे, जब वे अपने कर्मचारियोंकी स्वेच्छाचारितासे दुःखी अपनी प्रजाकी रक्षाके लिये निकलते थे, उस समय गांवकी प्रजा अपने राजाका स्वागत करती थी और दूध, घी, मक्खन आदिका उपहार अर्पित करती थी।

"हैयङ्गवीनमादाय घोष-वृद्धानुपस्थितान्,
नामधेयानि पृच्छन्तौ वन्यानां मार्ग-शाखिनाम्।"

रघुवंश, प्रथमसर्ग।

राजा दिलीप, महर्षि वशिष्ठजीके आश्रमको जा रहे हैं। इसकी खबर गांवमें रहनेवाली उनकी प्रजाओंको भी मिल गयी। लोग अपने अपने सिवानेपर मक्खन आदि लेकर उपस्थित हुए। महाराज और महारानीने उनका उपहार ग्रहण किया और मार्गके बनैले वृक्षोंका नाम उनसे पूछने लगे।

वृषकी उपमा चतुष्पाद धर्मके साथ की गयी है। श्राद्धमें वृषोत्सर्ग करनेका विधान है। चार बछियोंके साथ एक बच्छा छोड़ा जाता है, उसीको वृषोत्सर्ग कहते हैं। उस समय वृषकी प्रार्थना की जाती है :—

"वृषो हि भगवान् धर्मश्चतुष्पादः प्रकीर्तितः।
वृणोमि त्वामहं भक्त्या स मां रक्षतु सर्वदा॥"

'वृष, चतुष्पादधारी धर्मका स्वरूप है, उसका मैं वरण करता हूं, वह सदा मेरी रक्षा करे।' इस प्रकार वृषका वरण किया जाता है, तदनन्तर उसकी प्रदक्षिणा करके स्तुति की जाती है। स्तुतिके मन्त्र ये हैं :—

"धर्मोऽसि त्वं चतुष्पादश्चतस्रस्ते प्रियास्त्विमाः।
यत्किञ्चिद्दुष्कृतं कर्म लोभ-मोहात् कृतं भवेत् ॥
तस्मादुद्धृत्य देवेश पितुः स्वर्गं प्रयच्छ मे।
यावन्ति तव रोमाणि शरीरे सम्भवन्ति च ॥
तावद्वर्ष-सहस्राणि स्वर्गे वासोऽस्तु मे पितुः ॥"

इन मन्त्रोंसे वृषकी प्रार्थना की जाती है, कि 'लोभ-मोहसे जो कुछ पाप-कर्म हो गये हों, उनसे छुड़ाकर आप मेरे पिताको स्वर्ग प्रदान करें, तुम्हारे शरीरमें जितने रोम हैं और होंगे उतने हजार वर्ष मेरे पिताको स्वर्गमें स्थान मिले।' इसी प्रकार गौकी भी स्तुति की जाती है :—

"या लक्ष्मीः सर्व-भूतानां या च देवेष्ववस्थिता।
धेनुरूपेण सा देवी मम शान्तिं प्रयच्छतु ॥
विष्णोर्वक्षसि या लक्ष्मीर्या लक्ष्मीर्धनदस्य च,।
या लक्ष्मीर्लोक-पालानां सा धेनुर्वरदास्तु मे ॥
देहस्था या च रुद्राणी शंकरस्य च या प्रिया।
धेनुरूपेण सा देवी मम शांतिं प्रयच्छतु ॥
चतुर्मुखस्य या लक्ष्मीः स्वाहा या च विभावसोः।
चन्द्रार्क-ऋक्ष-शक्तिर्या सा धेनुर्वरदास्तु मे ॥

सर्व-देवमयीं दोग्ध्रीम् सर्व-वेदमयीं तथा।
सर्वलोक-निमित्ताय सर्व-लोकमयीं स्थिराम्॥
प्रयच्छामि महाभागा मक्षयाय शुभाय ताम्॥"

'जो सब विषयोंकी लक्ष्मी है, जो समस्त देवताओंमें वर्तमान हैं, वह देवी धेनुरूपसे मुझे शान्ति प्रदान करे। विष्णुके हृदयमें और कुवेरके हृदयमें गौ, लक्ष्मीरूपसे वर्तमान है और जो लोकपालोंकी लक्ष्मी है, वह मुझे वर प्रदान करे। जो देह-स्थित रुद्राणी है, जो शङ्करकी प्रिया है, वह देवी धेनुरूपसे हमको शान्ति दे। जो ब्रह्माकी लक्ष्मी और अग्निकी स्वाहा है, जो चन्द्र सूर्य तथा नक्षत्रोंकी शक्ति है, जो सर्व-देवमय और सर्व-वेदमय है, जो दूध देती है ; उसे समस्त लोकके कल्याणके लिये, समस्त लोककी मङ्गल कामनासे प्रेरित होकर मैं दान करता हूं।'

इन श्रुति, स्मृति, पुराण आदि भारतीय मान्य और प्राचीन ग्रन्थोंके वचनोंको देखनेसे स्पष्ट ही यह बात सबको समझमें आ जा सकती है, कि गौओंका स्थान प्राचीन भारत और प्राचीन भारतीयोंमें कितना महत्त्वपूर्ण था।

प्रत्येक हिन्दूका नित्य-कर्मोंमें गो-ग्रास देना भी एक आवश्यक कर्म है। कर्म-निष्ठ हिन्दू प्रतिदिन भोजनके पहले गो-ग्रास दिया करते हैं। गो-ग्रास देनेके मन्त्रपर ध्यान देनेसे गो-महिमा और भी स्पष्ट हो जाती है :—

"सौरभेय्यः सर्व-हिताः पवित्राः पुण्यराशयः ।
प्रतिगृह्णन्तु मे ग्रासं गावस्त्रैलोक्य-मातरः ॥
पञ्चभूते शिवे पुण्ये पवित्रे सूर्य-सम्भवे ।
प्रतीच्छेदं मया दत्तं सौरभेयि नमोऽस्तु ते ॥"

इन्हीं मन्त्रोंके द्वारा प्रतिदिन गो-ग्रास दिया जाता है। एक दिनका आहार गौको देनेसे बहुत अधिक फल होता है :—

घास-मुष्टिं पर-गवे सान्नं दद्यात्तु यः सदा ।
अकृत्वा स्वयमाहारं स्वर्ग-लोकं स गच्छति ॥

'जो मनुष्य, दूसरेकी गौको भोजनके पहले अन्न सहित घास खानेको देता है, वह स्वर्ग लोकमें जाता है।'

ब्रह्म-तेजकी महिमा सबको मालूम है। वह ब्रह्म-तेज भी गो-तेजके द्वारा ही बना हुआ है। विश्वामित्र और महर्षि वशिष्ठकी घटना इस बातमें प्रमाण है। महाराज विश्वामित्र अतिथि हुए, महर्षि वशिष्ठके आश्रमके। वशिष्ठजीने उनका आतिथ्य सत्कार राजाओंके समान किया। इससे विश्वामित्रको बड़ा आश्चर्य हुआ। कारण ढूंढने पर उन्हें मालूम हुआ कि इसी नन्दनी नामकी गौकी ही यह सब महिमा है। राजाने वशिष्ठजीसे गौ मांगी। उन्होंने दे दी। इससे नन्दनीको बड़ा कष्ट हुआ। वह रोती हुई महर्षिके पास पहुंची और उसने अपने पर अकृपाका कारण पूछा। महर्षिने उत्तर दिया, अकृपाका कोई कारण नहीं है, विश्वामित्र राजा है,

राजा लोग धनोन्मत्त होते हैं, वह अत्याचार न कर बैठे, इसीलिये मैंने तुम्हें दे दिया। मैंने दान नहीं किया, यदि तुम न चाहो तो नहीं जा सकती हो। इसके अनन्तर नन्दिनीके पराक्रमसे परास्त होकर राजा विश्वामित्रको यह कहना पड़ा कि–"धिग्बलं क्षत्रिय बलं ब्रह्मतेजोबलं बलम्" क्षत्रिय बलको धिक्कार है, ब्रह्म तेजका जो बल है वही बल हैं।

इस सृष्टिकी रक्षाके लिये, यथावत् इसके संचालनके लिये, यज्ञका होना आवश्यक है और उस यज्ञका होना हविके आधीन है। गौके सींग, पूंछ आदि प्रत्येक अङ्ग तथा प्रत्येक रोममें भिन्न भिन्न देवताओंका निवास रहता है, यह भारतीय हिन्दुओंका विश्वास है। ऐसा कोई पुण्यतीर्थ नहीं जो गौके शरीरमें वर्तमान न हो।

महाभारतके अनुशासन पर्वमें एक कथा लिखी है, जिससे मालूम पड़ता है कि प्राचीन भारतवासियोंका गौओंपर कितना प्रेम था। महाराजा नहुष एक वार महर्षि च्यवनके पास गये और उन्होंने महर्षिका मूल्य पूछा। राजाने क्रमशः हजार, लाख, करोड़ रुपये उनके मूल्यमें देने चाहे। परन्तु यह उनका उपयुक्त मूल्य नहीं हुआ, फिर राजा अपना आधा राज्य और अन्तमें अपना समस्त राज्य महर्षिके मूल्यमें देनेके लिये तयार हो गये। परन्तु महर्षिने कहा कि यह भी मेरा उपयुक्त मूल्य नहीं हुआ। अन्तमें महाराजने कहा कि आपका

मूल्य एक गौ है। यह सुनकर महर्षि बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा कि यही मेरा उपयुक्त मूल्य हुआ! यह घटना बतलाती है कि पहले गौका मूल्य कितना था? आज भारतवासी क्या इस प्रकारकी गौ-प्रीति प्रगट कर सकते हैं?

एक समय विष्णु-प्रिया लक्ष्मीने गौओंके शरीरमें रहनेकी अपनी अभिलाषा प्रगटकी। लक्ष्मीकी प्रार्थना गौओंने मान ली, और उन्हें अपने मूत्र तथा पुरीषमें रहनेकी आज्ञा दी। गौओंकी आज्ञा मानकर लक्ष्मी तबसे गो-मूत्र तथा गो-पुरीषमें रहने लगी। यह केवल कथा ही नहीं है, किन्तु सच्ची बात है। जिस भूमिमें गोमय और गोमूत्र पड़ता है वही भूमि लक्ष्मीकी खान हो जाती है। उस भूमिकी शोभा निराली हो जाती है। वहां हरियाली लहराने लगती है और वह भूमि फल पुष्पसे पूर्ण हो जाती है।

एक बार इन्द्रने ब्रह्मासे पूछा कि महाराज, गो-लोक सब लोकोंसे ऊपर क्यों हुआ? ब्रह्माने इसका उत्तर दिया कि हे इन्द्र! गौ, यज्ञका प्रधान अङ्ग है। शास्त्रोंने गौको यज्ञ स्वरूप बतलाया है। गौकी सहायताके विना यज्ञोंका होना असम्भव है। गौ, घी दूधके द्वारा संसारकी रक्षा करती हैं। गो-पुत्रोंके द्वारा खेती होती है, जिससे अन्न और कई प्रकारके बीज उत्पन्न होते हैं। उससे देवता पितर और ऋषियोंके लिये हव्य कव्य आदि प्रस्तुत होते हैं। हे देवराज इन्द्र, गौ और गौओंका दूध दही आदि

अत्यन्त पवित्र हैं, ये भूख प्यास आदिकी कुछ भी परवा न कर भार वहन करती हैं। इन्हींके द्वारा देवता और प्रजाकी स्थिति है। ये देवता, पितर और अतिथि-सत्कारके लिये प्रधान हैं। यही कारण है कि गो-लोक सब लोकोंके ऊपर है।

ब्रह्मवैवर्तपुराणमें लिखा है कि जगद्विजयी रावणके गर्वको चूर करनेवाला कार्तवीर्याज्र्जुन एकवार जमदग्नि ऋषिके पास गया और उसने उनसे एक गौ मांगी। महर्षिने अपने प्राण प्रसन्नता पूर्वक दे दिये, परन्तु अपनी प्रिय गौ नहीं दी।

पहले क्या राजकुमार और क्या ब्राह्मण-कुमार सभीको गुरु-गृहमें जाकर निवास करना पड़ता था और वहीं उनकी शिक्षा होती थी। परन्तु उस शिक्षाका प्रारम्भ गोपालनसे होता था। ब्रह्मचारी विद्यार्थी, गोपालनकी कठोर परीक्षामें जब उत्तीर्ण होता था, तब गुरु उसको शास्त्रीय शिक्षा देते थे। उपमन्युके गोपालनकी कठिन परीक्षा आज भी भारतवासी भूले नहीं हैं। आयोदधौम्य नामक एक कुलपति थे, जिनके एक शिष्यका नाम उपमन्यु था। गुरुने उपमन्युको पहले गोपालनका काम सौंपा। उपमन्यु भिक्षा द्वारा अपना निर्वाह करता था और गुरुजीकी गौओंको भी चराता था। गुरुजीको जब यह बात मालूम हुई, तब उन्होंने भिक्षा न मांगनेकी आज्ञा दी। शिष्यने भिक्षा मांगना छोड़ दिया। वह बछड़ोंके मुंहमें लगे फेनसे अपना निर्वाह करने लगा। गुरुजीने शिष्यको

वैसा करनेके लिये भी निषेध किया। शिष्यने गुरुकी आज्ञा मानली, परन्तु अब उसका निर्वाह हो तो कैसे हो? एक दिन भूखसे व्याकुल होकर उपमन्युने आकके पत्ते खा लिये, इससे उसकी आंखे जाती रहीं, वह अन्धा हो गया और एक कूएंमें गिर गया। गुरुको इसकी खबर मिली। गुरु वहां गये और उन्होंने शिष्यको कुएंसे निकाला। प्रसन्न होकर गुरुने शिष्यको अश्वनीकुमारोंकी स्तुति बतलायी। अश्वनीकुमारोंकी स्तुतिसे उपमन्युको आखें मिल गयीं। प्रसन्न होकर गुरुने वेद वेदाङ्ग और शास्त्रोंकी भी शिक्षा दी। अन्तमें उपमन्यु एक महर्षि हुए। इस प्रकारके उदाहरणोंसे यह बात स्पष्ट प्रकट होती है, कि प्राचीन समयमें ब्राह्मण लोग देव, पितृकृत्य और अतिथि-सत्कारके प्रधान साधन गौओंके लिये अपने प्राणोंको भी तुच्छ समझते थे।

राजा विराट अपने गो-प्रेमके लिये प्रसिद्ध हैं। उनकी गोशालामें लाखों गौएं सदा बँधी रहती थी। इन्हीं गौओंके कारण विराटपर दुर्योधनने कई बार चढ़ाई की, यह कथा प्रसिद्ध है। चाणक्यके अर्थ-शास्त्र आदि ग्रन्थोंके देखनेसे पता लगता है कि उस समय वर्षमें कुछ ऐसा समय नियत था कि जब राजा स्वयं गोशालामें उपस्थित होते थे और गौओंकी संख्या और उनकी उम्र आदिका निश्चय करते थे।

दक्षकी कन्या सुरभि एक पैरपर खड़ी रह कर तपस्या करने लगी। उस तपस्यासे ब्रह्मा प्रसन्न हुए, उन्होंने सुरभिसे वर मांगनेके लिये कहा। परन्तु सुरभिने कोई भी वर नहीं मांगा। उसकी इस निष्काम तपस्यासे ब्रह्मा बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने गो-लोकमें वास करनेकी आज्ञा देकर लोक-कल्याणके लिये सुरभिको नियुक्त किया।

गौ, निष्काम—धर्मका पालन करती है। मनुष्य जिस वस्तुको निकम्मी जान कर छोड़ देते हैं, गौ वही खाती है और मनुष्यके लिये अमृतके समान दूध देती है। गौओंकी उ-त्पत्तिके विषयमें महाभारतमें लिखा है कि सृष्टिकी अनन्त प्रजाएं अपने निर्वाहका उपाय पूछनेके लिये ब्रह्माकी शरण गयीं, उस समय अमृत-पान करके ब्रह्मा आनन्दमें मग्न बैठे थे। ब्रह्माके मुखसे सुगन्धका उद्गार निकला, जिससे सुरभिकी उत्पत्ति हुई। उसी सुरभिने प्रजाओंकी रक्षाके लिये कपिलाकी सृष्टिकी। कपिलाका वर्ण सुवर्णके समान था। उससे प्रजाका निर्वाह होने लगा।

एकबार कपिलाके एक बछेड़े के मुंहसे निकलकर फेन महादेवजी-के मस्तकपर गिरा। इससे महादेव बहुत क्रोधित हुए, उन्होंने क्रोध करके कपिलाकी ओर देखा, तभीसे अनेक वर्णकी गौएं हो गयीं।

यह देखकर ब्रह्माने महादेवजीसे कहा कि बछड़े के मुंहका फेन जूठा नहीं हैं। इनके घी और दूधके द्वारा संसारका

भरण पोषण होता है। इनके अमृत तुल्य दूधकी अभिलाषा सभी करेंगे। इतना कहकर महादेवको कतिपय गौ और बैल ब्रह्माने दान दिये, तभीसे महादेवजीका नाम वृषभ-वाहन वृषभ-ध्वज और पशुपति हुआ। यही कारण है कि कपिला गौ, सब गौओंमें श्रेष्ठ समझी जाती है।

महाभारतका अनुशासनपर्व, गो-महिमासे ही भरा हुआ है। महाभारतके इस पर्वमें बहुतसी ऐसी कथाएं हैं, जिनसे मालूम होता है कि पहलेके समयमें गौओंके प्रति भारतवासियोंके कैसे भाव थे?

मत्स्यपुराणमें लिखा है कि देवता और असुर मिलकर जब समुद्र मन्थन करने लगे उस समय समुद्रसे लक्ष्मी, कौस्तुभमणि, कल्पद्रुम, उच्चैःश्रवा, ऐरावत आदि उत्तम रत्न निकले, उसी समय इन्हीं रत्नोंके साथ सुरभि भी उत्पन्न हुई।

इस लोकमें अमृत नामका कोई भी पदार्थ है तो वह दूध ही है। धन्वन्तरी भी गौके साथ ही रहते हैं। अतएव जहां गौ है, वहां धन्वन्तरी भी विराजते हैं और वहां लक्ष्मीका आना भी स्वाभाविक है। गौकी सेवा सब रत्नोंकी प्राप्तिका मुख्य उपाय है। महाभारतके शान्ति-पर्वमें लिखा है कि—गोदुग्ध-ही अमृत है :—

"अमृतं वै गवां क्षीरमित्याहुस्त्रिदशाधिपाः।"

वाल्मीकीय रामायणके उत्तरकाण्डमें लिखा है कि क्षीर-समुद्र नामक समुद्र गो-दुग्धके द्वारा ही उत्पन्न हुआ है। चन्द्र-

भाकी उत्पत्ति भी इसीके द्वारा हुई है, इसीके फेनको पीकर महर्षिगण जीवन धारण करते हैं।

महाकवि कालिदासने अपने रघुवंश नामक महाकाव्यमें जिस वंशका वर्णन किया है, उसके आदि पुरुष महा-प्रतापी रघुका जन्म गौके प्रसादसे ही हुआ था। सर्व-श्रेष्ठ सूर्यवंशी राजाओंकी गौ भक्ति देखकर मुग्ध होना पड़ता है। जिस वीर-शिरोमणि महाराज दिलीपकी सहायतासे देवराज इन्द्रकी कई वार दानवोंसे रक्षा हुई है, उसी महाराज दिलीपकी गो-भक्ति देखकर आश्चर्य-चकित होना पड़ता है। दिलीप, नन्दिनीकी सेवा करनेके लिये उद्यत हुए हैं। महर्षि वशिष्ठकी धेनु, नन्दिनी जब चलती है, तब राजा भी चलते हैं, जब वह ठहर जाती है, तब वे भी ठहर जाते हैं। वह बैठती है, तब बैठते हैं, जब वह जल पीती है, तब वे भी जल पीते हैं। इस प्रकार सेवा करते करते उन्होंने स्वयं गो-वृत्ति धारण कर ली थी।

महाराज दिलीपकी रानी सुदक्षिणा भी पतिके साथ साथ व्रत-धारिणी मुनिपत्नियोंकी भांति रहती थीं। समुद्र-पर्यन्त पृथिवीके अधीश्वरकी महारानी फलमूल आहार करती थीं और प्रतिदिन सीमा-पर्यन्त गौके वन जानेके समय उसके साथ जाती थीं और सन्ध्याके समय सीमा-पर्यन्त जाकर उसे ले आती थीं। महाराज दिलीपने राज्य-शासनका भार मन्त्रियोंको सौंप दिया था और वे स्वयं गौका पालन करते थे, उनकी विदूषी

महारानी भी सब प्रकार पतिका साथ देती थीं। एक दिन एक सिंहने गौपर आक्रमण किया। राजाने उसको मारनेके लिये बहुतसे प्रयत्न किये। परन्तु वे जब अपने किसी भी प्रयत्नमें सफल नहीं हुए, तब उन्होंने गौके सामने अपना शरीर अर्पण कर दिया। महाराजने कहा :—

"स त्वं मदीयेन शरीर-वृत्तिं देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद।
दिनावसानोत्सुक-बाल-वत्सा विसृज्यतां धेनुरियम् महर्षेः॥"

तुम मेरे शरीरका आहार करके अपना निर्वाह करो, सन्ध्याके समय इसका छोटा बच्चा इसके लिये व्याकुल होगा, इसलिये इस महर्षिकी गौको छोड़ दो। यों, महाराज दिलीप अपना शरीर देकर भी गौकी रक्षा करनेके लिये उद्यत हो गये।

श्रीमद्भागवतकी कथा जिन लोगोंने पढ़ी है अथवा सुनी है, वे जानते हैं कि भागवतके दशम-स्कन्धमें गौ चरानेवाले एक बालकका चरित्र वर्णन किया गया है। उस वर्णनको देखकर कौन ऐसा निरस-हृदयी है जो चकित न हो जाय। वह बालक दूसरा कोई नहीं है, वह हैं—साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण। श्रीकृष्णजीके लिये-"वृन्दावनमें धेनु चरावे ओढ़े काली कमली" की बात प्रसिद्ध है। उनकी वंशी-ध्वनिके कानमें पहुँचते ही समस्त जगत् मोहित होकर उनका अनुगामी बन जाता था।

उन्हीं गौ चरानेवाले भगवान् श्रीकृष्णका चरित्र श्रीमद्भगवतके दशम-स्कन्धमें लिखा है। उसीका नाम है, 'ब्रजकी लीला'।

भगवान् श्रीकृष्णकी क्रीड़ा, स्नेह, प्रेम, सख्य, वियोग, मिलन आदिपर भारतके कवियोंने अपनी कविता-शक्ति चरितार्थ की है। महर्षि-कवि व्यासदेवसे लेकर भक्त-कवि सूरदास तक सभी महाकवि तथा कवियोंने उनके पुनीत चरित्रका वर्णनकर अपनी कविताको सफल किया है और अपनेको धन्य बनाया है।

भगवान् कृष्णकी गौ चरानेकी कहानी भारतवासियोंके हृदयमें अमृतका प्रवाह बहा देती है। आज वह समय नहीं है, आजके कलियुगी हमलोग भारतवासी, न तो कृष्णका साक्षात् दर्शन ही कर सकते हैं और न उन गौओंका ही दर्शन कर सकते हैं। हृदयको उन्मत्त करनेवाली वह वंशी-ध्वनि आज सुनायी नहीं पड़ती। परन्तु उसकी कथा आज भी भारतवासी बड़े प्रेमसे सुनते हैं।

हिन्दुओंकी श्रद्धा-भक्ति तो गौओंपर है ही, हिन्दू तो गोपालन करना अपना प्रधान कर्तव्य समझते ही हैं, परन्तु मुसलमान विद्वान् लिखित आइन-ए-अकबरीके देखनेसे जान पड़ता है, कि सम्राट् अकबर भी गौओंकी उपयोगिता समझ गये थे, अतएव उन्होंने अपने राज्य भरमें गो-वध न होनेकी आज्ञा प्रचारित कर दी थी। उनके राज्य भरमें कहीं भी गो-वध नहीं होता था, उस समय भी गौओंका बहुत सम्मान होता था।

अभी थोड़े दिनोंकी बात है, उस समय एक घटना हुई थी, जिससे विदित होता है कि गौओंपर भारतवासियोंकी

कितनी श्रद्धा थी। बम्बई हाईकोर्टके जज महामति गोविन्द रानड़ेके प्रपितामहके कई पुत्र और कन्याएं उत्पन्न हुईं, परन्तु उनमें कोई भी जीवित न रह सका, सभी थोड़े थोड़े दिन जीवित रहकर मर गये। इससे वे स्त्री पुरुष बहुत दुःखी रहते थे। एक दिन कोई महापुरुष उनके घरके अतिथि हुए। उन्होंने कृपाकर रानड़े महोदयके प्रपितामहको बतलाया कि आप एक गौ रखें, और उसको गेहूं खिलाया करें। उसके गोबरमें जो गेहूं निकलें उसीका आटा पीसकर आप खायं और स्त्री पुरुष दोनों ब्रह्मचर्यपूर्वक रहें, परमेश्वर कल्याण करेगा। उन्होंने ऐसा ही किया। एक वर्षतक नियमपूर्वक उन लोगोंने व्रत किया। व्रतका उद्यापन होनेके पश्चात् उनकी स्त्री गर्भवती हुई और उसी गर्भसे महामति रानड़ेके पितामहका जन्म हुआ। वे दीर्घजीवी हुए और उनसे उनका कुल उज्ज्वल हुआ।

हिन्दू शास्त्रोंको देखिये, उनमें गो-वध करनेवालेको कितना कठोर प्रायश्चित्त बतलाया गया है। यह भी इस बातका प्रमाण है, कि पहले यहां गौओंका कितना सम्मान था। आज भी जब किसीके घर गौ आती है, तब उस गौकी फूल सिन्दूर अक्षत आदिसे पूजा होती है। उसके चरण धोये जाते हैं, उसे मिठाई खिलायी जाती है, उसदिन वह परिवार अपनेको धन्य मानता है।

संसारके प्राचीन इतिहासमें भी गो-जातिका वर्णन मिलता है। वहां गौका वर्णन गृहपालित पशुओंके रूपमें किया गया है। हिब्रू-जातिके आदि इतिहासमें भी गौका उल्लेख है। ईसाके जन्मके तीन हजार पहलेके इजिप्ट (मिश्र) के पिरामिडमें गौओंका चित्र देखा जाता है। स्वीट्जरलेण्ड देशमें भू-गर्भसे गृहपालित गौओंके कङ्काल मिले हैं, जिनसे मालूम होता है, कि उन देशोंमें भी बहुत पहलेसे गोपालनकी प्रथा प्रचलित थी। पहले गौओंकी अधिकता ही धनवान् होनेका चिन्ह था। ग्रीस देशमें जब पहले पहल सिक्केका चलन हुआ, उस समयके सिक्केपर बैलका ही चिन्ह अङ्कित किया गया था। वह चित्र धनकी सूचना देता था। थोड़े ही दिनोंमें गौओंका बंश जिस प्रकार बढ़ता है उससे जान पड़ता है, कि गौके समान धन दूसरा कोई नहीं हैं। इसीसे हमारे यहां कहा गया है, कि,—"धनञ्च गोधनं धान्यं स्वर्णादयो वृथैवहि।"

वेद, पुराण, महाभारत, रामायण आदि ग्रन्थोंके वचन यहां उद्धृत किये गये हैं, छोटी छोटी गो-महिमा बतलानेवाली कथाएं लिखी गयी हैं। जिनसे इस बातके समझनेमें, सहायता मिलेगी कि पहले, भारतके अच्छे दिनोंके समयमें, गौओंके प्रति भारतवासियोंके क्या भाव थे और इस कारण इनकी क्या दशा थी? पहले भारतवासियोंका कोई भी काम गौके बिना नही चल सकता था, आज भी दशा वही है,

परन्तु पहलेके लोग आलसी नहीं थे, विलासी नहीं थे, वे अपनी कुदशाको सुदशा बनानेका प्रयत्न करते थे। परन्तु आज हमारी दशा उसके ठीक विपरीत हैं। आज हम अपनी सुदशाको कुदशा बनानेके लिये आगे बढ़े हुए हैं। गोपालन तो दूर रहा, गौओंका अन्धाधुन्ध नाश हो रहा है और हम बाबू बने गाड़ी पर घूम रहे हैं। क्या इन बातोंको जान सुन कर अब हम उदासीन ही बने रहेंगे? क्या अब भी गौओंके प्रति अपना कर्तव्य पालन करनेके लिये हम उद्यत न होंगे?



दूसरा अध्याय ।

गोवंशकी उपयोगिता ।

संसारकी समस्त पुरानी जातियोंके हृदयमें किसी एक पशुकी प्रतिष्ठा देखी जाती है । भारत अपनी प्राचीनताके लिये प्रसिद्ध है । भारतवासियोंकी स्वाभाविक श्रद्धा बहुत दिनोंसे गौओंपर चली आती है । भारतवासी अपनेको "गोभक्त" के नामसे पुकारा जाना गौरवकी बात समझते हैं । ये गौओंको इस लोक तथा परलोकमें कल्याणकारी समझते हैं । भारतवासियोंका विश्वास है कि गौओंकी सेवासे अप्राप्य मनोरथोंकी भी सिद्धि हो जाती है । इसी विश्वासके अनुसार ये फल भी पाया करते हैं । सूर्य-वंश-प्रदीप राजा दिलीपने गौओंकी सेवासे ही रघुके समान पुत्र पाया था । वेद तथा पुराण गौओंकी महीमा गा कर अपनेको धन्य मानते हैं ।

भारतवासियोंकी गौओंपर जो श्रद्धा है, जो अनुराग है, वह निष्कारण नहीं है, उसका कारण है और वह कारण बड़ाही जबरदस्त है ।

यदि यह कहा जाय कि प्रत्येक भारतवासीका जीवन गौओंकी कृपापर ही अवलम्बित है, तो इसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं हैं। जिस समय बालक उत्पन्न होता है, जिस समय जीव एक मानवका रूप धरकर इस भीषण-संसारमें आता है, माताके गर्भसे निकलते ही जब वह सुख, दुःख, भूख, प्यास आदिकी ताड़नाओंसे सताया जाता है, जब वह भूमिष्ठ होकर भूखके मारे चिल्लाता और रोता है, जिस समय स्नेहमयी जननी भी भूख मिटानेमें असमर्थ रहती हैं, उस समय उसके प्राणोंकी रक्षा केवल गो-माताके दूधसे ही होती है। बालककी भूख गौके दूधसे ही मिटायी जाती है। इसी प्रकार क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या युवा सभी गो-दुग्धके द्वारा शक्ति-लाभ करते हैं, बल पाते हैं और स्वस्थ रहते हैं।

जो बलवान् हैं, जिनको हम लोग नामी पहलवान समझते हैं, जो अपने शरीर-बलका कौशल दिखाकर जगत्को चकित कर रहे हैं, आप जानते हैं उनके ऐसा करनेका कारण क्या है? क्या आप जानते हैं उनको बल कहांसे मिला है? नहीं जानते हैं तो सुनिये। उन्होंने गो-माताके दूधका सेवन किया है। उसी गो-दूधके सेवनसे उनको ऐसा बल मिला है। यदि आपको इस बातमें सन्देह हो तो प्रो० राममूर्ति, प्रो० दोरा स्वामी आदि भारतके गौरव-स्वरूप बलवानोंसे पूछ लीजिये; आपका सन्देह जाता रहेगा।

इसके अतिरिक्त आप जो अच्छी अच्छी चीजें खाते हैं। पेड़ा, बर्फी, मलाई, रबड़ी दूध-पाक, खोराके लड्डू आदि जो आपको बड़े प्रिय हैं, जिनके नाम सुनते ही आपका मन हाथसे जाता रहता है, वे सब पदार्थ भी गो-दुग्धके द्वारा ही बनाये जाते हैं।

मनुष्य बीमार पड़ा है, मारे दुःखके व्याकुल हो रहा है। वैद्य बुलाया गया है, उसने दवा दी और दवाके साथ दूध पीना भी बतलाया। रोगी उसके अनुसार चलने लगा, उसके सब रोग दूर हो गये। वह भला चङ्गा होकर अपना काम करनेलगा।

आपका ऐसा कौनसा उत्सव है, ऐसा कौनसा त्योहार है, ऐसा कौनसा याग-यज्ञ, देवता, पितर तथा ऋषियोंके लिये कर्म हैं, जिसमें गौके दूध, दही और घृतकी आवश्यकता न पड़े? विना हविष्यकी आहुतिके दिये देवताओंको प्रसन्न करनेकी शक्ति किसमें है? क्या आप अपने लड़के लड़कियों आदिका शानदार विवाह बिना दूध दही आदिके व्यवहार किये कर सकते हैं? आपका ऐसा कौनसा काम है जो दूध, दही, घी, मट्ठा आदिके बिना हो सके, और तो और आपके नित्य भोजन अतिथि-सत्कार एवं पूजन आदि भी तो बिना दूध दही आदिके नहीं निभ सकते हैं।

अनेक प्रकारकी परीक्षाओं द्वारा यह बात आज सिद्ध हो गयी है कि यदि किसी एक पदार्थके आहारपर मनुष्य जीवन

धारण कर सकता है, तो वह है गो-दुग्ध। मनुष्यके जीवन धारण करनेके लिये, जिन-जिन पदार्थोंको आवश्यकता होती है, वे सबके सब गो-दुग्धमें पाये जाते हैं। गोघृतके विषयमें वेदोंमें लिखा है "आयुर्वै घृतम्" अर्थात् घृत आयुको बढ़ानेवाला है। आप लोगोंने सुना होगा, इसी भारतमें, पहले चार्वाक नामका एक सम्प्रदाय प्रचलित हो गया है। इन सम्प्रदायियोंके लिये ही हमारे ग्रन्थोंमें नास्तिक शब्दका प्रयोग किया है। चार्वाक—ईश्वर, वेद, धर्म, कर्म, परलोक आदि किसीको नहीं मानते, किन्तु उनको भी घृतकी महिमा गानी पड़ी है। श्रुतिको न माननेवाले चार्वाकको भी श्रुति-प्रशंसित घृतकी शरण लेनी पड़ी है। वे अपने ग्रन्थमें लिखते हैं, "जब तक जीवे सुखसे जीवे, ऋण लेकर भी घी पीवे, क्योंकि जला हुआ यह शरीर फिर नहीं लौटता। * शरीर नष्ट हो जायगा तो फिर इसका मिलना नास्तिकोंके लिये कठिन है, अतएव इसी शरीरको बहुत दिन तक रखनेका प्रयत्न करना चाहिये। वह प्रयत्न है घी पीना। † किसी पण्डितने लिखा है कि "विना गोरसं को रसो भोजनस्य"— अर्थात् गोरसके बिना भोजनका रस ही क्या है? तक्रके गुण लिखते हुए एक विद्वान्ने लिखा है, कि "सर्व-

* यावत् जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः?

† आयुर्मूलं हविः।

रोग हरं तक्रम्”—तक्र सब रोगोंको दूर करता है।
“न तक्र-सेवी व्यथते कदाचिन्न तक्र-दग्धा प्रभवन्ति रोगा
यथा सुराणाममृतं सुखाय तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः।”

‘जिस प्रकार अमृत पीना देवताओंके लिये सुख-दायक है, वैसे ही तक्र पीना मनुष्योंके लिये आनन्द-दायक है।’ इसी सम्बन्धमें एक और भी बात याद आती है। एक मर्त्य—लोकवासी कवि, इन्द्रको सम्बोधित कर कहता है—“गवां रसो बालक-चेष्टितञ्च एतान्यहो शक्र न सन्ति नाके।” अर्थात् इन्द्र, गोरस और बालकोंका खेल आदि स्वर्गमें भी तो नहीं हैं। कविका अभिप्राय यह है कि इन्द्रको अभिमान करनेका कोई कारण नहीं है। गोरस, बालक-चेष्टित आदिके समान अनुपम पदार्थ उनको नहीं मिलते, और हम लोग इसके अधिकारी हैं। इसी प्रकार गोमूत्र गोमयकी उपयोगिता बतलानेवाले इतने वाक्य हैं, जिनका यहां उद्धृत करना मेरे लिये तो असम्भव है ही, और उन उद्धृत किये वचनोंका पढ़ना आपके लिये भी असम्भव नहीं, तो विशेष कठिन अवश्य है।

वैद्यक शास्त्रकी दृष्टिसे यदि इस विषयपर विचार किया जाय, गो-सम्बन्धी पदार्थोंके विषयमें वैद्यक-शास्त्रकी उक्तियां यदि उद्धृत की जायं, तो एक महाभारत तैयार हो सकता है।

दूध, दही, घृत, गोमूत्र, गोमय आदि आदि गो-सम्बन्ध पदार्थोंके द्वारा बड़े बड़े रोग आराम किये जाते हैं। बहुतसे

रोग ऐसे हैं, जिनमें केवल गो-सम्बन्धी पदार्थ ही व्यवहारमें लाये जाते हैं और उनसे रोगीका विशेष उपकार होता है।

न केवल भारतके ही वैद्य इन पदार्थोंके गुण-गान करते हैं ; प्रत्युत योरपके डाक्टर भी इन बातोंको मानते हैं। दूध, दही आदिमें रोगोंको दूर करनेकी शक्ति है, इस बातको योरपके डाक्टर मानते हैं और वे अपने इस सिद्धान्तके अनुसार अपने रोगियोंको रोग-भेदसे दूध, दही आदिका प्रयोग भी बतलाया करते हैं। वे कहते हैं कि, दही और मट्ठेके परमाणुओंमें रोगोंको दूर करने और दीर्घ जीवन देनेकी शक्ति वर्तमान है।

जिसका हृदय कलुषित है, जिसके हृदयमें सदा बुरे बुरे भाव पैदा हुआ करते हैं, दूसरोंको धोखा देना ही जिसका काम है, जो दुष्कर्मको सुकर्म समझता है, देखा गया है कि वह भी घटनावश केवल दूधके आहार करनेसे शुद्ध सदाचारी हो गया है। दूध है महौषध, शरीर और हृदयके रोगोंका। यदि संसारमें कोई पदार्थ है, जिसके आहारसे सात्विक-भावोंकी वृद्धि हो, तो वह केवल गो-दुग्ध ही है। अतएव भारतके प्राचीन महर्षि दुग्धाहार किया करते थे यही कारण है कि आज भी व्रतोंमें दुग्धाहारका विशेष स्थान है। आज भी ब्रह्मचर्य पालन करनेवाले केवल दुग्धाहारसे ही निर्वाह करते हैं। क्योंकि इसके आहारसे सात्विक भाव बढ़ते हैं। सात्विक भावोंका बढ़ना

संसार और परलोक-सुखके लिये कितना आवश्यक है, यह बात विचारवानोंसे छिपी नहीं है।

भारतवासियोंका निर्वाह कृषिके द्वारा होता है। यह देश ही कृषि-प्रधान देश है। इस देशमें फी सैकड़े नब्बेसे भी अधिक मनुष्य कृषि द्वारा ही अपना निर्वाह करते हैं। आपको तो मालूम ही है कि, हमारी खेती-बारीका प्रधान अवलम्ब गो-वंश है। खेतीके छोटे बड़े सभी काम केवल गो-वंशके ही अधीन हैं। हल खींचना, खेत सींचना, गाड़ीमें जुतकर अन्नका लेआना तथा लेजाना और इसी प्रकारके खेती सम्बन्धी और भी समस्त काम बैल ही करते हैं।

भारतके प्राचीन ग्रन्थोंके अध्ययनसे मालूम होता है कि पहले समयमें सिक्केके स्थानपर गौओंका ही आदान-प्रदान होता था। यज्ञोंमें ऋत्विज्, होता, अध्वर्यु आदिको दक्षिणामें गौएं ही दी जाती थीं। शहरोंकी बात जाने दीजिये, गांवोंमें गाय और बैलोंकी अधिकता तथा न्यूनतापर ही किसी मनुष्यके धनी, अल्पधनी अथवा निर्धन होनेका अनुमान किया जाता है। विवाह-सम्बन्ध स्थिर करनेके समय यह प्रश्न किया जाता है कि वरपक्षके कितने हल चलते हैं या कितनी जूंट चलती हैं। अमेरिका आदि धनी देशोंके समान इस निर्धन भारतवर्षमें खेतीके लिये कलोंका प्रचार नहीं हो सकता। क्योंकि यहांके दुःखी किसान कल खरीदनेके लिये उतने रुपये कहां पावेंगे?

यहांके निरक्षर किसान कल पुर्जोंसे कैसे काम लेंगे? यहांके किसान मोटरोंपर चलनेवाले सानफ्रांसिस्को या कलिफोर्नियाके किसान नहीं हैं। पहाड़ोंपर लकड़ीकी नहरें बनाकर बरसातका मुंह न ताकना इनके लिये असम्भव है। इनमें वैसी शक्ति नहीं है। भारतका किसान टूटी फूटी झोपड़ीमें रहता है। भर दिन शिरतोड़ मेहनत करनेपर भी उसे रातको भरपेट भोजन नसीब नहीं होता। वह अपने भूखे बाल-बच्चोंको लेकर सो जाता है। सबका अन्न-दाता भारतका किसान हिकारतकी नजरसे देखा जाता है। ऐसी स्थितिमें अमेरिकाके देशोंके समान भारतमें भी कलों द्वारा खेती होनेका स्वप्न देखना मालूम नहीं कहां तक सारवान् है। इस स्थितिको बिना आद्यन्त बदले यदि कोई चाहे कि कलों द्वारा भारतवासी खेती करें तो मेरी समझसे उनका यह चाहना बहुत अच्छा नहीं है। इस दशामें भारतवासियोंके लिये गौ और बैलोंकी अधिकता कितनी अपेक्षित है, इसके बतलानेके लिये किसी शास्त्रीय युक्तियोंका सहारा लेना न पड़ेगा। यह बात साफ है, आंख पसारते ही सभी आंखवाले आदमी देख सकते हैं।

शहरोंमें रहनेवाले और घोड़ा-गाड़ी, मोटर तथा ट्रामपर सैर करनेवाले शायद इस बातको नहीं जानते होंगे। परन्तु जिन्हें बीहड़ मार्गोंमें जानेका अवसर मिला है, वे जानते हैं कि बैल-गाड़ीमें जुतकर कितना भार ढोते हैं और कितना पराक्रम

दिखाते हैं। राजपूताना-शेखावाटी मारवाड़ आदिके रेतीले मैदानोंको पारकर अपने घरतक पहुंचना उन मोटे सेठ और बाबुओंके लिये असम्भ वही होता यदि बहली रथ न होते। बिहार, पुरनिया, बङ्गाल आदिकी कच्ची सड़कोंपर बिना बैलगाड़ीके नाज़ुक बाबू बैठे बैठे ताका ही करते, और नौकरोंको झिड़का करते। क्योंकि उस कच्ची सड़कपर घोड़ागाड़ी तो चल ही नहीं सकती। परन्तु बैल बहुत अधिक बोझा लेकर उन कच्ची सड़कों-पर अनायास चले जाते हैं। राजपूतानेके रेतीले मैदानमें दौड़कर चलनेवाले रथों और बहलोंको देखनेका जिन्हें सौभाग्य मिला है, वे जानते हैं कि वहां इन गाड़ियोंका कितना आदर है। रथ और बहल वहां प्रतिष्ठित सवारी समझी जाती है। दिल्लीकी बैलगा-ड़ियां देखतेही बनती हैं। सुन्दरता एवं उपयोगिता आदिके ध्यानसे बैल कितने महत्वके पशु हैं, यह बात आज नये सिरेसे बतलानेकी नहीं हैं। जेठ, अषाढ़की गरमी और सावन, भादोंके कीचड़आदि की भी परवा न कर बैल बड़ीही उपेक्षासे अपने काममें डटे रहते हैं। क्या है किसी दूसरे पशुमें इस प्रकारकी शक्ति? गौओंकी उपयोगिताके विषयमें और अधिक क्या कहा जाय? गोमूत्र और गोबरकी ही उपयोगिताका ध्यानकर चकित होना पड़ता है। धर्म-शास्त्र आप उठा लें, वैद्यक-शास्त्र आप उठावें, अथवा इन शास्त्रोंकी कोई एक पुस्तक ही उठा लीजिये, उसमें गो-मूत्रकी महिमा लिखी मिलेगी, उन पुस्तकोंमें गोमूत्रकी उपयो-

गिता देखकर आपको चकित, प्रसन्न और मुग्ध होना पड़ेगा। गोमयके विषयमें तो कहना ही क्या है? दुर्गन्ध तथा बुरे परमाणुओंको नाश करनेके लिये वह एक ही है। गोमयसे दुर्गन्ध नष्ट होता है और फेनाइल आदि दुर्गन्ध नाशक व्यय-साध्य एवं दुष्प्राप्य औषधोंका विष भी इसमें नहीं होता। इसके अतिरिक्त भारतवासियोंको इसके व्यवहारमें अधिक सुविधा है, इसके व्यवहारमें खर्च कुछ भी नहीं होता।

गोमयकी खाद कैसी अच्छी होती है, इसके व्यवहारसे भूमिमें उपजाऊ शक्ति कितनी बढ़ जाती है, यह कृषि-प्रधान भारतके लिये नयी बात नहीं है। गोमय और गोमूत्रका खादके लिये प्रयोग करना भारतवासियोंको खूब मालूम है, ये उसका व्यवहार करते हैं और लाभ भी उठाते हैं। गोमयको सुखाकर वह जलानेके काममें भी लाया जाता है।

किसीका उपकार लिखकर उतना नहीं बताया जा सकता जितना कि हृदयमें समझनेसे ज्ञात होता है। उपकार समझनेकी चीज है, कहने और लिखनेकी नहीं है। भारतवासियोंके प्रति गोवंशका कितना उपकार है यह बात कोई भी लिखकर बता नहीं सकता। भारतवासियोंका जो कुछ है वह गोवंशका ही प्रसाद है, यही कारण है कि भारतीय नरेश गौओंका पालन करना अपना प्रधान धर्म समझते थे। भारतके प्राचीन राजाओंको बड़े समारोहसे "गोपाल" की पदवियां

दी जाती थीं। स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने इस पदवीको बड़े आग्रह और उत्साहसे धारण किया था। भगवान् श्रीकृष्ण-ने इस पदवीको धारण करके संसारमें गोवंशकी उपयोगिता प्रकटकर दी है, गौओंके प्रति भारतवासियोंका कर्तव्य बतला दिया है।



तीसरा अध्याय ।

गो-जातिके विषयमें ज्ञातव्य बातें और भारतीय तथा विलायती गौओंकी आलोचना ।

गौकी उत्पत्तिके विषयमें बृहद्धर्म्म-पुराणकार कहते हैं :—

"पुरा स्वयम्भूर्भगवान् सृजन् लोकान्-स्वशक्तितः ।
प्रीत्यर्थं सर्वभूतानां गाव असृजद्द्विजोत्तम ॥

अर्थात् हे द्विजोत्तम, पूर्वकालमें भगवान् स्वयम्भू ब्रह्माने अपनी शक्तिके प्रभावसे लोक-सृष्टिकर समस्त भूतोंकी प्रीतिके लिये गौकी सृष्टिकी ।

ऋग्वेदका वचन है :—

"गावो ह जज्ञिरे तस्मात् तस्मज् जाताः अज वयः ।"

इसका तात्पर्य यह है कि ब्रह्म-यज्ञसे गौका आविर्भाव हुआ और उससे बकरी और भेड़ जाति उत्पन्न हुई । अस्तु,

'गो' संस्कृत भाषाका शब्द है । इसका अर्थ है चलनेवाला अथवा चलनेका साधन । 'गम्' धातुसे करण अथवा कर्ता अर्थमें 'डो' प्रत्यय होता है । संस्कृतके ग्रन्थोंमें 'गो' शब्दके

अर्थके विषयमें लिखा है कि बैल आदि रथ खींचते हैं और गो, दान करनेपर स्वर्गमें ले जाती है इस कारण उसका नाम 'गो' है। 'गो' चौपाया पशु है। इसके खुर बीचसे फटे होते हैं और ऊपर थुई—जिसे संस्कृतमें ककुद कहते हैं और अङ्गरेजीमें हम्प Hump कहते हैं,—होती है। गौके सिरपर दो सींग होते हैं और पीछे एक लम्बी पूंछ। इनका समस्त शरीर रोमोंके द्वारा ढका रहता है और ये सफेद काली पीली लाल आदि विविध रङ्गोंकी होती हैं। इनकी पूंछके बाल कुछ लम्बे और मोटे होते हैं। इनके मुंहमें नीचे ऊपर मिला कर ३२ दांत होते हैं। नीचे दोनों ओर छै छै करके चबानेके बारह दांत और अठारह छेदन करनेके दांत होते हैं। छेदनके दांत ऊपर नहीं होते, नीचेके छेदन दन्तोंकी सहायतासे खाद्य-द्रव्य काटकर और चबानेवाले दांतोंसे चबाकर गौएं अपना आहार करती हैं। एक बार खाये हुए आहारको वे फिर निकालकर और चबाकर खाती हैं।

पश्चिमी वैज्ञानिकोंने निर्णय किया है कि भारतीय गौएं गाभिन होनेके बाद २७० से २८० दिनकी अवधिमें ब्याती हैं। प्रो० हजशन (Hodgson) के मतानुसार हमारे देशकी गौओंके हर एक तर्फ १४ पञ्जरास्थि हैं। उनके माथेमें २८ और गर्दनमें ७ अस्थियां होती हैं। गौओंके परिपाक-यन्त्रमें चार थैलियां हैं। प्रत्येक थैली

स्वतंत्र भावसे अपनी अपनी क्रिया करती रहती हैं। गौओंकी घ्राणेन्द्रिय और श्रवणेन्द्रिय अति तीक्ष्ण होती है, परन्तु आंखें उक्त दोनों इन्द्रियोंसे कुछ हीन शक्ति रखनेवाली होती हैं। गौओंके शरीरांशमें दांत कम महत्वकी चीज नहीं हैं। दांतों और सींगोंके द्वारा गौओंकी उम्र और प्रसव कालका निर्णय किया जाता है। बिलायती गौओंके मातृगर्भमें ही दांत निकल आते हैं, किन्तु भारतीय गो-जातिके कुछ समय बाद दूधके दांत गिरकर स्थायी दांत जमते हैं। जन्मसे छे महीनेके भीतर दूधके दांत निकलने लगते हैं और सालभर होते सब निकल आते हैं। डेढ़ वर्षके बाद दूधके दांत पड़कर उनके स्थानमें स्थायी दांत (Permanent incisors) निकलते हैं। दूसरे वर्षमें बीचके दांत उगते हैं और साढ़े चार वर्षमें आगेके दांत निकलकर मुंह पूरा आकार धारणकर लेता है।

भारतीय गो-जातिका उरु-देश बिलायती जातिकी गौओंकी भांति मांसल नहीं होता और इसीलिये उनके पैर लम्बे दिखायी देते हैं। पञ्जरास्थि १४ होनेकी बात पहले कही जा चुकी है। बिलायती गौओंके १० ही होते हैं। हमारे यहांकी गौओंका वक्षःस्थल बड़ा विशाल-चौड़ा एवं पञ्जरके अस्थि मोटे, गोल और बल-व्यञ्जक होते हैं। भारतीय गौएं वंश और परिवार-भेदसे भिन्न भिन्न आकारकी होती हैं।

भारतीय गो-जातिका पश्चिमी वैज्ञानिकोंके मतसे 'जेबू' Zebu नाम है। गौओंकी कन्धियोंपर जो मांस-पिण्ड (थुई) होता है वही भारतीय गो-वंशकी पहचान है। बिलायती गो-वंश थुईसे रहित होता है।

गौओंकी अपेक्षा सांड़ों और बैलोंके थुई hnmp बड़ी होती है। थुई बड़ी होनेसे बहुत सुन्दर दिखायी देती है और उससे पशुकी बल-व्यञ्जक-क्षमता समझी जाती है। हमारी गौओंकी ललाट-पट्टी कछुवेकी पीठकी तरह होती है। बिलायती गौओंकी भांति वह बालोंसे ढकी हुई shaggy नहीं होती। सींग भी प्रायः आगेकी ओर झुके हुए रहते हैं। मैशोर और अन्यान्य दो एक बड़ी जातिकी गौओंके सींग ऊर्द्ध्वगामी तथा गोल-स्तम्भाकार cylindrical होते हैं। कान भी भारतीय गौओंके कुछ तीक्ष्णाग्र-विशिष्ट होते हैं। पूंछपर बालोंका गुच्छ बड़ा सुन्दर दिखायी देता है। पश्चिम भारतीय द्वीपों, बृटिश गायना, अस्ट्रेलिया, उत्तर अमेरिका, केपकलोनो प्रभृति स्थानोंमें भारतीय गोवंश पाया जाता है। संकर गौएं उत्पन्न करनेकी इच्छासे ही उक्त देशवाले हमारे यहांकी गौएं ले गये थे।

प्रसिद्ध तत्व-दर्शी डारविनका कथन है कि, ईसासे २१५० वर्ष पूर्व गृह-पालित भारतीय गोवंश जङ्गली bos जातिसे उत्पन्न हुआ है। मध्य-भारत, तिब्बत, मध्य-एशिया और

भारतके कितने ही पहाड़ी स्थानोंमें जङ्गली गो-जाति प्राकृतिक अवस्थामें विचरती हुई दिखायी दी थी। अन्यून २२०० वर्ष पूर्व उस गो-जातिको आदिम मनुष्य जातिने पालितावस्थामें लाकर अपने कार्यके साधनोपयोगी बनाया। जो हो, गो-जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें प्राणीतत्वविद् लोगोंमें खूब मतभेद है। मि० ब्लाइड कहते हैं कि प्राचीन समयमें एफ्रिका प्रदेशसे भारतमें गो-वंश लाया गया। एफ्रिका प्रदेश प्राचीन कुरु राज्यका अंश विशेष था किन्तु यह मत समीचीन प्रतीत नहीं होता। शायद मिश्र देशके पिरामिडमें गौकी मूर्ति देख-कर ही मि० ब्लाइड ऐसा कहते हैं। किन्तु हिमालय प्रान्तके भूगर्भसे जो गो-कङ्काल मिला है, उसको देखनेसे यह समझमें आजाता है कि, पिरामिडके निर्माणसे बहुत शताब्दियों पूर्व भारतवर्षमें ककुद (थुई) वाली गो-जाति विद्यमान थी।

जावा, बाली-द्वीप आदि देशोंमें बेण्टेङ्ग (Banteng) नामक एक पशु होता है, उसकी गौओंसे अधिक समानता होती है। उसकी पीठ बिलायती गौओंके समान होती है। कन्धेसे लेकर पूंछ-तक एक लम्बी सीधी रेखा होती है। ब्रह्म देशमें भी इस जातिके पशु होते हैं, वे Tsine कहे जाते हैं।

भारतवर्षमें नील गाय नामका एक पशु होता है। उसका आकार गौओंके समान होता है, परन्तु वह गौ नहीं है किन्तु हरिण जातिका पशु है। नील गाय (मादा) के सींग नहीं होते

हैं। हिन्दू लोग इसका सम्मान करते हैं, उसका कारण केवल नामोंकी समानता है।

भारतवर्षसे लेकर मरुक्कोतक एक पशु होता है, उसका नाम है—Bibos Gourus। यह बनैला पशु है और गौके समान होता है। इसकी ऊंचाई ८ फीट तक होती है। आसामकी ओर "गयाल" नामक एक पशु होता है कई लोग कहते हैं कि 'गौर' उसीका पूर्व पुरुष है।

गौ और भैंसमें बहुत कुछ समानता है। गौ और भैंस दूध देनेमें, भैंसा और बैल हल गाड़ी आदिके खींचनेमें समान रूपसे काममें लाये जाते हैं। परन्तु इनकी आकृतिमें विशेष भेद है। इनका शरीर गौओंके समान रोमसे छिपा हुआ नहीं रहता। भैंसके गल-कम्बल और थुई भी नहीं होती। भैंस जलमें अधिक रहना पसन्द करती हैं।

योरपकी भाषामें एक पशुका नाम Boison है। इस जातिमें Bos श्रेणीका एक विभाग होता है। इस विभागके पशुओंकी विशेषता यह है कि इनके शरीर कन्धे, गले और माथेपर लंबे बाल होते हैं। यह जङ्गली गौ होती है।

अमेरिकाके बाइसन जातिके सांड़ और वहांकी गौओंके संयोगसे एक संकर जातीय गौको उत्पत्ति हुई। उसका नाम Cattalloos है। विलायती गौओंके साथ उनकी बहुत समानता पायी जाती है।

तिब्बत और चीन देशके कैनसू नामक प्रदेशमें एक गो-जाति है, उसका नाम चमरी है। यह गो-जाति बस्टरास् और बाइसन-इन दोनोंकी मध्य श्रेणी की है।

गवय नामक एक पशु होता है, जो गौके सदृश होता है, वह आसाम, चटगांवके पहाड़ी स्थानोंमें और कूचविहार मैमनसिंह, त्रिपुरा आदिके जङ्गलमें पाया जाता है। धनी लोग इसको पालते भी हैं। बनमें रहनेवाले इसीके द्वारा हल जोतते हैं और इनका दूध भी पीते हैं। कभी कभी इस जातिके पशु-ओंके साथ गो-जातिका संयोग भी होते देखा गया है। गवय बलवान और दृढ़ होते हैं, साधारणतः ये गौओंसे अधिक ऊंचे होते हैं। परन्तु गो-जातिका विशेष चिन्ह गल-कम्बल तो इनके होता ही नहीं और ककुद भी बहुत उंचा नहीं होता। इनका आकार विलायती बस्टरास् नामक गौओंसे अधिक मिलता है।

योरपमें Urns नामक एक पशु था। सिंह व्याघ्रकी तरह इसकी भी स्वतन्त्र जाति थी। यह सात फीट ऊंचा होता था। इसके सींग तीन फीट लंबे होते थे। जूलियस सीजरने इस जातिके पशुओंको हाथीसे थोड़ा ही छोटा बतलाया है।* सम्प्रति भी इङ्गलेण्डके किसी किसी बगीचोंकी जङ्गली गौएं उसको अप्रकृतिका बच्चा जनती हैं।

---

* Julius cœsar says it (Urus) was little smaller than an elephant. Page 28. The Wild beast of the world.

इसी यूरस नामक जङ्गली गौसे इङ्गलेण्ड, अमेरिका, न्यूजी-लेण्ड, अस्ट्रेलिया आदि स्थानोंमें केटल नामक गोजातिकी उत्पत्ति हुई है। यह आकार प्रकारमें भारतकी गौओंसे बिलकुल भिन्न है।

पाठकोंको यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि, भारतकी गौओंका प्रधान चिन्ह गल-कम्बल और ककुद (थुई-hump) है। जिन पशुओंमें ये लक्षण नहीं हैं उनमें गौको और सब समानता होनेपर भी वे गौ नही हैं। उनको गवय कहना ही उपयुक्त है।

विलायती बस्टरास् नामक गौके थुई नहीं होती। अतएव विलायती गौ, गौ नहीं, किन्तु गौं सदृश पशुओंमेंके एक गवय जातिका पशु है। भारतीय दृष्टिसे, वह गौ नहीं कहा जा सकता। उसकी उत्पत्ति उसी Urus नामक मृग जातीय हिंसक पशुसे हुई है। किन्तु वहांके अध्यवसायी विज्ञान-वेत्ताओंके प्रयत्नसे वह मृग-जाति भी दूधदेने वाली गौके रूपमें परिणत होगयी है।

भारतीय गो जाति मनुष्योंके साथ रहने वाली है। विला-यती गौ प्रायः बनमें रहा करती हैं। वहांके मनुष्य उनको अपने प्रयत्नसे अपने काम लायक बना लेते हैं। अतएव योरपके भिन्न भिन्न स्थोंनोंमें जानेसे तथा वहांके जल, वायु, आहार आदिके परिवर्तनसे उनमें विशेष भेद उत्पन्न हो जाता है।

गवय, भैंस, बाइसन, चमरी, नीलगाय, गौर बेंटेंग नू, कुडू और योरपकी बस्टरास् जातिके पशु दूधदेने और हल आदि खींचनेमें गौके समान हैं, परन्तु वे भारतीय गो-जातिके पशु नहीं हैं। योरपकी काऊ Cow और भारतीय, गौ इन दोनोंको बहुत लोग एक ही समझते हैं। परन्तु यह समझ भूल है। इन दोनोंकी आकृति, प्रकृति, उत्पत्ति तथा वंश-परम्परा आदिमें भी बहुत भेद है। बिलायतवाले जिसको काऊ कहते हैं, हमारी दृष्टिमें वह बिलायती गाय है। योरपके क्रम-विकास-वादी पण्डितोंका मत है किपांच अंगुलीके पैरवाले पशुके क्रम-विकाससे इस गो-जातिकी उत्पत्ति हुई हैं। सृष्टिके तृतीय परिवर्तनके समय पांच अंगुलीवाले एक पशुकी जाति योरपमें थी। उस जातिके पशुओंके मुंहमें नीचे और ऊपर दोनों ओर दांत भी थे। समय पाकर उनके पैरकी नीचेवाली अंगुली बढ़ी और वह अंगुठे और दूसरी अंगुलीसे मिलकर एक हो गयी, इसी प्रकार चौथी और पांचवीं अंगुली भी आपसमें सट गयीं और उनसे खुर उत्पन्न हुआ। दांत भी धीरे धीरे गिर गये। जिससे गो-जातिकी उत्पत्ति हुई। यह बात मावसीनी (Maocene) युगके अन्तमें और प्लावसीनी युगके आरम्भमें हुई थी। योरपमें बड़े बड़े सींगोंवाली और बिना थुईकी बस्टरास् नामक गो-जातिकी उत्पत्ति हुई है। इस जातिके पशु उस देशमें Ice age वर्फके युगमें सिंह व्याघ्र आदि

हिंसक पशुओंकी भांति मनुष्य जातिके शत्रु थे। ऐतिहासिक युग आरम्भ होनेके पहले इस जातिके पशुओंकी लम्बाई सात फीट ऊंची थी और उनके तीन फीट लम्बे सींग होते थे। तदनन्तर इस जातिके पशु गृहपालित पशुके रूपमें परिणत हुए। भू-गर्भमें इसके चिन्ह मिलते हैं। इङ्गलैण्डके बारहिल, न्यूस्टेण्ड आदि रोमन स्थानोंमें बड़े पुराने गो-कङ्काल देखे जाते हैं। जिनसे स्पष्ट मालूम हो जाता है कि बिलायती गो-जाति पहले जङ्गली हिंसक-स्वभावकी थी। विलायती गौओंके कन्धेसे लेकर पीठ तक एक सीधी रेखा गयी हुई मालूम होती है। इस जातिकी गौ ३०० दिनतक गर्भ धारण करती हैं और दांत जमें हुए बच्चे उत्पन्न करती हैं। इनके कान छोटे होते हैं और मस्तक पर लम्बे और चिकने बाल होते हैं। इनकी बोली भी मीठी होती है।

भारतकी गो-जाति और मनुष्य-जातिका सम्बन्ध बहुत पुराना है। जबसे भारतवासियोंका इतिहास प्रारम्भ होता है, तभीसे भारतीय गो-जातिका भी इतिहास प्रारम्भ होता है। भारतीय और विलायती गौओंकी तुलना करनेमें कह सकते हैं कि, मनुष्यों और बन मानुसोंमें जितना भेद है, उतना ही भेद भारतीय और योरपीय गो-जातिमें है।

जलीय प्रदेशोंमें रहनेवाली गौओंसे भारतकी गौएं भिन्न होती हैं। ये जलमें घुसकर घास चरना पसन्द नहीं करतीं; किन्

बिलायतकी गौएं भैंसोंकी भांति जलमें घुसकर आनन्दके साथ घास चरती हैं। भारतकी गौओंके माथेपर बिलायती गौओंके समान लंबे बाल नहीं होते। भारतीय गो-जाति बुद्धिमान् और शान्त होती है, परन्तु बिलायती गौओंमें वंशगत बुद्धि-हीनता और क्रूरताका ही अधिक परिचय पाया जाता है। भारतीय गो-जातिका मनुष्योंसे चिरकालीन साथ होनेके कारण वे मनुष्योंके साथ सहज हीमें हिलमिल जाती हैं। बिलायती गौएं मक्खनके पुतले होती हैं, वे कुछ भी परिश्रम नहीं कर सकतीं। भारतीय गो-जाति जितना परिश्रम कर सकती है, उतना ही कष्ट भी सह सकती हैं। हमारी गौएं कहीं कहीं चलनेमें घोड़ोंकी बराबरी करती हैं। भारतमें रेल होनेके पहले धनी लोग बहलों और रथोंसे ही दूर दूरकी तीर्थ-यात्रा किया करते थे। सन् १५६० ई० में अबुलफजलने अपनी आइन-ए-अकबरीमें लिखा है कि २४ घण्टेमें ११० मीलतक बैलगाड़ी जाती है। बैल चलनेमें घोड़ोंको भी मात करते हैं।

संसारके घोड़ोंमें जिस प्रकार अरबी घोड़े अच्छे समझे जाते हैं, उसी प्रकार संसारकी गौओंमें भारतकी गौएं सबसे श्रेष्ठ समझी जाती हैं। इस बातको अङ्गरेज विद्वान् भी मानते हैं। भारतके बैल, वैशाख जेठकी कड़ाचूर गर्मीमें हल खींचते हैं, गाड़ी खींचते हैं, तेलकी घानी पेरते हैं, तोपोंकी गाड़ी खींचते हैं, रसद ढोकर यहांसे वहां पहुंचाते हैं। इस प्रकारके काम अन्य

देशके बैलोंसे नहीं हो सकते। बिलायती गौओंका काम केवल दूध देना है। बिलायती बैलोंका काम,खा लेना और सृष्टि उत्पादनका काम सम्पन्न करना है। इसके अतिरिक्त उनके द्वारा और कोई काम नहीं हो सकता। उनकी दिन-चर्यामें, उनके आहार-विहारमें थोड़ा भी इधर उधर हुआ कि वे झट बीमार पड़ जाते हैं, उनकी बीमारी भी यक्ष्मा आदिकी ही होती हैं। परन्तु भारतके बैल कठिनसे कठिन शीत और धूप सहकर हम लोगोंका कल्याण किया करते हैं। बिलायती गौओंका दूध भी बड़ी सावधानीसे रखना पड़ता है, थोड़ीसी भी असावधानी होनेपर उसमें भयङ्कर बीमारियोंके कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं। सम्भवतः बिलायतके जमे हुए दूधके साथ साथ भारतमें भी यक्ष्मा आदि कठिन बीमारियोंका प्रसार हो रहा है। बिलायती गौओंके दूधमें जितना घी होता है, भारतीय गौओंके दूधमें उससे दूना घी होता है।

पहले भारतीय गौएं आध मनसे भी अधिक दूध देतीं थीं। आइन-ए-अकबरीमें भी यही बात लिखी है। इस समय भी गुजरात और काठियावाड़ प्रदेशोंकी गौ सामान्य भोजनसे ही आध मन, पचीस सेर तक दूध देती हैं। बिलायती गौएं बड़े यत्न होनेपर भी इतना दूध नहीं देतीं। यहांकी गौएं भैंसोंके साथ प्रायः रहा करती हैं परन्तु वे उनसे संकर उत्पन्न नहीं करतीं। बिलायती गौएं ऐसा भी किया करती हैं। भारतकी गौएं

बिलायती गौओंसे श्रेष्ठ हैं, तथापि आज भारतीय गौओंका इतना अधःपात और बिलायती गौओंकी इतनी उन्नति क्यों हुई, यह एक प्रश्न है जो विचारवानोंको अपनी ओर खींचता है। विचार करनेसे मालूम होता है कि आज वशिष्ठ, भृगु, विराट, कुरु और नन्दराजकी सन्तान भारतीय ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य गोपालन-करना अपना कर्तव्य नहीं समझते।

उधर बिलायतके वैज्ञानिक शिक्षितोंने गोपालनका भार मूर्खोंसे अपने हाथमें लिया है। परलोकगता महारानी विक्टोरियाके पास भी एक गौ थी, जिसको प्रदर्शनीमें पहली श्रेणीका पदक मिला था। सम्राट् एवडर्ड, गौ रखते थे। महाराज पञ्चम जार्जके भी गौएं हैं। इन गौओंको भी प्रदर्शनीमें पुरस्कार मिला था। सुना जाता है कि जब महाराज पञ्चम जार्ज भारतमें आये थे,उस समय उनके दूधके लिये जो गौएं स्थान स्थानपर नियत की गयी थीं, उनको एक महीना पहलेसे ही पुष्टिकारक भोजन दिया जाता था और वह खूब साफ रखी जातीं थीं। भारतमें इस समय भी कितने ऐसे अङ्गरेज सज्जन हैं, जो केवल अपनी ही गौका दूध पीते हैं और जब उनकी गौ गर्भवती हो जाती है तब वे दूध पीना ही बन्द कर देते हैं। किन्तु भारतवासी तो इस समय गो-पालन करना ही भूल गये हैं। यही कारण है कि आज भारतीय गौओंकी इतनी दुर्दशा है और बिलायती गौओंकी सुदशा।

इङ्गलेण्डके वैज्ञानिक गौओंके शरीरके उपादान और दूधके उपादानकी परीक्षा करते हैं और उसीके अनुसार उनके भोजन-का भी निश्चय करते हैं। उनका ध्यान अपने भोजनकी ओर उतना नहीं रहता जितना कि गृह–पालित पशुओंके भोजनकी व्यवस्थाकी ओर रहता है। उन देशोंमें गो-खाद्य और गो–चिकि-त्साके सम्बन्धमें अनेक ग्रन्थ हैं। कितने ही मासिक पाक्षिक और साप्ताहिक ऐसे पत्र हैं,जो गो-जातिको उन्नतिके सम्बन्धमें आलोचना किया करते हैं। गांव गांवमें गो–चिकित्सालय और गो-चिकित्सक वर्तमान हैं। खैराती अस्पताल भी अनेक हैं। गौ उत्पन्न करनेके लिये प्रत्येक जातिके सांड़ हैं। इसी प्रकारकी और भी उन्नतिकारक व्यवस्था हैं।

इस समय इङ्गलेण्डकी गो-जाति और भेड़ोंको देखनेसे साफ मालूम हो जाता है कि संसारकी अन्य जातियोंसे वे अधिक उन्नत हैं। पशु-पालक अपने पशुओंमें जिन गुणोंके होनेकी इच्छा करते हैं वे सब गुण इङ्गलेण्डके इन पशुओंमें वर्तमान हैं। इनके पालनके लिये संसारमें और कहीं भी इतना धन और समयका खर्च किया नहीं किया जाता, जितना कि इङ्गलेण्डमें किया जाता है। कई प्रदर्शनियोंमें यह बात साबित हो चुकी है।

यदि हम लोग अपनी गौओंके पालनमें थोड़ी सावधानी करें तो इङ्गलेण्डकी गौओंकी अपेक्षा हमारी गौएं अधिक दूध दे

सकती हैं। स्वयं श्रीकृष्ण भगवान्‌ने गो-पालनका भार ग्रहण किया था। आज यदि भारतवासी कृष्ण भगवान्‌के दिखाये हुए मार्गसे चलें तो भारतीय गौओंकी उन्नति होना कुछ कठिन बात नहीं है।



चौथा अध्याय ।

गो-जनन ।

बछिया या बच्छी अवस्थाके बीत जानेपर 'गौ' अवस्था आरम्भ होती है और उस समय सांड़के संसर्गकी इच्छा उसके हृदयमें उत्पन्न होती है। यही गौओंके गर्भ धारणका समय होता है। ✓दो दांत निकलनेके बादही गौओंको यह अवस्था प्राप्त होती है।

पुष्पवती गौके लक्षण ।

गर्भ धारणकी इच्छा उत्पन्न होते ही गौएं अस्थिर होकर प्रायः चिल्लाने लगती हैं। उस समय वे मल-मूत्रका त्याग अधिक करती हैं और अपनी पूंछ हिलानेलगती हैं। खाना-पीना छोड़ देती हैं। उनका दूध भी कम हो जाता है। दूध देनेवाली गौएं दूध देनेके समय लात फड़ाके करने लगती हैं। गौका मूत्र-स्थान लाल हो जाता है और कुछ फूल भी जाता है। उसमेंसे एक प्रकारका सफेद और चिकनासा कुछ निकलता है। उस समय यदि कोई और गौ या बैल उसके पास आ जाता है, तो वह उसपर चढ़नेका प्रयत्न करती हैं। खुरसे जमीन खोदने

लग जाती हैं, रस्सी तोड़कर भाग जाना चाहती हैं। कोई कोई गाय ऐसी भी होती हैं जिसमें ये लक्षण नहीं होते। कितनी ही गौएं केवल अपनी पूंछ वार वार हिलाया करती हैं और अधिक मल-मूत्रका त्याग किया करती हैं। उनकी ऐसी अवस्था कुछ समयतक रहती है। यही गौका ऋतुकाल या पुष्पकाल समझना चाहिये। गायको गर्भ-धारण करनेकी इच्छा उत्पन्न होते ही तुरन्त उसको सांड़के पास लेजाना चाहिये। उस समय ऐसा करनाही सर्वोत्तम है। परन्तु इस स्थितिमें भी गायको दो तीन दिनतक ठहराया जा सकता है। अधिक विलम्ब होनेपर गर्भस्थित होनेमें सन्देह हो जाता है। योरपके विद्वानोंने परीक्षाके द्वारा निश्चित किया है कि इच्छा उत्पन्न होनेपर शीघ्र गायोंका सांड़से संयोग करानेसे बछिया पैदा होती है और एक दो दिनके विलम्बसे यदि उनका संयोग कराया जाय तो बच्छा उत्पन्न होता है। इस बातको जानकर जिसको जिसकी आवश्यकता हो उसे उसी प्रकार काम करना चाहिये।

गर्भ-धारण करनेकी अवस्था।

इस देशकी बछियां दो वर्षके ऊपर और तीन वर्षका उम्रके भीतर ही गर्भ-धारण करती हैं। अच्छा और पुष्टिकारक भोजन मिलनेपर १८ महीनेकी उम्रमें भी बछियां गर्भ-धारण कर सकती हैं। इङ्गलैण्डकी बाछियां दो वर्षकी उम्रमें बच्चे उत्पन्न

करती हैं। जो बच्छी दुबली और रोगग्रस्त होती हैं अथवा जिसको खानेको अच्छा नहीं मिलता वह तीन चार वर्ष तक गर्भ-धारण नहीं करतीं और जिसको अच्छा भोजन मिलता जाता है वह दो वर्षकी उम्रसे लेकर २५ वर्षकी उम्र तक बच्चे देती जाती हैं। साधारणतः १५।१६ वर्षकी अवस्थामें गाय बच्चा जनना बन्द कर देती हैं। उम्रके साथ साथ गौओंके दांत गिरने लग जाते हैं, तथापि उनका बच्चा देना बन्द नहीं होता, वे बच्चे देतीही जाती हैं। इसी कारण दांत गिरना गोओंके बुड्ढी होनेका चिन्ह नहीं समझा जाता।

गर्भ-धारण।

ऋतुमती गौका सांड़से संयोग करानेके समय उन दोनोंको किसी बन्द स्थानमें छोड़ देना चाहिये। ऐसा करनेसे वे स्वेच्छापूर्वक अपनी प्रवृत्ति चरितार्थ कर सकते हैं। परन्तु कभी कभी गाय सांड़के पास जानेमें डरती हैं, ऐसी गायोंको दो खूटोंके बीचमें बांध देना चाहिये। कोई कोई गाय ऐसी भी होती हैं जो सांड़को देखते ही जमीनपर लेट जाती है, उस समय वह लाठीसे उठायी जाती है और उसीके सहारे खड़ी की जाती है। परन्तु यह रीति भयानक है। ऐसा करनेसे गायके मर जानेका भय रहता है। इस कारण ऐसी गायको घुटने भर जलमें खड़ा कर देना चाहिये, वहां सांड़के

संयोग होनेसे वह गर्भ धारण भी कर लेगी, और उसकी मृत्युका भी कोई भय नहीं रहेगा। यह बात कमजोर और विशेषकर बङ्गालकी गौओंके लिये है। बङ्गालमें घर घरमें पानीके पोखरे रहते हैं। अस्तु, जो बछिया पहले पहल ऋतुमती होती है, वह सांडके पास जानेमें बहुत डरती है, उसको इतना डर मालूम होता है कि कभी कभी वह बहुत दिनोंतक गर्भ धारण ही नहीं करती। इस कारण नयी बछियाके गर्भ-धारणके समय बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिये। कोई कोई व्यायी हुई गाय दो तीन महीनेके भीतर ही ऋतुमती हो जाती हैं, उस समय उसको सांडके पास नहीं ले जाना चाहिये, क्योंकि उस समय गर्भाशय कमजोर रहता है और वह गर्भ धारण नहीं कर सकती। अतएव दो तीन महीनेके भीतर ही गौको इच्छा उत्पन्न हो जाय तो उसको सांडके पास न लेजाकर स्नान करा देना चाहिये। परन्तु इससे अधिक समयमें उसको इच्छाउत्पन्न हो तो सांडके पास लेजाना उचित ही है। प्राकृतिक इच्छा रोकना अनुचित है उससे गौके बन्ध्या और मृत-वत्सा हो जानेका डर रहता हैं। जो गाय तीसरे महीने गर्भ धारण करती है, वह एक वर्षके पश्चात् प्रसव करती है। कोई कोई गाय छै सात महीने दूध देकर गर्भधारण करती है। बारहवें महीने नियमित रूपसे व्यानेवाली गौ बढ़िया समझी जाती है।

गर्भका समय और उसके लक्षण ।

भारतकी गौएं प्राय: २७० से २८० दिन तक गर्भ-धारण करके बच्चे पैदा करती हैं, कोई कोई गाय अधिक दिन तक भी गर्भ-धारण करती हैं। गर्भ-धारण करनेपर गायोंका शरीर पुष्ट होने लगता है और उनकी एक प्रकारकी शोभा भी बढ़ जाती है। कोई कोई गर्भ-धारण कर लेनेपर भी कभी कभी चिल्लाती हैं तथा ऋतुमती होनेके अन्य लक्षणोंको भी प्रकाशित करती हैं। उस समय इस बातकी परीक्षा करनी चाहिये कि इस गायने पहले गर्भ धारण किया है कि नहीं? इसको गर्भ स्थिर हुआ है कि नहीं? क्योंकि उस अवस्थामें गर्भ-संयोग होनेपर उसके गर्भका नष्ट हो जाना तो निश्चित ही है साथ ही गायके स्वास्थ्य नष्ट हो जानेका भी भय बना रहता है। कोई कोई गर्भ-धारण करनेके सात महीने पश्चात् ऋतुमती होनेके समस्त लक्षणोंको प्रकाशित करती हैं। इस समय बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिये। गायका गर्भ-धारण करना पहले ही जान लेना बड़ा कठिन काम है। उसके मूत्रके साथ एक प्रकारके पीत स्रावके निकलनेसे ही उसके गर्भवती होनेका अनुमान किया जाता है। इस प्रकारका स्राव न होनेसे गायको गर्भवती होना नहीं समझा जाता है। इसके सिवा कई महीनोंके बीतनेपर उसके शरीरमें गुरुता आना भी गर्भवती होनेका लक्षण है।

चार पांच महीने बीत जानेपर तो स्पष्ट ही मालूम हो जाता है कि गर्भवती है या नहीं। गायका गर्भ जाननेके लिये उसके दाहिने पसवाड़ेको अंगुलीसे दबाना चाहिये। ऐसा करनेसे उसके गर्भमें बच्चा होनेका ज्ञान होता है और पेटके बच्चेका कोई अङ्ग भी उठ आता है। थोड़ा गरम जल पिलानेसे गौके गर्भका बच्चा छटपटाने लगता है और उसका यह छटपटाना बाहरसे स्पष्ट ही मालूम हो जाता है।

गो-पालकका कर्तव्य।

गर्भधारण करनेके पश्चात् गायको उत्तम और पुष्टिकर भोजन देना चाहिये और गायको नीरोग रखनेका भी विशेष प्रयत्न करना चाहिये। क्योंकि गायके अच्छे स्वास्थ्यके ऊपर ही बच्छेका अच्छा होना अवलम्बित है। परन्तु अधिक पुष्टिकर पदार्थ भी न देना चाहिये। अधिक पुष्टिकर पदार्थ देनेसे गाय अधिक मोटी हो जायगी, उसके गर्भाशयमें चर्बीकी अधिकता हो जायगी, जिससे बच्चेकी बाढ़ मारी जायगी। गर्भपात न हो जाय, इसलिये अच्छे बलवान् सांडके संयोगसे गायोंको गर्भ-धारण कराना चाहिये। जिस सांड़की माता अधिक दूध देती हो, उसी सांडका संयोग कराना चाहिये। उस सांडके संयोग करानेसे बच्चे अच्छे होते हैं और गायका दूध भी बढ़ता है। अच्छी गायका अच्छे सांडसे संयोग

करानेपर गो-वंशकी शीघ्र उन्नति होती है। गर्भधारण करते ही गायको थोड़ी देर दौड़ाकर स्नान करा देना चाहिये। उत्कृष्ट गाय और सांडका लगातार संयोग करानेपर गोवंशकी अत्यन्त वृद्धि होती है। इस प्रक्रियासे संक्रामक रोगका भी भय नहीं रहता। जिनके पास एक गाय रहती है, वे सांड नहीं रख सकते, सांडके लिये उनको अधिक खर्च करना पड़ता है। परन्तु जिनके पास ८–१० गौएं हैं उनको अवश्य एक सांड रखना चाहिये। अवसरपर अच्छे सांड़के न मिलनेसे उनको विशेष उलझनमें पड़ना पड़ता है। इङ्गलैण्डके गो-स्वामी जिनके पास एक दो गाय हैं, दो तीन स्थानोंपर पहलेहीसे सांड़का प्रबन्ध कर रखते हैं। अपनी आवश्यकताका समय भी वे अनुमानसे बतला देते हैं। सांड़ गायसे बलवान और अधिक दुग्धवतीका पुत्र होना चाहिये। गाय और सांड दोनोंका ही उत्तम होना आवश्यक है। दुर्बल और रोगी सांडसे कभी गायको गर्भ-धारण नहीं कराना चाहिये। गौओं-की उत्पत्तिके मूलमें कई नियम काम करते हैं। जिस प्रकार मनुष्य, पिताके आकार, प्रकृति, वर्ण, गठन, और स्वास्थ्य आदि-का प्रभाव गर्भस्थ बालकपर पड़ता है, उसीप्रकार गो-वंशमें भी होता है। श्वेत, पीत, कृष्ण आदि जातिके पिता माताके बच्छे भी उसी वर्णके होते हैं। अधिक दूध देनेवाली गाय और अधिक दूध देनेवाली गायके पुत्र सांडके संयोगसे जो

बच्छी उत्पन्न होगी वह भी अधिक दुग्धवती होगी। निकृष्ट गाय और सांडके संयोगसे बच्छे भी निकृष्ट होते हैं। साधारणतः बाछी पिताके और बच्छे माताके गुण ग्रहण करते हैं। एक परिवारक गौ और सांडका संयोग कराना अनुचित है। अर्थात् पिता कन्या, माता पुत्र और भाई भगिनी आदिका परस्पर संयोग कराना अनुचित है। ऐसा करनेसे जो बच्छे उत्पन्न होते हैं, वे दुर्बल होते हैं और कुछ दिनोंके बाद उस समस्त वंशका ही नाश हो जाता है। बच्छे ही उन्नतिके अंकुर हैं अतएव उनकी बड़ी सावधानीसे देखरेख करनी चाहिये। उनके द्वारा ही दल बढ़ता है, और अर्थ लाभ भी होता है। अच्छा खाना पीना मिलनेसे बच्छे शीघ्र ही अपने पिता माताके बराबर होजाते हैं। बच्छे अपने पिता मातासे अच्छे हों, इस ओर विशेष ध्यान रखना चाहिये। ऐसा करनेसे ही आशाकी पूर्ति होगी। गोवंशकी उन्नति होगी और भारत सुखी होगा।

अनुलोम-विलोम संयोगके फलाफल।

इस विषयमें योरपके वैज्ञानिक विद्वानोंने अनुसन्धानकर कतिपय सिद्धान्त निश्चित किये हैं, वे नीचे लिखे जाते हैं:—

(१) निकृष्ट गायका उत्कृष्ट सांडके साथ संयोग करानेसे उत्कृष्ट बच्चा तो उत्पन्न होता ही है और साथ ही उस

गायका दूध भी बढ़ जाता है। यह प्राकृतिक नियम है, क्योंकि बलवान् बच्चेको पीनेके लिये दूध अधिक परिमाणमें और अच्छा मिलना ही चाहिये।

(२) अच्छी गायका निकृष्ट सांडके साथ संयोग करानेपर बच्चा भी निकृष्ट ही होता है और गायका भी दूध कम हो जाता है। क्योंकि निकृष्ट बच्चेके लिये अधिक दूधकी आवश्यकता नहीं है।

(३) उत्कृष्ट सांड और निकृष्टगायसे जो बच्चा उत्पन्न होगा वह पिताके समान उत्कृष्ट होगा, अपनी मातासे अच्छा होगा।

(४) निकृष्ट सांड और उत्कृष्ट गायसे जो बच्चा उत्पन्न होगा वह भी निकृष्ट होगा। ऐसा संयोग बच्चा और दूध दोनोंको हानि पहुंचाता है।

(५) उत्कृष्ट सांड और गायके संयोगसे बच्चा उत्कृष्ट होगा। निकृष्ट सांड और गायके संयोगसे बच्चा भी निकृष्ट होगा।

(६) किसी उत्कृष्ट जातीय गौका यदि दो तीन बार तक निकृष्ट जातीय सांडसे संयोग होता रहे और पश्चात् उस गौका किसी उत्कृष्ट जातिके सांडके साथ संयोग कराया जाय, तो भी उसका कोई फल नहीं होता। उस सांडसे उत्पन्न बच्चे भी उत्कृष्ट नहीं होते।

(७) कभी कभी बच्चा माता पिताके समान न होकर मातामही और पितामहके अनुरूप होता है। कभी कभी और दो तीन पूर्व पुरुषका अनुकरण उसमें पाया जाता है।

(८) कोई कोई बच्चे न तो पिता-माता हीके अनुरूप होते हैं और न अपने पूर्व-पुरुष हीके, किन्तु उनमें एक नया ही लक्षण होता है। यह भेद गर्भवतीके खान पान और स्वास्थ्यके अनुसार होता है, अच्छा खाना पीना देनेसे उत्पन्न हुआ बच्चा उत्कृष्ट होता है। खाना पीना अच्छा न मिलनेसे और हवा पानीकी अनुकूलता न रहनेसे भी बच्चे निकृष्ट हो जाते हैं।



पांचवां अध्याय।



गोसेवा।

गर्भावस्थामें गौओंकी देख रेख बड़ी सावधानीसे करनी चाहिये। डरकर कहीं कूदनेसे, किसी गाय या बैलसे लड़ाई करनेसे और दौड़नेसे गर्भस्राव हो जानेका भय रहता है। गर्भावस्थामें प्रत्येक गायसे थोड़ा थोड़ा परिश्रम कराना चाहिये। व्यायाम न करानेसे गर्भस्थ बच्चेके मर जानेका भय रहता है। गर्भावस्थामें एक स्थानपर उनको बांधकर रखना अनुचित और हानिकारक है। एक स्थानपर बंधो रहनेसे गर्भाशयमें चर्बी जम जाती है और बच्चा मर जाता है, इसी कारण वङ्ग प्रदेशमें प्रायः बहुत सी गौएं मरे हुए बच्चे पैदा करती हैं। इनको खली आदि उत्तेजक भोजन भी न देना चाहिये। उत्तेजक पदार्थोंके खानेसे गर्भपात हो जानेका भय रहता है। गर्भावस्थामें यदि किसी कारणवश गायका सांड़से संयोग हो जाय, तो उस समय गर्भपात होना निश्चित है। गर्भावस्थामें उत्तेजक पदार्थोंके खानेसे गाय ऋतुमती

हो जानेके कतिपय लक्षण प्रकट करने लगती है। अतएव गर्भावस्थामें ऋतुमती होनेके लक्षण प्रकट होनेपर, गायके मालिकको इस बातका अनुसन्धान करना चाहिये कि, यह गाय उत्तेजक पदार्थोंके खानेसे ऐसा कर रही है, या सच-मुच ऋतुमती हुई है। इस बातका बिना विचार किये, काम करनेसे गायका गर्भपात अवश्य हो जायगा। ऐसे समयमें गायको किसी घिरे हुए स्थानमें अथवा अन्य निर्भय स्थानमें छोड़ देना चाहिये और स्नान आदि कराकर साफ सुथरा रखना चाहिये। ऐसे प्रयत्नसे स्नान कराना उचित है, कि यह कूदे फांदे नहीं। गर्भावस्थामें गोओंकी प्रकृति अत्यन्त मृदु हो जाती है, सामान्य कारणोंसे भी उनके गर्भपात होनेकी सम्भा-वना रहती है। यदि किसीका गर्भस्राव हो जाय तो, उस गिरे हुए गर्भको बड़ी सावधानीसे गायोंके रहनेके स्थानसे दूर फिकवा दिया जाय। क्योंकि कभी कभी यह संक्रामक रोगका भी रूप धारण करता है। गर्भपातके पश्चात् औषध मिश्रित गर्म जलसे गायके पीछेका भाग धुलवा देना चाहिये। इसके बाद शीघ्र ही गायका सांड़से संयोग नहीं कराना चाहिये, क्योंकि एकबार गर्भपात होनेपर बार बार गर्भपात हो जानेकी आशङ्का बनी रहती है। जो गाय एकबार गर्भपात करनेके पश्चात् गर्भधारण करती है, उसके गर्भके समयमें बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिये। जिन कारणोंसे पहले

उसका गर्भपात हुआ है ,वे कारण पुनः न होने पावें इस ओर विशेष ध्यान रखना चाहिये। कई प्रकारके ऐसे पदार्थ हैं, जिनके खानेसे गायका गर्भपात हो जाता है। अतएव ऐसे पदार्थ गर्भके समयमें गायोंको नहीं खिलाने चाहियें।

प्रसव समयकी सेवा।

प्रसवके कुछ दिन पहले गौके शरीरमें कुछ विशेष चिन्ह प्रकट होते हैं, जिनसे मालूम हो जाता है कि अब दो तीन सप्ताहमें ही यह गाय प्रसव करेगी। आसन्न-प्रसवा गायोंका पश्चात् भाग कुछ चिपका मालूम होने लगता है। उनकी पाकस्थली कुछ शिथिल हो जाती है। अधिक उम्रवाली गायोंके शीघ्र प्रसव होनेके लक्षण स्पष्ट ही मालूम होने लगते हैं। अधिक मल त्याग करनेकी उनकी इच्छा होती है, परन्तु त्याग करती नहीं हैं, प्रसव स्थानके रूपमें भी कुछ परिवर्तन हो जाते हैं। पीले रङ्गका एक तरल पदार्थ मूत्रके साथ निकलने लगता है। इन सब चिन्होंसे जानना चाहिये कि शीघ्र ही यह प्रसव करेगी। उस समय बड़ी सावधानीसे गौओंकी रक्षा होनी चाहिये। उनको चरनेके लिये बाहर खेतोंमें नहीं जाने देना चाहिये। जहांतक सम्भव हो, उस समय गायको निर्जनस्थानमें रखना चाहिये जहां उसके डरनेका कोई कारण न हो। अन्यथा डरनेसे उनमें उत्तेजना हो सकती है

और इस उत्तेजनासे बड़ी बड़ी हानियोंका होना निश्चत है। बाहर खेत आदिमें प्रसव करनेपर भी हानि होनेकी सम्भावना रहती है। कोई कोई गाय इन सब चिन्होंके प्रकट होनेके दिन ही प्रसव भी करती हैं। प्रसव करनेके दस पन्द्रह दिन पहलेसे ही गौओंका स्तन-भाग अत्यन्त कठिन हो जाता है, उसमें भारी-पन आ जाता है। दूधकी नालियां पोढ और मोटी होजाती हैं। जाड़े के दिनोंमें इस अवस्थामें गौओंके शरीरमें सर्दी नहीं लगनी चाहिये। सर्दी लगनेसे हानि होती है, अतएव उनको गर्म जगहमें रखना चाहिये। इस समय स्नान कराना तथा गीले स्थानमें रखना भी हानिकारक है।

यदि उनका स्तन-भाग बहुत बड़ा हो जाय और दूध देनेवाली नाड़ियां मोटी हो जायं तो प्रातःकाल और सन्ध्याकाल उनका दूध निकाल देना चाहिये। नहीं तो, दूध जम जाता है और उससे गायको दुग्ध-ज्वर उत्पन्न हो जाता है। ऐसा होना गाय और बच्चा—दोनोंके लिये हानिकारी हैं। इस प्रकार अच्छी अच्छी गौएं पीड़ित होकर खराब हो गयी हैं। ऐसे ही रोगोंसे थन मारा जाता है। इस रोगसे कभी कभी गायोंको प्राण तक देने पड़ते हैं।

गायका दूध दूहना आरम्भ करनेपर वह प्रति दिन नियमानुसार दूहा जाना चाहिये। प्रसव होनेके एक दो घण्टे पहले जब प्रसव-वेदना उत्पन्न होती है, तब उनकी आंखोंमें

भय और अशान्तिके चिह्न प्रकट हो जाते हैं। निर्निमेष होकर वे एक पलक ताकने लगती हैं। गायका ऐसा लक्षण देखकर ही उसे एकान्त स्थानमें रख देना चाहिये। यदि गोशाला हो, और वहां फर्श भी पक्की हो तो उसपर सूखा घास बिछा देना चाहिये और गायके पश्चात् भागकी ओर नारियलका तेल लगा देना चाहिये। उनको घास खानेको देना चाहिये। उस स्थानमें एक आदमीका छिपकर बैठा रहना जरूरी है। किन्तु गायको यह न मालूम होना चाहिये कि यहां कोई है। बीच बीचमें उसके समीप जानेसे उसे कष्ट होता है। जिस समय गायको वेदना न होगी, उस समय वह घास खायगी। जब गायकी अशान्ति बहुत बढ़ जाय और वह कभी उठने और कभी बैठने लग जाय उस समयसे और जबतक प्रसव न करे, तबतक एक आदमीको गौके पास ही रहना चाहिये। परन्तु उसका कोई भी अङ्ग नहीं छूना चाहिये। अङ्ग छूनेसे वह दुःखी होती है। जब प्रसव होने लगे, जब बच्चेके दोनों पैर और मस्तक बाहर निकल आवें तबसे प्रसव समाप्त होने तक उसको उठने न देना चाहिये।

जल निकलना आरम्भ होनेसे ही प्रसव होना आरम्भ होता है। उस समय गाय सो जाती है और थोड़ी देर ठहरकर बायीं करवट हो जाती है। इसी समय बच्चेके खुर देख पड़ते हैं, उस समय गायको बहुत कष्ट होता है, उसी समय बच्चेका

माथा भी निकल आता है। बच्चेकी पीठ गायकी पीठके सीधमें रहती है। माथा निकलनेके दो तीन मिनटके भीतर ही बच्चा निकल आता है। यदि गाय अधिक कमजोर न हो गयी हो तो वह उठकर खड़ी हो जाती है और बच्चेको जीभसे चाटने लगती है।

जन्म लेनेपर बच्चा बड़े जोरसे सांस खींचता है। शनैः शनैः वह अपना माथा उठाता है और साथ ही उठनेका प्रयत्न भी करता है, परन्तु थोड़ी देर तक उठ नहीं सकता। फिर भी प्रयत्न करना वह छोड़ता नहीं है। अन्तमें वह सफल भी हो जाता है। पहले एक दो बार खड़ा होनेपर वह तल-मलाकर गिर जाता है, परन्तु थोड़ी ही देरके बाद उसके पैर ठीक हो जाते हैं और वह चलने लग जाता है। गायका प्रसव बिलकुल प्राकृतिक नियमोंके आधारपर ही होता है। शीत-कालमें गायके बच्चा पैदा होनेपर दोनोंको आगसे सेकना आवश्यक है। इससे बच्चा बलवान् हो जाता है। जिस गायको प्रसव वेदना उत्पन्न होकर फिर धीरे धीरे कम होने लगे, उस समय उसे ५० ग्रेनसे ८० ग्रेन तक कुलाइन खिला देनेसे विशेष लाभ होता है। इसी प्रकार अन्य औष-धियोंका भी प्रयोग करना चाहिये। जिस गायके प्रसव करनेमें देर लगे उसको भी औषध देना चाहिये यदि उस समय किसी प्रकारकी दुर्घटना हो जाय, तो बड़ी सावधानीसे काम

लेना चाहिये। क्योंकि वह समय प्राण-सङ्कटका है। दुर्घटनाके समय किसी जानकारको बुलाना चाहिये और उसकेज्ञानसे लाभ उठाना चाहिये। इङ्गलेण्ड आदि देशोंमें तो ऐसे समय डाक्टर काम किया करते हैं परन्तु भारतमें वैसे डाकृरोंका अभाव है। फिर भी जानकारोंके द्वारा थोड़ा बहुत लाभ हो ही जाता है।

प्रसवके बाद सेवा।

प्रसवके पश्चात् गायके पेटमें गर्भ सम्बन्धी जो कुछ विकार रह जाय उसको निकाल देनेका प्रयत्न करना चाहिये और साथ ही इस बातपर भी ध्यान रखना चाहिये, कि गाय कहीं उसे खा न जाय। प्रसवके पश्चात् गाय अपने पीछेका भाग चाटकर साफ करती है, उस समय गर्भ-विकार निकलता है, उसे वह खा भी लेती है। उसके खा जानेसे गायको रक्तामाशय आदि कठिन रोग उत्पन्न हो जाते हैं और वे शीघ्र आराम भी नहीं होते। चार घण्टेके भीतर ही भीतर वह विकार साधारणतः निकल जाता है। यदि इतने समयमें वह न निकले तो थोड़ा गरम जल एक पाव गुड़, थोड़ी सोंठ और एक छटाक कच्ची हलदीको मैदाके साथ मिलाकर पिला दें, इस प्रकार छै छै घण्टेके भीतर दो बार पिलानेसे एक दस्त होगा और उसीके साथ वह विकार भी निकल आवेगा। उसके निकल जानेपर शीघ्र ही उसे वहांसे हटा देना चाहिये। यदि इतनेपर भी वह

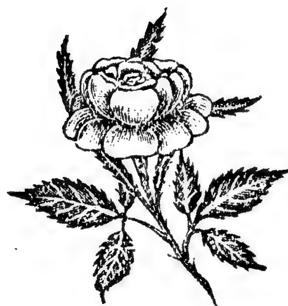
बाहर न आवे तो उसकी चिकित्सा करनी चाहिये। चिकित्साकी विधि भी इसी पुस्तकमें आप लोगोंको मिलेगी। यदि किसी प्रकार गर्भ-विकारको गाय खा ही जाय, तो ५० पान कूटकर उसका रस निकालकर गायको पिला दें, अथवा शहत और तुलसीकी पत्तियोंका रस पिला दें। यदि प्रसवके पश्चात् गाय अपने बच्चेको न चाटे तो कच्चा दूध या गुड़का जल बच्चेपर छिड़क देना चाहिये, ऐसा करनेपर गाय उसे अवश्य चाटेगी। उत्पन्न होनेपर बच्चा यदि निर्जीवके समान पड़ा रहे, उठनेका प्रयत्न न करे तो स्वयं काली मिर्च या प्याज चबाकर उसके नाकमें फूकना चाहिये अथवा आगसे सेकना चाहिये, उसमें चेतनता आ जायगी। बांसकी पत्ती, खिलानेसे भी गायका गर्भविकार निकल जाता हैं। किन्तु सब जगह तो बांसकी पत्ती होती नहीं। प्रसव होनेके पश्चात् गायका पीछेका भाग गरम जलसे धोकर कपूर मिश्रित सरसोंका तेल दस पांच दिन लगाना चाहिये। इसी प्रकार बच्चेकी नाभी भी साफ कर देनी चाहिये। दूसरे देशोंमें बच्छेकी नाभी काट दी जाती हैं, परन्तु इस देशमें ऐसी प्रथा नहीं हैं। यदि नाभिच्छेदन क्रिया जाय तो वह स्थान फेनाइलसे धो देना चाहिये।

प्रसवके पश्चात् कभी गायको ठंढा जल नहीं पिलाना चाहिये। एक घण्टातक ठण्ढ लगनेका भय रहता हैं।

उस समय गायको खूब गर्म रखनेका प्रयत्न करना चाहिये। एक गरम कम्बल गायको उढ़ा देनेसे बड़ा लाभ होता है। एक सप्ताहतक गायको गरम जल पिलाना चाहिये। अधिक दूध देनेवाली गौएं अत्यन्त कोमल प्रकृतिकी होती हैं। थोड़े कारणोंसे भी उनकी प्रकृतिमें विपर्यय हो जाता है, अतएव उनकी देखरेखमें बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिये।

प्रसवके पश्चात् गायको बांसकी पत्ती खिलायी जा सकती है। पहले सप्ताहमें उनको कच्चा घास परिमित परिमाणमें खानेको देना चाहिये, और दिनमें एक दो वार बनाया हुआ मसाला पिलाना चाहिये। उस समय एक सप्ताह तक सूखा घास उनको खानेके लिये नहीं देना चाहिये और एक सप्ताह तक और भी कोई गरम पदार्थ खानेको नहीं देना चाहिये। इस समय यदि गायको कोई रोग हो जाय तो बड़ी सावधानीसे उसका औषधोपचार करना चाहिये। प्रसवके बादका गायका दूध दूह कर फेंक देना चाहिये। बच्छेको भी पीनेके लिये नहीं देना चाहिये क्योंकि उस दूधके पीनेसे बच्छेको रोग हो जाता है। इस कारण एक वार दूध निकालकर पीछेसे दूध बच्छेको पिलाना चाहिये। बच्छेके दूध पी लेनेपर गायको दूहना चाहिये। दूहनेके एक घण्टा पीछेतक बच्चेको बांधकर रखना चाहिये। गायका सब दूध दुह लेना चाहिये। छै सात दिनतक गायके दूधमें घीका भाग बहुत कम होता है। तीन सप्ताह तक

गायका दूध केवल बच्छेको ही पीने देना चाहिये। इस देशके निवासी स्वभावसे ही २१ दिनके बाद गायका दूध अपने व्यवहारमें लाते हैं। प्रसवके बाद यदि गायके थनसे दूध न निकले तो घी लगाकर या और कोई औषध लगाकर उसका छिद्र ठीक कर लेना चाहिये।



छठा अध्याय ।



सांड ।

अच्छे सांड़ोंके होने न होनेपर ही गोवंशकी उन्नति अवनतिका होना बहुत कुछ निर्भर है। परीक्षाके द्वारा यह बात निश्चित हो चुकी है, कि अच्छी जातिकी गौ और अच्छी जातिके सांड़ोंसे अच्छे बच्छे पैदा होते हैं। किसी अच्छी जातिकी गायका उसी जातिके सांड़के साथ संयोग होनेपर और भी अच्छे बच्छे पैदा होते हैं। केवल गौ ही अच्छी न होनी चाहिये, साथ ही सांड़का अच्छा होना भी आवश्यक है। उस समय सांड़ोंके माता और मातामहीके दोष गुणका विचार कर लेना भी आवश्यक है। क्योंकि दोषी गायसे उत्पन्न सांड़ोंके बच्छे भी दोषी ही होंगे। अच्छी गायका निकृष्ट सांड़के साथ संयोग करानेपर उनके वंशज भी निकृष्ट होते हैं और गायोंका दूध भी धीरे धीरे घटने लगता है।

हृष्ट पुष्ट गाय बैल उत्पन्न करनेके लिये आवश्यकता इस बातकी है, कि देशमें अच्छे सांड़ हों। यह काइला दुह-

राना मात्र है कि, अच्छे सांड द्वारा निकृष्ट गौके भी अच्छे बछड़े उत्पन्न हो सकते हैं और निकृष्ट सांडके द्वारा अच्छी गौओंसे भी अच्छे बछड़े उत्पन्न नहीं होते। अच्छी गायोंको यदि किसी छोटे दुबले सांड़से गर्भधारण कराया जाय, तो उससे जो बछड़े उत्पन्न होंगे वे बहुत ही दुबले और छोटे होंगे। इस प्रकार आगे चलकर वंशके नाश होजानेकी सम्भावना है। कहनेका तात्पर्य यह है कि, गोवंशकी वृद्धिके लिये सांडोंका उत्कृष्ट होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिये प्रत्येक गोपालकको अच्छी गायोंकी भांति ही सांड भी रखना चाहिये। जिनके पास एक दो गौएं रहती हों, उनका काम तो किसी प्रकार चल सकता है ओर वे अपना काम चला भी लेते हैं। परन्तु जिनके पास चार पांच गौएं हैं अथवा इससे भी अधिक हैं उनका काम सांडके बिना नहीं चल सकता। उनको अवश्य अपना एक निजका सांड रखना चाहिये। क्योंकि समयपर उत्तम सांड न मिलनेसे गौओंके नष्ट हो जानेकी बहुत कुछ सम्भावना बनी रहती है। बहुत स्थानोंमें देखा गया है कि अच्छी अच्छी गौएं जो १०।११ सेरतक दूध देती हैं, वे समय पर सांड न मिलनेके कारण वन्ध्या हो गयी हैं।

इङ्गलेण्ड आदि देशोंके गोपालक उत्तम उत्तम सांड रखते हैं। वहांकी प्रदर्शिनीमें जिन सांडोंको पुरस्कार मिलता है, उन्हींमेंके सांड वहांके गोपालक बहुत अधिक दाम देकर भी

खरीदते हैं। उनकी फीस वे दूसरोंसे १५ रु० तक लेते हैं। परन्तु इतनी अधिक फीस देकर भी उत्तम सांडोंसे संयोग कराना उनके लिये लाभदायक होता है। यही सब कारण हैं कि जिनसे वहांके गोवंशकी उन्नति सुनकर चकित होना पड़ता है।

योरपके आस्ट्रेलिया न्यूजिलेण्ड तथा अमेरिका आदि देशोंमें सांड़का व्यापार होता है। वहांके शहरों, गांवों, मह्ल्लों-तकमें सांड़ रखे जाते हैं। वे हृष्टपुष्ट होते हैं। उनसे बछड़ा बछड़ी उत्पन्न करनेका काम लिया जाता है। १५ रुपयेसे लेकर १५० रुपयेतक वहांके सांड़ोंकी फीस है। इस व्यव-सायमें उन लोगोंको बड़ा लाभ होता है।

कलकत्तेमें कुक कम्पनी नामकी एक कम्पनी है। वह भी अपने यहां सांड़ रखती है और १० रुपयेसे लेकर १५ रुपयेतक एक सांड़की फीस लिया करती हैं।

इङ्गलेण्ड आदि देशोंमें जो गौ रखते हैं, वे पहलेसे ही गौके ऋतुमती होनेका समय मालूम कर लिया करते हैं। और वे इस बातकी खबर सांड़के व्यवसाय करनेवालोंके पास भेज देते हैं। सांड़की किस समय आवश्यकता होगी यह भी अनु-मानतः निश्चित करके बतला दिया करते हैं। समय आनेपर वे अपनी गाय लेकर सांड़वालोंके पास पहुंचते हैं। उस समय सांड और गौ दोनोंके मालिक वहां उपस्थित रहते हैं

और वहां एक डाक्टर भी रहता है। वह दोनोंकी परीक्षा करता है। परीक्षाके द्वारा देखा जाता है कि इनमें किसीको कोई रोग तो नहीं है। यदि सांड़को कोई बीमारी हुई तो वह सांड़ हटा दिया जाता है और दूसरा सांड़ आता है, परीक्षा होनेपर नियोग होता है। नियोग होनेपर आधी फोस ले ली जाती है और आधी फोस गौके गर्भ रह जानेपर ली जाती है।

फलकी उत्तमता बीजकी उत्तमतापर निर्भर है। इस बातकी उपयोगिता पश्चिमी देशोंके वैज्ञानिक खूब जानते हैं, अतएव वे अपने समस्त व्यवहारोंमें इस नियमका पालन करते हैं। इसीसे एक सांडके लिये वे कई हजार रुपये अनायास ही खर्च करते हैं।

हमारे देशमें भी अच्छे सांडोंके मिलनेकी व्यवस्था थी। परन्तु यहां इसका व्यवसाय नहीं होता था और वह एक पुण्यका कार्य समझा जाता था। अपने पिता माता आदिका स्वर्गवास होनेपर भारतवासी हिन्दू वृषोत्सर्ग किया करते हैं। श्राद्धके समय चार बछिया और एक बच्छा छोड़ते हैं। बच्छेको त्रिशूल और चक्रके चिन्होंसे चिन्हित कर दिया करते हैं। उसका आदर सभी गृहस्थ करते हैं, उसका अपराध अपराध नहीं समझा जाता, वह खेत खाले तो भी अदंड्य है। इस प्रकार स्वच्छन्दतापूर्वक वह आहार विहार करता है। वही देशकी गौओंका पिता होता है। किस प्रकारके बच्छेको सांड बनाकर

छोड़ना चाहिये इसका भी हिन्दू शास्त्रोंमें उल्लेख है, महर्षि कात्यायन कहते हैं —

"अव्यङ्गय–जीव–वत्सायाः पयस्विन्याः सुतोबली,
एक वर्णो द्विवर्णो वा यो वा स्यादष्टका सुतः।
यूथादुच्चतरो यस्तु समो वा नीच एव वा,
सप्तापरान् सप्तपरानुच्छृद्स्तारयेद् वृषः।"

अर्थात्, अविकलाङ्ग जीवद्वत्सा दुग्धवती धेनुका पुत्र बलवान्, एक या दो रङ्गका, अष्टमीके दिनका उत्पन्न, यूथमें सबसे ऊंचा या बराबर या सबसे नीचा बच्छा ही सांड बनानेके उपयुक्त है। जो मनुष्य सांड छोड़ता है, उसके सात पुरुष पहले और सात पुरुष आगे—इस प्रकार चौदह पुरुष तर जाते हैं।

उस सांडको कोई भी किसी काममें नहीं ले सकता। वह हल या गाड़ीमें नहीं जोता जा सकता। उसका काम है केवल प्रजा उत्पादन करना। महर्षि गोभिलने लिखा है :—

"वृषभन्तु समुत्सृष्टं कपिलांवापि कामतः।
योजयित्वा हलंकुर्याद्व्रतं चान्द्रायणं चरेत्॥"

छोड़े हुए बैल (सांड) या कपिला गौको हलमें जोतता है, उसे चान्द्रायण व्रत करना चाहिये। चान्द्रायण व्रत करनेसे ही सांड या गौको हलमें जोतनेका पाप दूर हो सकता है।

इस देशके रहनेवाले मुसलमानोंमें भी इसी प्रकारकी प्रथा प्रचलित थी। वे भी बैलके गलेमें लकड़ीकी तख्ती बांधकर

उसे धर्मके नामपर छोड़ दिया करते थे। वह खुदाई सांड कहा जाता था। वह भी सर्वत्र आनन्दपूर्वक विचरण कर सकता था। जिसके घर जाय वही उसका आदर करता था और अपनेको धन्य समझता था। उससे भी केवल उत्पादन का ही काम लिया जाता था। परन्तु आज वे दिन नहीं हैं। आज न वे वृषोत्सर्ग करनेवाले हैं और न उन सांडोंके आदर करनेवाले गृहस्थ ही हैं। आज न वह धर्म है और न वे धार्मिक हैं।

देशवासियोंमें अर्थशास्त्रके ज्ञानका प्रचार हुआ है। उपयोगिता अनुपयोगिताकी ओर उनका ध्यान बड़े जोरसे आकृष्ट हुआ है। सांडोंसे खेत आदिमें हानि होती है, यह बात अब देशवासियोंके ध्यानमें आगयी है। इसीसे म्युनिसपलिटीके इन्द्रोंने सांडोंकी व्यवस्था कर दी है। अब इन सांडोंसे मैलेकी गाड़ी ढुवाई जाती हैं। इस प्रकार अच्छे अच्छे सांडोंका नाश हो रहा है। पहले काशी आदि तीर्थ क्षेत्रोंमें बहुत और अच्छे सांड रहा करते थे। परन्तु आज वे वहां नाममात्रके ही रह गये हैं!

सांडोंका कोई मालिक नहीं, इनके चुरानेसे चोरीका अपराध नहीं होता, चोरपर चोरीका मुकद्दमा नहीं चलाया जा सकता, न्यायालयसे इस प्रकारका निर्णय होनेसे देशमें सांडोंकी कमी होने लगी। उनसे मैलेकी गाड़ी खिचवायी जानेलगी। यह देखकर सांड

छोड़नेवाले श्रद्धालुओंके हृदयपर आघात पहुंचा। उन लोगोंमें बहुतोंने तो सांड छोड़ना ही छोड़ दिया और जो थोड़े लोग छोड़ते भी हैं, वे अपने घर ही रखते हैं। इसके सिवा बीसवीं सदीकी चकाचौंधसे चकराये हुए उन्नतिके प्रयासी देशके नव-प्रतिष्ठित ब्रह्मसमाज, प्रार्थना-समाज और विशेषकर आर्यसमाजने भी वृषोत्सर्गकी सनातन-प्रथाको बड़ी हानि पहुंचायी है। वृषोत्सर्ग श्राद्धका ही एक अङ्ग है और श्राद्धको बिना समझे बूझे आर्य-समाजके अनुयायी खण्डन करने लगे। इसका फल यह हुआ कि देशसे सांडोंका नाम ही उठता जाता है। इससे क्या हानि है, यह बात बुद्धिविशारदोंके ध्यानमें न आयी। मोहर लुट गयी, कयलोंपर पहरा पड़ा है!

इसी प्रकार भारतवासी अपनी पुरानी रीति छोड़ते चले जा रहे हैं। पहले गोवंश उत्पन्न करनेकी जो रीति यहां प्रचलित थी, आज वह भारतवासियोंको अप्रिय हो गयी है और वे उसे छोड़ते चले जा रहे हैं और अन्य देशोंमें इसके लिये रीति है, उसका ग्रहण भी नहीं करते। अपनी चीज जो थी, उसे तो खो ही दिया और दूसरेसे भी कुछ न लिया। अब आवश्यकता पड़नेपर जैसा तैसा सांड मिल जाय, उसीसे काम चलाना पड़ता है। इसका फल यह होता है कि अच्छे वीर्यसे उत्पन्न न होनेके कारण दिन प्रति दिन इस वंशकी अवनति होती जाती है। सांडके क्षुद्र दुर्बल और रोगी होनेसे उसकी

सन्तान भी वैसी ही होगी। पिता हीके गुण तो पुत्र आदिमें आते हैं। माताका गुण बच्छेमें और पिताका गुण बाछियांमें अधिक संक्रमित होता है, यह विद्वानोंका सिद्धान्त है। देशमें सांडोंकी कमी होनेसे, काम पड़नेपर जिस किसी सांडके द्वारा काम चलानेसे दिन प्रति दिन गोवंशका ह्रास हो रहा है। कहीं कहीं तो एक ही सांडको प्रति दिन उत्पादनके काममें जुता रहना पड़ता है, जिससे वह शक्तिहीन हो जाता है और उससे उत्पन्न बछड़े शीघ्र ही मर जाते हैं। यदि किसी कारणवश बच गये, तो भी वे मरे हुएके समान रहते हैं। इस प्रकार देशके गोवंशपर छुरी चलायी जाती है और देशवासियोंका नाश किया जाता है। आवश्यकता है, अच्छे सांड प्राप्त होनेके लिये प्रयत्न करनेकी। देशमें फिर वही पुरानी वृषोत्सर्गकी प्रथा प्रचलित की जाय, सांडोंका प्रचार बढ़ाया जाय, वे धार्मिक सम्पत्ति समझे जायं और उनसे कोई भी न काम लेनेका प्रबन्ध किया जाय, हर तरहसे इनको स्वतन्त्र रखनेकी व्यवस्था की जाय। साथही साथ देशमें सांड़ोंका व्यवसाय भी आरम्भ होना चाहिये। देशके धनी और गवर्नमेण्टका भी ध्यान इधर आकृष्ट होना चाहिये। इससे गोवंशकी विशेष उन्नति हो सकती है। कृषक यदि सांड पालनेके लिये उत्साहित किये जायं, इस कामके लिये उन्हें सहायता दी जाय, तो इससे विशेष फल होनेकी सम्भावना है।

समस्त देशवासियोंका ध्यान, जितना शीघ्र हो सके, इस विषयकी ओर आकृष्ट होना चाहिये। हाईकोर्टके उन फैसलोंका तीव्र प्रतिवाद होना चाहिये जिनके कारण सांड आज म्युनिसिपैलिटियोंकी गाड़ियोंमें जोते जाते हैं। देशी रियासतोंमें साँडके प्रति जो श्रद्धा है उसका यहाँ हम सगौरव उल्लेख करते हैं। वहां सांडपर कोई लाठी नहीं उठा सकता। भारतवासी जनताको चाहिये कि वह अपनी आत्मरक्षाके लिये भारत भरमें उसी वृषोत्सर्गकी पुरातन प्रथाको प्रवर्त करे। सांडोंपर किसी एक आदमीका अधिकार नहीं है। वह धार्मिक पवित्र पशु है। उसकी रक्षा करना समस्त हिन्दू जातिका कर्तव्य है। उसको बेचने या खरीदनेका किसीको अधिकार नहीं है। सम्मिलित शक्तिसे आन्दोलन कर गवर्नमेण्टसे इसके लिये कानून बनवाना चाहिये। अस्तु, अब उत्कृष्ट सांडोंके लक्षण यहां लिखे जाते हैं। योरपके विद्वानोंके मतानुसार वे सांड अच्छे होते हैं जिनका मस्तक छोटा और ऊंचा हो, छाती चौड़ी हो, पीठ लम्बी और सुन्दर हो, गठीला और मजबूत शरीर हो। कन्धा तथा दूसरे अङ्ग भी सुन्दर हों, गर्दन छोटी, गलकम्बल विस्तृत कान न छोटे हों और न बड़े, चमड़ा कोमल और पतला हो, सींग छोटे और गठीले हों, पूंछ लम्बी हो। ये लक्षण अच्छे सांडोंके हैं। सांडोंकी माता अधिक दूध देनेवाली होनी चाहिये। सांडका बड़ा होना बहुत ही आवश्यक

है। तीन वर्षसे छोटा और आठ वर्षसे बड़ा सांड जनन-कार्यके लिये उपयुक्त नहीं है। सांडको अवारा नहीं छोड़ना चाहिये, नहीं तो उसके बिगड़ जानेका भय रहता है। अधिक संगमसे सांडको शुक्र-तारल्यका रोग हो जाता है और वह सांड तथा गाय दोनोंके लिये हानिकारक हैं। धूप सर्दी और वृष्टिसे सांडकी रक्षा करनी चाहिये। उसे अच्छा आहार देना चाहिये, परन्तु गुड़ किम्बा इसी प्रकारकी दूसरी कोई वस्तु नहीं देनी चाहिये। इस प्रकारके आहारोंसे मेदकी वृद्धि होती है और सांड निकम्मा हो जाता है। प्रातःकाल और सायङ्काल परिमाणसे उनको भोजन देना चाहिये। एक पहर दिन चढ़नेके बाद उनको जल पिलाकर थोड़ा खानेको देना चाहिये। रात्रिको घरमें अवरुद्ध रखना चाहिये। सांडको क्या क्या खिलाना चाहिये, कौनसा आहार पुष्टिकारक है, आदि बातोंका ज्ञान साधारणः भारतीय किसानोंको भी है। अतएव इस विषयमें अपनी अभिज्ञतासे भी काम लेना चाहिये।

सांडोंको गायोंसे अलग दूसरे स्थानमें रखना चाहिये। एक सांडसे एक सप्ताहमें ३।४ गौओंका ही संयोग कराना चाहिये। साँड कमजोर हो जाय तो उसको गायोंसे कुछ दिनों तक संयोग न कराना चाहिये। थोड़ा थोड़ा उससे परिश्रम भी कराना चाहिये। परन्तु अधिक परिश्रम न होने पावे, इसका पूरा ध्यान रखना चाहिये। बीच बीचमें कुछ

पुष्टिकारक पदार्थ खिलाते रहना चाहिये। गायके साथ संयोग करनेपर सांडको स्नान करा देना चाहिये और कुछ पुष्टिकारक आहार भी देना चाहिये।

हमारे देशी सांडोंमें हिसार, हरियाना, नागोर, नेलोर, अमृतमहाल, एडन, गुजरात, माण्टगोमरी और मथुराके सांड बड़े अच्छे होते हैं। सांड जितना बड़ा हो, उतना ही अच्छा। मि० आइसा टुइड्ने अच्छे सांडके लक्षण इस प्रकार लिखे हैं :—

" He must be deep and wide in the chest, long and broad in the back and ronnd in the barrel, welt ribbed up and strong in the shoulders, and have massine but not very long legs, large joints, and legs fairly apart to support the body, Compound and solid-looking carcass, short face, with large, prominent eyes, set far apart and broad forehead and muzzle. His neck must be short and stout rising well over the withers into a large hump. The head should be carried erect the dew-lap should be long, but the ears should not be very long"

सातवां अध्याय।

बैल।

कृत्रिम उपायोंसे जो बड़े बच्छे नपुसंक बनाये जाते हैं उनका नाम बैल है। बैल और भैंसे यहां खेतीके काममें आते हैं, गाड़ीमें जोते जाते हैं और भार भी ढोते हैं।

अच्छे बैल और अच्छे सांड प्राय एक ही प्रकारके होते हैं, परन्तु बैल सांडके समान धीरे धीरे नहीं चलते, ये अधिक काम करते हैं तेज होते हैं और शीघ्र चलते भी हैं। इनकी पूंछ छूनेसे दौड़ने लगते हैं।

साधारण बैल उतने परिश्रमी नहीं होते। जिन बैलोका गलकम्बल] बड़ा होता है और जिनके हटका चमड़ा ढीला होता है, उनसे अधिक परिश्रमका काम नहीं होता।

सांडोंको दो ही बार भोजन दिया जाता है, परन्तु काम करनेवाले बैलोंको तीन वार:भोजन देना चाहिते। प्रातःकाल मध्याह्न और सायंकाल भोजन देना चाहिये। सायंकालके भोजनके पश्चात् इनसे काम न लेना चाहिये, किन्तु आराम करनेके लिये छोड़ देना चाहिये। बैलोंको मेहनत करनेके

पश्चात् कमसे कम दो घण्टेके आगे पीछे भोजन देना उचित है ।

इनको प्रतिदिन मलना चाहिये । इनके वे पात्र, जिनमें ये खाते और पीते हैं खूब साफ रखने चाहिये

बैलोंको कड़ी धूपमें, शीतमें और पानीमें रखना हानिकारक होता है, उनके पीनेका जल बहुत ही साफ होना चाहिये ।

जिस बच्छेको हलमें या गाड़ीमें जोतना है, उसको अपनी माताका समस्त दूध पीने देना चाहिये और साथ ही और भी पुष्टिकारक भोजन देनेकी व्यवस्था होनी चाहिये । पश्चिममें गाड़ियोंके बैल बड़े हृष्ट पुष्ट देखे जाते हैं उनका पालन पोषण बड़ी सावधानीसे किया जाता है । वे अपनी माताका दूध पीते हैं और उनको अन्य पौष्टिक भोजन भी मिलता है । राजपूताना और हरियानेमें बैलोंको "गंवार" रांधकर दिया जाता है । गौ और बैलके लिये "गंवार" बड़ा ही पुष्टिकारक है ।

जो बैल हल जोतनेके काममें आवें उनसे उत्पादनका काम नहीं लेना चाहिये, हल जोतनेवाले बैलोंका पुष्ट और मोटा होना जरूरी है । गाड़ी खींचनेवाले बैलोंको ऊंचाई बराबर होनी चाहिये । जो बैल फौजी कामोंमें तोपकी गाड़ी खींचनेके काममें लाये जाते हैं, उनको और भी बलवान् होना चाहिये । इस कामके लिये अमृतमहाल आदिके बैल अत्यन्त उपयुक्त और दक्ष होते हैं ।

पहले यहां एक जोड़ी बैलोंको प्रतिदिन आधा पहरसे अधिक काम नहीं करना पड़ता था। क्योंकि यहां गोवंशकी अधिकता थी। महर्षि पराशरने जो हलके बैलोंकी व्यवस्था बतलायी है। उससे इस बातका पता चलता है :—

"हलमष्टगवं धर्म्यं षड्गवं व्यवसायिनाम्।
चतुर्गवं नृशंसानां द्विगवञ्च गवाशिनाम्॥"

(पराशर)

अर्थात्—"आठ बैलोंसे हल चलाना धर्म है। व्यवसायियोंको छ बैलोंसे हल चलाना चाहिये, नृशंस चार बैलसे हल चलाते हैं और कसाई दो बैलोंसे"

पराशरकी इस उक्तिको सुनकर हृदय कांप जाता है क्योंकि आज भारतमें दो ही बैल भर दिन हलमें जुते रहते हैं। इससे भी आज बैलोंके साथ क्रूरताका व्यवहार किया जाता है। यह सब फल है गोवंशकी उपेक्षाका। भारतवासियोंने गोवंशकी उपेक्षाकी, उनका ह्रास होने लगा। आज उनका मिलना कठिन है। साथ ही दाम भी बढ़ता जाता है, खिलानेके खर्चकी तो कुछ बात न पूछिये। इन्हीं सब बातोंका यह परिणाम है कि आज समस्त भारतमें दो ही बैल भर दिन हलमें जुते रहते हैं। बैलोंके साथ क्रूरता की जाती है और पराशरके कहनेके अनुसार कसाईकी पदवी ली जाती है।

बैल बनानेकी रीति ।

यह रीति निष्ठुर और करुणाजनक है, भारतवर्षमें तथा अन्य देशोंमें भी यह रीति प्रचलित है। भारतीय प्राचीन ग्रन्थोंके देखनेसे पता चलता है कि पहले इस देशमें बैल बनाने की रीति प्रचलित नहीं थी, परन्तु यह रीति आज बहुत दिनोंसे प्रचलित हो गयी है। उत्पादनके लिये कतिपय सांडोंको छोड़कर और सब बैल बना दिये जाते हैं।

इस देशमें बच्छे दोसे छै दांत उत्पन्न होनेके मध्यमें अर्थात् दो वर्षसे पांच वर्षकी अवस्थामें ही बैल बनाये जाते हैं। इङ्गलैण्डमें एक महीनेसे लेकर तीन महीनेके भीतर बच्छे बैल बना दिये जाते हैं। इससे वहांके बैल गायके समान शान्त होते हैं और हृष्टपुष्ट तथा बड़े होते हैं, वहां अण्डकोश काट दिया जाता है। भारतवर्षमें अण्डकोश काटनेकी प्रथा प्रचलित नहीं है, यहांके बैलोंका अण्डकोश कूट दिया जाता, इससे बच्छेको कष्ट तो अवश्य होता है परन्तु उनके मरनेका भय नहीं रहता। बैल बनानेपर वे परिश्रमी द्रुतगामी और कर्मदक्ष होजाते हैं। उनका चौंकना, उछलना कूदना भी बन्द हो जाता है।

बैलके अण्डकोश कूटनेका नाम "बधिया" करना है। छोटी उम्रमें बैलको कभी बधिया न करना चाहिये। समयसे पहले बधिया करनेके कारण बैलोंकी गर्दन पतली पड़ जाती है और

कद भी बढ़ने नहीं पाता। अधिक परिश्रम करनेकी शक्ति नहीं रहती। बधिया करनेसे पहले गौओंसे बैलोंको सदा अलग रखना चाहिये। जहां पशुओंके अस्पताल हों वहां उन अस्पतालोंमें ही बैलोंको बधिया कराना ठीक है। गावोंके साधारण किसान भी बधिया करना जानते हैं। बधिया करनेके बाद दो दिन तक बैलको गर्म दूध और घी मिलाकर देना चाहिये। घीमें नोमके पत्ते भूंजकर उसका अण्डकोशपर सेक करना भी हितकर है। मक्खियोंके न बैठने देनेका विशेष ध्यान रहना चाहिये। मक्खियोंके बैठनेसे घावमें कीड़े पड़ जानेका डर रहता है।



आठवां अध्याय।

अच्छी गौ।

पहली बार बच्चा उत्पन्न करनेके पश्चात् बाछियोंका नाम 'गाय' या 'गो' पड़ जाता है। एक गाय २०।२१ बछड़े तक देती और कोई ४।५ हीबच्छे देकर रह जाती हैं। जो गाय अधिक बच्चे देती है वह श्रेष्ठ समझी जाती हैं। उसके द्वारा बच्छे और दूध दोनों ही अधिक मिलते हैं!

कभी कभी एक गाय दो दो बच्चे तक देती है। एक गायके तीन बच्चेतक होते देखे गये हैं। परन्तु ऐसी घटना बहुत ही कम होती हैं। साधारणतया बच्चा उत्पन्न करनेके तीसरे महीने गाय ऋतुमती होती है और कोई कोई वर्ष दो वर्ष तक ऋतुमती ही नहीं होती। गौएं सांड-संयोगके २६५ वें दिन (Regular labour) साधारण अवस्थामें २४० वें दिन (Premature labour) अपूर्णपक्क काल और ३३० वें दिन (Protracted labour) कठिन प्रसवमें बच्चा जनती हैं।

बच्चे जननेके १० दिनके पश्चात् गायोंका दुग्ध शुद्ध हो जाता है, परन्तु मनुष्योंके खाने योग्य नहीं होता। उस समय तक वह

गाढ़ा नहीं होता और उसमें घीका भाग भी बहुत ही कम होता है। इस कारण गायके बच्चा जननेके २१ दिन बाद उसका दूध पीना चाहिये।

समुद्र मन्थनके समय दो सुरभी गौएं समुद्रसे निकली थीं। सुरभी और नन्दिनी गौके अतिरिक्त कामदुघा नामकी गौको भी भारतवासी बड़ी श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते हैं। कामदुघा गाय, बच्चा पैदा न करके ही दूध देती है। जब चाहे तभी उससे दूध दूह लिया जा सकता है। इसके दूहनेके समय बच्छेकी भी जरूरत नहीं होती।

सुनते हैं भारतमें पहले इस जातिकी भी गाय थीं। उनसे इच्छानुसार अधिक दूध पाया जाता था। इस समय भी एक प्रकारकी गाय कामदुघा नामसे मशहूर है। उस जातिकी गौएं बिना बच्छेके ही दूध देती हैं। परन्तु इनका दूध बहुत थोड़ा होता है। तथापि दूधका आदर बहुत है, क्योंकि वह न तो बच्छेका जूठा होता है और न उसका भागही। कामदुघा का दूध प्रायः देव-सेवाके काममें आता है।

आज यदि हम भारतवासियोंका ध्यान गोपालनकी ओर आकृष्ट हो, यथा-विधि गोसेवा करना प्रारम्भ कर दिया जाय, तो आज भी यहां अच्छी अच्छी दुग्धवती गायोंका पाया जाना कुछ कठिन नहीं। इङ्गलैण्ड, अस्ट्रेलिया आदि देशोंके समान यहां भी आधमन, एक मन और एकमन पांच सेर दूध देनेवाली

गौ मिलने लग जांय। नीचे अच्छी गौओंके लक्षण लिखे जाते हैं :—

अच्छी गौओंके लक्षण।

अच्छी गायें बड़ी होती हैं। उनका माथा छोटा, कपाल सुन्दर शरीरके बाल रेशमके समान चमकीले और चिकने होते हैं। शरीरका चमड़ा पतला और पूंछ लम्बी, चञ्चल होती है, उसके अग्रभागके रोम बहुत ही सुन्दर होते हैं। गौओंके पैर छोटे और शिथिल होते हैं। वक्षःस्थल चौड़ा और सुन्दर होता है, पीछेके दोनों पैर अलग अलग होते हैं। इनके थन बहुत बड़े होते हैं।

अच्छी गायोंका अङ्ग प्रत्यङ्ग गठीला नहीं होता, उनका शरीर शिथिल होता है उनके शरीरका मांस नीचे लटकता हुआ मालूम होता है। अच्छी गाय खाती भी अधिक हैं। और वे जो खाती हैं उसका अधिक भाग दूध बन जाता है। अधिक दूध देनेवाली गौएं प्रायः काले रंगकी होती हैं। कपिला और लाल रंगकी भी गाय अधिक दूध देती हैं। काली, लाल, और धूसर वर्णकी गौएं बलवान् होती हैं। लाल रंगकी गौओंकी पाचनशक्ति साधारणतः अच्छी होती है।

भारतकी अधिकांश गौएं धूसर मिश्रित श्वेतवर्णकी होती हैं। उनमें कतिपय गाय ऐसी होती है जो वर्षके किसी

किसी महीनेमें श्वेत रंगकी मालूम पड़ती हैं। इस प्रकारकी गौएं किसी विशेष जातिके अन्तर्गत नहीं हैं। इनके अधिक दूध भी नहीं होता है। ऐसी गौके शरीरका रंग कुछ पीलापन लिये हुए सफेदसा होता है और कानका भीतरी भाग अत्यन्त पीला होता है, उस गायको नीरोग समझना चाहिये। उसके दूधमें घीका भाग अधिक होता है और उसका दूध भी खूब मीठा होता है। जिस गायके रोम रेशमके समान कोमल हों, वह गाय अधिक दूध देती है और उसका दूध भी मीठा होता है।

जो गाय अधिक दूध देनेवाली होती है उसका स्तन-भाग चौड़ा होता है, उसके थन भी बड़े होते हैं। दूध दूहनेके समय उसके थनसे दूधकी मोटी धार निकलती है और एक प्रकारका पात्रमेंसे शब्द होता है। उसी शब्दके द्वारा उसके दूध अधिक होनेका पता लगता है। उसके थनमें थोड़ा दूध रहनेपर भी दूधकी मोटी ही धारा निकलती है। अच्छी गायोंको दूहनेके लिये एक ही बार बच्छेको थनसे लगाना पड़ता है, परन्तु दूसरी गायोंको दुहनेके लिये बीचमें दो तीन बार उनके थनसे बच्छेको लगाना पड़ता है।

कुछ गौएं ऐसी होती हैं जो दूहनेके समय दूध नहीं देतीं। वे अपने बच्चेके लिये दूध चुरा लिया करती हैं। चाहे कितनेसे ही कितना प्रयत्न क्यों न किया जाय, उन गायोंसे दूध नहीं

निकाला जा सकता। बड़े बड़े कष्टोंके उठानेके पश्चात् वे थोड़ा बहुत दूध दे देती हैं। दूधका रोजगार करनेवालोंके लिये ऐसी गाय एक प्रकारकी विपत्ति ही होती है। थोड़ा दूध देनेवाली गायोंका दूध बड़ी पतली धारासे निकलता है गौओंके बच्छोंको देखनेसे भी उनके न्यूनाधिक दूध देनेका पता लग जाता है। जो बच्छा अत्यन्त दुबला और छोटा हो, तो जानना चाहिये कि गाय बहुत कम दूध देती है। जिस गायके चारों थनोंसे बराबर दूध निकलता है, वह गाय भी अधिक दूधवाली होती है। किसी किसी गायके किसी कारण विशेषसे एक दो थन मारे जाते हैं। अधिक दूध देनेवाली गौएं अधिक दिनोंतक दूध देती हैं, वे एक वर्षसे भी ऊपर १५-१६ महीनेतक दूध देती हैं, परन्तु साधारणतः गायोंके दूध देनेका समय दस महीने है। थोड़ा दूध देनेवाली गाय ४।५ महीने ही दूध देकर आगे दूध देना बन्द कर देती है। यह इसका स्वभाव है, परन्तु उत्तम और पुष्टिकारक भोजन देनेसे सभी गाय दूध देती हैं। ब्यानेतक दूध देनेवाली गौ बहुत अच्छी समझी जाती है।

अच्छी गायोंकी प्रकृति कोमल और शान्त होती है, ये माताके समान समग्र प्राणियोंको स्नेहकी दृष्टिसे देखती हैं। इनमें राग द्वेष नहीं होता, किन्तु स्नेह होता है। एक छोटा बच्चा भी उनके पास जा सकता है। इनको किसी भी

कारणसे क्रोध नहीं आता, अपने बच्चेके पकड़े जानेके समय भी वे क्रोध नहीं करतीं। सभी उनको दूह सकते हैं। ५-६ सेर प्रतिदिन दूध देनेवाली गायकी गणना भी अच्छी गायोंमें है। गृहस्थोंको इसी प्रकारकी गायका पालन करना चाहिये। वे भी गौएं अच्छी होती हैं जिनके दूधमें घीका भाग अधिक होता है। जिन गायोंके दूधमें घीका भाग अधिक होता है। वे दूध कम देती हैं, परन्तु परिमाण कम होनेपर भी उनका वह दूध अधिक दूधकी बराबरी कर सकता है। जिस दूधमें घीका भाग अधिक होता है वह दूध देखनेमें पीला होता है। इस प्रकारके दूधका थोड़ा होना कोई दोष नहीं है। जिस गायके दूधमें घीकी मात्रा भी अधिक हो और वह परिमाणमें भी अधिक हो तो फिर क्या पूछना, वह गाय तो सब गायोंमें श्रेष्ठ है।

संसार प्रसिद्ध विलायती गोपालक मि० मेकडोनल्ड साहब ऐसी दूधवती गौ खरीदनेका अनुरोध करते हैं।

Head :—Large, Muzzle coarse ears rather pendant and longed yellow inside.

Neck:—Long, slender and tapering towards the head, with but little loose skin bellow.

Chest:—Deep but narrowed and strikingly deficent in the substance of girth nibs flat and wide apart.

Back :—Narrow, Joints wide and loose, bones prominent, hips narrow,

Belly :—Large and drooping.

Quarters :—Muscle thin but very firm.

Legs :—Long coarse and inclined to be sickle-hammed.

Tail :—Set on low, haunch drooping to the rump.

Udder :—Large, thin and loose and the milk vein very prominent. इस विषयमें मि० प्रकाशचन्द्र पता देते हैं कि राबर्ट स्काट वार्नसकी Systematic small farming और अमेरिकाके विख्यात गोतत्वविद् प्रोफेसर मि० सी० एच एकलिशकी Dairy cattle and milk production. नामक पुस्तक विशेष पढ़ने लायक है।

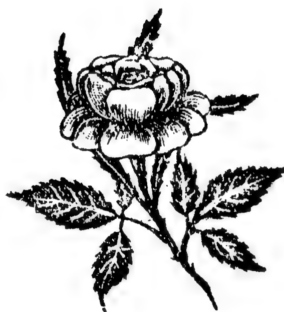
इसके अतिरिक्त गौओंके शरीरमें कुछ ऐसे चिह्न होते हैं जिनसे शुभाशुभका अनुमान किया जाता है। श्रुति परम्परासे उनका भी यहां उल्लेख किया जाता है:—

गौकी पीठपर यदि एक चक्र हो तो उसे 'दल' चिह्न समझना चाहिये। 'दल' चिह्न वाली गौको जो खरीदते हैं उनके घरमें एक गौओंका दल होजाता है। मतलब कि वह शुभ होती है। गौके वक्षः स्थलके दोनों ओर भंवरी (लोमोंका

चक्र) हो तो वह भी शुभ है। एक तर्फ भंवरीसा होना बड़ा अशुभ माना जाता है। ऐसी गौ जिसके बंधजाती है उसके यहां कुछ दिनोंमें गौका नाम निशानही नहीं रहता। गौके कपालके आंखोंसे ऊपरकी पंक्तिमें 'माला' चिह्न होता है उसके खरीदारके अविवाहित वा विपत्निक होनेसे उसे बहुत शीघ्र भार्याकी प्राप्ति होती हैं। और सस्त्रीक हो तोपुनः स्त्री पानेकी सम्भावना रहती है। थुईपर वा उसके ठीक सामने या पीछे 'चक्र' चिह्नका होना भी शुभ है। ऐसी गौ, अपने मालिकके लिये बड़ा लाभदायक होती है। पेटके बीचमें मूत्रनाली के ऊपर एक चिह्न होता है उसको 'नीर' कहते हैं। इस चिह्नको देखकर-गौ खरीदी जाय तो उस गौ स्वामीका वंश नदीके प्रवाहकी तरह बढ़ता है या उसका नाश होजाता है। इसीसे ऐसी गायको लेनेमें लोग भय किया करते हैं। यदि पृष्ट भागपर उर्द्ध मुख चक्र होतो मालिककी भविष्यमें उन्नति होती है और उसी चक्रका मुंह नीचेको हो तो वह अधःपतनका सूचक होता है। गलकम्बलसे कुछ ऊपर गलेके एक ओर— यदि आवर्त हो तो उसे 'लक्ष्मी' चिह्न समझना चाहिये ; वह गौ अपने स्वामीके लिये परम शुभदायक होती है। किन्तु वह मिलती है बड़े भाग्यसे। इन चिह्नोंवाले बैल भी—बड़े शुभ होते हैं और उनका मूल्य भी अधिक होता है। ओठ, जीभ, तालु, ताम्र वर्णके हों, थन छोटे पैर देखनेमें सुन्दर और झूला हुआ

हो, पूंछ जमीनतक लटकती हुई सुन्दर छोटे छोटे बालोंवाली हो, शरीरके बाल रेशमके समान हों वह गौ भी पुराने गोपालोंके विचारसे शुभ लक्षणोंवाली होती है। दांतोंकी संख्या नौ या छ मङ्गलदायक होती है। सात दांत अशुभ समझे जाते हैं। जिन सांडोंके नेत्र काले हों या पीले रंगकी लिये हुए हों शरीर सफेद हो सींग तांबेके रंगके हों—बड़े अच्छे माने जाते हैं।

काले ओठ जीभ और तालू वाले सांड़ गृहस्थोंके लिये अनिष्टदायक होते हैं।



नवां अध्याय ।

वन्ध्या और मृतवत्सा गाय ।

यदि किसी गायका एकबार सांडसे संयोग हो और उसे गर्भ न रहे तो उसे वन्ध्या नहीं समझ लेना चाहिये। क्योंकि कोई गाय विशेषकर बड़ी गाय ५-६ वार सांडका संयोग होनेपर गर्भवती होती हैं। परन्तु इसी प्रकार दो वर्षतक वह गर्भ धारण न करे तो उसे वन्ध्या समझ लेना चाहिये। बहुत अधिक पौष्टिक पदार्थ तथा खली आदि उत्तेजक पदार्थोंके देनेसे गायके गर्भाशयकी चर्बी बढ़ जाती है और उसकी जनन शक्ति जाती रहती हैं। फूंका आदि अस्वाभाविक रीतिसे दूहनेके कारण भी गायकी गर्भधारणकी शक्ति नष्ट होजाती है। स्नायु और शरीरसम्वन्धी रोग तथा दुर्वलता आदिके कारण भी गाएं वन्ध्या हो जाया करती हैं। अधिक परिश्रम उचित आहारका न मिलना और वृद्धावस्था भी गौके वन्ध्या हो जानेका कारण है। कभी कभी गायके पेटमें गर्भ नष्ट होकर सूख जाता है इस कारणसे भी गाय बन्ध्या होजाती है। एक

वंशके सांडसे कईवार संयोग करानेसे भी गायको वन्ध्यत्व-दोष होजाता है।

यदि कोई गाय मोटी होनेके कारण बन्ध्या होजाय तो उसके आहारका परिमाण कम कर देना चाहिये उसको केवल कच्चा घास यासूखा फूस खानेको देना चाहिये उससे अधिक परिश्रम कराना चाहिये। ऐसा करनेसे उसकी स्थूलता कम होजाती है। वङ्ग देशमें मोटी गायको हलमें भी जोत देते हैं किन्तु यह अनुचित है। खुले मैदान जंगलमें घुमानाही गौओंका व्यायाम है। दुर्वल होनेपर गौके गर्भिनी हो जानेकी बहुतकुछ सम्भावना रहतो है। वन्ध्यागौओंको सांडके साथ चरनेको छोड़ते रहनेसे वेऋतुमती होकर गर्भवती होजाती हैं।

यदि इन उपायोंसे भी उनका वन्ध्यापन दूर न हो तो उनको १० ग्रेन सोहागाका चूर्ण ५-६ दिन तक देना चाहिये इससे बहुतकुछ फल होसकता है।

सांडका संयोग होनेपर गायको शीघ्रही खानेको नहीं देना चाहिये और सांडका संयोग होनेके दो दिन पहलेसे दो दिन पीछे तक ५ ग्रेन सोहागाचूर्ण देना परम हितकारी है उसका फल अवश्य होता है।

जो गाय ऋतुमती न होती हो उसको कुछ दिन शुद्ध खली खानेको देना चाहिये, इससे वह ऋतुमती होजाती है। कोठा साफ करनेवाले खाद्य, गेहूंका भूसा दालकी भूसी और मकई

खानेको देनेसे वे शीघ्र ही ऋतुमती होती हैं। फाल्गुनसे जेठ तक साधारणतः गौओंके ऋतुमती होनेका समय है। इन महीनोंकी एकादशी त्रयोदशी पूर्णिमा और अमावस्याकी तिथियोंमें केलेके साथ मुरगीका अण्डा खिलानेसे भी गाएं ऋतुमती होती हैं। बीनौलेके खानेसे गायकादूध बढ़ता है, और वे ऋतुमती भी होजाती हैं।

कोई कोई ५-६ महीने गर्भ धारण करके पुनः उसे गिरा देती हैं। एकबार ऐसा होनेपर यह सदाका साथी एक रोग होजाता है, ऐसी गायको गर्भधारण करनेपर उत्तेजक पदार्थ खानेके लिये नहीं देना चाहिये। गर्भ ग्रहण करनेपर गायको दौड़ाकर गर्भको स्थिर कर लेना चाहिये और उसदिन उसे खानेके लिये न देना चाहिये।

जिस गायके बच्चे उत्पन्न होकर मर गये हों वह यदि पुनः ऋतुमती हो तो उसी समय उसको सांडके पास नहीं ले जाना चाहिये उस समय ठहरकर देख लेना चाहिये कि इसमें ऋतुमती होनेके सब लक्षण पूरे उत्पन्न हुए हैं कि नहीं।

दशवां अध्याय।

बच्छा और बच्छी.

जिन बच्छोंके मुंहके नीचेसे लेकर गलकम्बलतकका चमड़ा ढीला हो, छाती गोल और पेट लम्बा हो मस्तक सुन्दर हों, नासिका छोटी और टेढ़ी हो, पैरकी गाठें मोटी और गला छोटा हो, ये लक्षण अच्छे बच्छोंके हैं। जिस बच्छेकी गर्दन जितनीही छोटी होगी वह उतनाही अच्छा बैल होता है। बछियाकी गर्दनका बड़ा होना प्रशस्त है। उसकी गर्दन जितनी बड़ी होगी, वह उतनीही अच्छी होगी। साधारणतः बछियाका मस्तक छोटा, कान लम्बे आंखें छोटी और परस्पर समीप स्थित हों, गर्दन लम्बी पैर छोटे, पूंछ लम्बी तथा पूछके अग्रभागमें गुच्छेदार बाल होते हैं। अच्छी बाछियोंके लक्षण अच्छे बच्छोंके समान होते हैं। परन्तु उनकी गर्दन लम्बी होतीहै। इनका चमड़ा पतला और बाल रेशमके समान कोमल और चमकीले होते हैं। इनका मस्तक लम्बा होता है। इनके गलकम्बल बड़े नहीं होते उनके आगेके धड़की अपेक्षा पीछेका धड़ ऊंचा और मोटा होता है।

बच्छेका पालन ।

बच्छेके पालन करनेके दो उपाय हैं। एक स्वाभाविक उपाय है, दूसरा कृत्रिम। इस देशमें स्वाभाविक उपायसे ही बच्छोंका पालन होता है। योरोप और अमेरिकामें कृत्रिम उपायसे बच्छोंका पालन किया जाता है। वे अपनी माताओंका थन चूसकर दूध पीने नहीं पाते बहुतसी गायोंके बच्चे उत्पन्न होतेही बेच दिये जाते हैं।

उस समय मेशीनकी सहायतासे गाय दूही जाती है। इस उपायसे मालिकको गायका सब दूध मिल जाता है, गायके थोड़ा भी दूध नहीं रहने पाता। अतएव वे बच्छोंके पालनके लिये कृत्रिम उपायोंका अवलम्बन करते हैं। भारतीय गौओंके पक्षमें दूसरी रीतिका अवलम्बन करना हितकारी नहीं है। ये बच्छेको सामने बिना देखे दूध देतीही नहीं हैं। बिलायती गायोंको ऐसी शिक्षा बहुत दिनोंसे दी गयी है, इस कारण उनको वैसा अभ्यास हो गया है। वे बच्छेको सामने बिना देखे भी दूध दे सकती हैं। भारतीय गायोंको ऐसी शिक्षा देनेके लिये और उनको वैसा अभ्यास डालनेके लिये बहुत समयकी आवश्यकता है। अतएव यहां कृत्रिम उपायोंके अव-लम्बन करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। और न वैसा करना हमारे यहांके अनुकूल ही है। बल्कि हम लोगोकी दृष्टिमें ऐसा

करना निष्ठुरता मालूम होती है। अपने बच्छेके लिये वत्सलतासे पूर्ण होकर गाय स्वयं जो दूध देती है, और जो दूध उससे जबर्दस्ती लिया जाता है—इन दोनों प्रकारके दूधोंमें बड़ा भेद है। बच्छेका पालन बड़े यत्नसे करना चाहिये। क्योंकि उन्हींके ऊपर आगेके गोवंशकी उन्नति अवलम्बित है। उनके रहनेके स्थानको साफ और सूखा रखना चाहिये। उस स्थानमें वायु और प्रकाशके आनेकी पूरी व्यवस्था होनी चाहिये। शीत, धूप और पानीसे उनको बचाना चाहिये। स्वाभाविक उपायोंसे बच्छोंका पालन करना हम लोगोंके लिये कठिन नहीं है। थोड़ीसी सावधानी और व्यवस्था करनेसे ही हम लोग ऐसा कर सकते हैं।

स्वाभाविक उपाय।

उत्पन्न होते ही बच्छेको ऐसे ढङ्गसे रखना चाहिये कि, उसके शरीरमें मिट्टी लगने न पावे। उस समय गाय बच्छेको चाटकर साफ कर देतीं है, उसको चाटनेसे शरीरमें बल आ जाता है और वह खड़ा हो सकता है। जब बच्छा खड़ा होने लगे, तब गायके थनसे थोड़ा दूध निकालकर बच्छेको थनमें लगा देना चाहिये। यदि वह थन चूस न सके तो दो अंगुलियोंकी सहायतासे थन चूसनेकी शिक्षा देनी चाहिये। गाय और बच्छे साथ ही रहने देना चाहिये। एक सप्ताह तक

बच्छेको दूध पी लेनेपर बाकी दूध थनसे निकाल देना चाहिये। क्योंकि उस समयके बचे दूधको उस समय पीनेसे बच्छेको रोग होनेकी सम्भावना रहती है। दूध जमा रहनेसे गायका दूध भी मारा जाता है। प्रति दिन निकाल देनेसे वह बढ़ता है। जो गाय थोड़ा दूध देती है उसके लिये ऐसा करनेकी आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि उसका सब दूध बच्छा ही पी जाता है। जिस बच्छेको सांड बनाना हो उसको मातोका समस्त दूध पीने देना चाहिये। जिससे उसके शरीरमें कोई रोग न होने पावे। तीन सप्ताह तक गायका दूध व्यवहारमें नहीं लाना चाहिये और उतने दिनोंतक दोनोंको साथ रहने देना चाहिये। यदि किसी कारणवश बच्छेको बांधना पड़े और गायका दूध निकालना ही पड़े तब बच्छेको तीन घंण्टेसे अधिक बांधकर नहीं रखना चाहिये। क्योंकि इस समय बच्छा दौड़ता कूदता है और उस समयका दौड़ना कूदना उसके लिये नितान्त आवश्यक और हितकारी है। गाय दूहनेके पश्चात् बच्छेको छोड़ देना चाहिये। बच्छेके तीन सप्ताह होजानेपर उसे थोड़ा घास या फूस खानेको देना चाहिये। एक मासके होनेपर घासके साथ साथ थोड़ी थोड़ी भूसी उसे देनी चाहिये। एक मास तक उसको खूब दूध पीने देना चाहिये, डेढ़ महीनेके पश्चात् घास, शानी, पतला चाराके साथ साथ थोड़ा दला हुआ कोई अन्न देना चाहिये, यदि चना दिया जाय तो वह भिंगाकर

देना चाहिये। राजपूतानेमें गर्मी 'गंवार' भिगाकर और जाड़ेमें रांधकर बच्चोंको खिलाया जाता है। वह उनके लिये बड़ी पौष्टिक चीज है। बच्छेके तीन महीनेके होनेपर दोनों सन्ध्या गायको बिलकुल दूह लेना चाहिये। तबसे बच्छेको भी खूब खानेको देना चाहिये।

जैसे जैसे उसका शरीर और अवस्था बढ़ती जाय, वैसे वैसे इसके खानेकी मात्रामें भी वृद्धिकी जानी चाहिये।

बहुतसे गोपालक इतने क्रूर होते हैं कि गो बच्छोंको न दूध ही पीने देते हैं और न उनको उचित परिमाणमें भोजन ही देते हैं। इससे वे रोगी होकर मर जाते हैं। यदि वे जीते भी हैं तो उनके द्वारा कुछ विशेष उपकार होनेकी सम्भावना नहीं रहती। भोजनके ऊपर ही उनकी प्राकृति प्रकृति गढ़न आदि निर्भर है। अतएव भोजन मिलनेसे वे अच्छे सुन्दर और सुडौल और बड़े होते हैं इस बातको सभी जानते हैं। खानेको पूरा पूरा न देनेसे बच्छे मर जाते हैं, इससे हानिके अतिरिक्त लाभ नहीं होता, बच्छेके बड़े होनेपर उनसे लाभ ही होता है। बच्छेके मर जानेसे गायका दूध कम हो जाता है, उसके बन्ध्या होनेका भी डर रहता है। दूसरे ब्यावतमें उस गायका दूध कम हो जाता है और कोई कोई गाय तो ब्याती ही नहीं। इन सब बातोंका विचारकर बच्छोंका पालन बड़ी सावधानीसे करना चाहिये। गोपालक अपने व्यवहारसे उनके स्वभाव

और अभ्यास आदिको अच्छेसे अच्छा बना सकते हैं। बच्छेकी पीठपर हाथ रखकर उसका दुलार नहीं करना चाहिये। ऐसा करनेसे उनके पक्षमें हानि होती है। वह चौंककर उछलने कूदने लगता है।

बच्छा उत्पन्न होनेके पश्चात् यदि किसी कारणवश गाय को मृत्यु हो जाय तो उस समय बच्छेका पालन कृत्रिम उपायसे ही करना पड़ता है। उनके बैठनेका स्थान साफ होना चाहिये और उनके शरीरको भी संभाल कर रखना चाहिये। किसी दूसरी गायका थोड़ा थोड़ा दूध शीशीकी सहायतासे इस पच्छेको पिलाना चाहिये। परन्तु वह दूध नयी व्यायी गायका होना चाहिये। यदि ऐसा दूध न मिल सका तो बतखका अण्डा एक चम्मचरेंडीका तेल, डेढ पाव दूध, और एक पाव गरम जल मिलाकर दिनमें दो तीन बार देना चाहिये इस प्रकार सेवन करानेसे विशेष लाभ होता है।

बच्छेको सुलाकर अथवा जब वह खड़ा रहे तभी चम्मचसे उसके मुंहमें यह दे देना चाहिये। चौथे पांचवे दिन उसको ऐसा अभ्यास कराना चाहिये जिससे वह स्वयं खाने लगे। पहले पहल वह अपने आप नहीं खायगा। उसमें उसका मुंह पकड़कर पात्रसे लगा देना चाहिये। चौथे दिनसे उसे केवल दूध देना चाहिये और प्रतिदिन दूधका परिमाण थोड़ा बढ़ाते जाना चाहिये। प्रातः मध्यान्ह और सायंकाल इस प्रकार

दिनमें तीन बार उनको खानेके लिये देना चाहिये। उनको ऐसे स्थानमें रखना चाहिये जहां उनका मलमूत्र ठहरने न पावे।

जिनको अण्डे आदिसे घृणा हो वे चावलके मांड़में दूध मिलाकर खिलावें। तीन सप्ताहके बाद बच्छा स्वयं थोड़ा थोड़ा घास या चारा खाने लगेगा। उस समय उसको थोड़ी थोड़ी घास खानेको देनी चाहिये। एक महीनेका हो जानेपर वह घास खाने लगता है। उस समय उसे चारा तो देना ही चाहिये और दूधके साथ चावलका मांड भी मिलाकर पिलाना चाहिये।

डेढ महीनेका होनेपर उसको दला चना या जौ खानेका अभ्यास डालना चाहिये। तीन महीनेके हो जानेपर उसे थोड़ी थोड़ी खली भी खानेको देनी चाहिये। उसके खानेमें थोड़ा नमक और बहुत थोड़ा गन्धक देना चाहिये। ज्यों ज्यों वह बड़ा होता जाय, त्यों त्यों दूध कम करते जाना चाहिये और मांडका देना बढ़ाते जाना चाहिये। उसके छ महीनेके होनेपर दूधका देना बन्द कर देना चाहिये और अन्नका देना भी बन्द कर देना चाहिये, उस समय केवल उसका खाद्य और खली या गंवार देना चाहिये। कितना आहार उनको देना चाहिये इसका नियम नहीं किया जा सकता है, जितना वे खा और पचा सकें उतना ही खाना उनको देना चाहिये। बहुत अधिक या

बहुत थोड़ा खाना नहीं देना चाहिये। अधिक खानेसे रोग हो जाता है, और कम खानेसे दुर्बलता आ जाती है यह बात सभी जानते हैं, योरोपके देशोंमें बच्छेको दूधके बदले आहार इस प्रकार देते हैं:- पहलेदिन नौ सेर जलमें एक सेर तीसी भिंगा देते हैं और दूसरे दिन उसको आगपर चढ़ाकर पकाते हैं, इसी प्रकार एक पाव मैदा जलमें घोलकर पकाते हैं पुनः दोनोंको मिलाकर पकाते हैं और वही बच्छेको खानेके लिये देते हैं। भारतके बच्छोंको भी यह भोजन दिया जा सकता है। यहांके बहुतसे बच्छे गोपालकोंकी असावधानी और मूर्खतासे मर जाते हैं। परन्तु ऐसा होना न चाहिये। उधरकी ओर भी दृष्टि रखनी चाहिये। सर्दी गरमीसे उनकी रक्षा नहीं की जाती, इस कारण भी अनेक बच्छोंको प्राण देने पड़ते हैं। नागोर हरियाना अमृत-महाल आदिकी ओर बच्छोंको पालकर बलिष्ट बैल बनाये जाते हैं।

बछियाका पालन.

बाछियोंका पालन आरम्भिक अवस्थामें सब तरहसे बाल-कोंकी भांति होना चाहिये और बादमें उनको खूब खिलाना चाहिये। जिस प्रकार गायोंके खानेकी व्यवस्था की जाती है, बाछियोंके लिये भी वही व्यवस्था होनी चाहिये। उनका

खिलाना निरर्थक नहीं होता किन्तु उसका फल शीघ्र ही मिल जाता है। जहांतक हो सके उनको पुष्टिकारक भोजन देना चाहिये उनके हृष्टपुष्ट होनेसे कोई हानि नहीं होती है। परन्तु इस बातकी ओर ध्यान रखना चाहिये कि वे अधिक न बढ़ने पावें, क्योंकि अधिक बढ़ जानेसे उनमें अकालपक्वता आ जाने-का भय रहता है। उनके अधिक मोटी हो जानेसे उनकी दूध देनेकी शक्ति कम हो जाती है। इस कारण इनको जो भोजन दिया जाय वह पुष्टिकारक तो हो, परन्तु उससे मेदेकी वृद्धि न होने पावे। यह तो निश्चय है कि खानेके ऊपर ही इनकी उन्नति निर्भर है। उत्तम खाना पीना देनेसे ही गायकी उन्नति होती है। बहुत लोग ऐसा समझते हैं कि गायके झुण्डमें एक अच्छी गाय लाकर रखनेसे ही उस झुण्डकी और उन्नति हो जाती हैं। बड़ी गाय यदि किसी गोशालामें आवे तो दूसरी गायोंके समान उस गायकी देख रेखमें त्रुटि नहीं होना चाहिये। उस गायको उसी प्रकार रखना चाहिये जिस प्रकार कि वह पहले रहती थी, बच्छीपर गोपा-लकका विशेष ध्यान रहनेसे वह गाय होनेपर उत्तम गाय बन सकती है। खोटी गायके दुर्गुण उनमें न आने पावे। क्रोधी गाय दूहनेके समय थन छूने नहीं देती, कोई उसके पास गया कि मारनेके लिये दौड़ी। ऐसी आदत बुरी होती है और बचपनसे ही इसका ख्याल रखना चाहिये। उसपर स्नेहका

हाथ फेरकर अनुगत बना लेना चाहिये। जब उसको मालूम होता है कि मालिक हमपर स्नेह रखता है वह उसके सामने गर्दन झुका देती है। वास्तवमें स्नेहके द्वारा वह अच्छीसे अच्छी गाय बनायी जा सकती है।



ग्यारहवां अध्याय।

अवनतिके कुछ कारण।

जिन आंखोंने वे दिन देखे थे, उन्हीं आंखोंको आज ये भी दिन देखने पड़े। जिस भारतमें पहले बड़ी बड़ी गोशालाएं थीं, आज वही भारत गौओंका ह्रास देख रहा है। भारतकी चारों दिशाओंमें, उत्तर पश्चिम दक्षिण पूर्वकी ओर बड़ी बड़ी गोशालाओंमें लाख लाख गौएं रहा करती थीं। नैमिषारण्य, गोकुल, वृन्दावन आदिकी गोशालाएं भारत प्रसिद्ध थीं। महावीर अलक्जेण्डर जिस समय भारतवर्षसे अपने देशको लौटने लगा, उस समय वह अपने साथ, एक लाख गौएं ले गया था।

परन्तु आज भारतवर्षकी वह दशा नहीं है, आज भारतमें उन बड़ी बड़ी गोशालाओंका दर्शन नहीं होसकता। श्रीकृष्णकी जन्म-भूमि भारतवर्षमें आज गौओंका अभाव हो रहा है। आइन-ए-अकबरीके देखनेसे मालूम होता है कि मुगल सम्राट् अकबरके समयमें यहां ‑) एक आने सेर घी और ‖≠) दस

आने मन दूध बिकता था। परन्तु आजकी दशा देखकर इस बातपर कोई भी विश्वास नहीं कर सकता। आज भारतमें न दूध है और न घी है। अमेरिका स्वीजरलैण्ड, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलेण्ड आदिसे डब्बोंमें ६ लाख पौण्ड जमा हुआ दूध आता है। आज भारतके बालकोंकी रक्षा विदेशोंसे आये हुए तत्वरहित जमे हुए दूधके द्वारा होती हैं। घी-दूधका अभाव होनेसे याग-यज्ञ अतिथि-सत्कार आदिको लोग भूलते जाते हैं। घीको जगह भारतवासियोंको अब सांपकी चर्बी और न मालूम इसी तरहकी कैसी कैसी घृणित चीजें खानी पड़ती हैं। जरा सोचनेकी बात है, जब भारतमें गौओंकी ही कमी होती चली जारही है तब घी-दूध सस्ता कहांसे हो? जो लोग देशसे बाहर भेजी जानेवाली वस्तुओंकी सूची देखते हैं, वे उस सूचीमें क्या देखते हैं? वे देखते हैं कि गो-चर्म बाहर प्रति सप्ताह चला जारहा है और उतरोत्तर उसकी वृद्धि होरही है। गौओंके प्रति भारतवासियोंकी उदासीनताका यह परिणाम है। १८६१ ईस्वीसे १६०० ईस्वी तक प्रतिवर्ष दो करोड़ रुपयेका चमड़ा बाहर भेजा गया था। १६०१ ईस्वीमें ५ करोड़ तीस लाखका चमड़ा विदेश भेजा गया। तबसे अब तो और भी अधिकता हो गयी! इस वृद्धिसे यह बात साफ मालूम होती है कि प्रतिवर्ष किस प्रकारसे गौओंके नाशमें बढ़ती होरही है। यदि यही स्थिति कुछ

और दिनों रही तो भारतसे गौओंका नामतक उठ जाना कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। भारतवासियोंका ध्यान शीघ्रही इस गोनाशके क्रमको रोकनेकी ओर आकृष्ट होना चाहिये, नहीं तो देशमें गौओंका नाम ही रह जायगा। गोवंश नाशके कई कारणोंमेंसे कतिपय कारण यहां लिखे जाते हैं:—

(क) चारेका अभाव

(ख) बिना रुकावटके गौओंका मारा जाना।

(ग) गो-जातिकी स्वास्थ्य-रक्षामें उदासीनता।

(घ) गौओंके रहनेयोग्य स्थान और गोचारण-भूमिका अभाव।

(ङ) अच्छे सांडोंकी कमी।

(च) चमड़ेके व्यवसायकी अधिकता,। (चमड़ेके रोजगारी देशी कसाई और चमारोंसे ठेका कर लेते हैं कि इतने समयमें तुमको इतना चमड़ा देना पड़ेगा। लोभके मारे कसाई या चमार घासमें विष मिला देते हैं, अथवा आटा या अन्य किसी चीजमें विष मिलाकर गौओंको खिला देते हैं या जहां गौएं चरती हैं वहां रख देते हैं। कभी गौओंके घाव पर विष छोड़ देते हैं, कभी कभी तेज छुरी आदि की नोक पर विष लगाकर गौओंके अङ्गमें घुसा देते हैं जिससे उनके रक्तमें विष मिल जाता है, कभी वे चोरी करके

गौ ले जाते हैं। जिस गांवमें गौओंको संक्रामक रोग होता है। वहांके मरे पशुओंके शरीरका कुछ भाग लेकर वे दूसरे गांवमें रख देते हैं। इससे उस गावमें भी वह रोग फैल जात्ता है। चमड़ेके व्यवसायकी अधिकताके कारण इसी प्रकारके अनेक उपायोंका अवलम्बन किया जाता है।)

(छ) गोपालन और गोचिकित्सा करनेकी रीति जाननेके उपायोंका अभाव।

(ज) गौओंकी चिकित्सा करनेवालोंका अभाव।

(झ) गोपालन और गोचिकित्सा सीखने योग्य ग्रन्थोंका अभाव।

(ञ) कसाइयोंके द्वारा गर्भिणी गौओं और बाछियोंका मारा जाना।

(ट) दूध बेचनेवाले, बछड़ोंका पालना अपने व्यवसायके लिये हानिकारक समझते हैं और मांस बेचनेवालोंके हाथ बेच देते हैं और कृत्रिम उपायसे गौओंको दूहते हैं। इससे भी गोवंशका नाश हो रहा है।

(ठ) दूधके लोभसे लोग गौओंसे अधिक दूध निकाल लेते हैं और थोड़ा आहार मिलनेसे बछड़े रुग्न और जीर्ण हो कर मर जाते हैं।

(ड) बङ्गालमें कहीं कहींके दूधके रोजगारी अधिक दूध मिलने के लिये भी फूंका देकर दूध निकालते हैं, इससे गौओंकी गर्भ-धारण करनेकी शक्ति नष्ट हो जाती है। अन्तमें उस गौको भी कसाईके हाथमें जाना पड़ता है।

(ढ) जो गोशालाएं हैं, उनमें सभी गौएं साथ बंधी रहती हैं, उनमें एकको कोई रोग होता है तो वह वहांसे दूसरी जगह बांधी नहीं जाती, इस अज्ञानसे दूसरी गौओंको भी प्राण त्याग करने पड़ते हैं।

(ण) गोपालनको ओर पढ़े लिखे लोगोंकी उपेक्षा-बुद्धि और गोपालन करनेवालोंके पास धनकी कमी और ज्ञानका अभाव ।

(त) अच्छे अच्छे बच्छोंको थोड़ी अवस्थामें बैल बनानेसे भी गो-वंशकी हानि हुई ओर हो रही है।

(थ) धनी अहीर गोपालनका व्यवसाय छोड़ते जाते हैं इस कारण भी गौओंका ह्रास होता जाता है।

(द) जङ्गली जानवरोंके द्वारा भी गोवंशका नाश हो रहा है।

इसी प्रकारके अनेक कारण हैं जिनसे इस समय गौओंका नाश हो रहा है। क्या इस समय इस बातकी आवश्यकता नहीं है, कि भारतके प्रभावशाली मनुष्य इन हृदय दहलाने-वाले कारणोंको दूर करनेको ओर ध्यान दें।

आगराके परलोकवासी राय बहादुर लाला बैजनाथ बी० ए० रिटायर्ड जजने भी अपनी पुस्तकमें पशुओंकी संख्या और उसके घटनेके कारणोंपर खूब विचार किया है। पुनरुक्तिका विचार न कर हम उनकी रायको उपयोगी समझकर यहां उद्धृत करते हैं। लाला साहबने कहा है कि, पहले यहां मांस और चमड़ेके लिये पशु नहीं कटते थे इसलिये स्वाभाविक मृत्युके सिवाय और कोई कारण संख्यामें कमीका नहीं था, अब ये बातें नहीं रहीं। सन् १८७१ ई० में जो हिसाब लार्ड मेओ साहब गवर्नर जनरलके रोबरू पेश हुआ था उसमें दो आदमी पीछे एक पशु दिखलाया गया था। सन् १६०३ व १६०४ ई० में कुल संख्या इस प्रकार थी :—

बैल और सांड	—दो करोड़ पञ्चानवे लाख	(२६५०००००)
भैंसे और भैंस	—एक करोड़ पचासी लाख	(१८५०००००)
बछड़े	—दो करोड़ पचास लाख	(२५००००००)
कुल०	—सात करोड़ तीस लाख	(७३००००००)

इसके पीछे कुल हिन्दुस्तानमें कोई शुमार पशुओंका नहीं हुआ परन्तु संयुक्तप्रांतमें एक नक्शा "क्याटिल कान्फरेंस" में जो गवर्नमेंटने ४ अगस्त सन् १६०६ की थी, इस प्रकार पेश हुआ :—

सांड और बैल			गौएं			भैंसे			भैंस			बछड़े		
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
१८९९	१९०४	१९०६	१८९९	१९०४	१९०६	१८९९	१९०४	१९०६	१८९९	१९०४	१९०६	१८९९	१९०४	१९०६
९९५८२९८	१०९५९८२१	१०१८४३१२	६३१०१७१	६९४७७५५	६२८२६४८	७७५८७०	८६०१४९	६७२६३२	३१८४७५५	३४२१४०४	३४७४९०१	८६८४०३७	९४०१९१६	८९९३६०८

इस नक्शेसे साफ मालूम होगा कि सिवाय भैंसोंके बैल गायों बछड़ों और भैंसोंमें सन् १९०६ ई०में गौओं और बैलोंकी कमी विशेषतः विचारके योग्य है, क्योंकि गौओंमें ६६५७२७ की और बैलोंमें ७७५५०९ की कमी हुई। सन् १९०४ और १९०६ई० के बीचमें और कारणोंके सिवाय अकाल और चारेकी कमी इसके बड़े कारण हुए। इस प्रान्तके हर जिलेकी पशु संख्यामें भेद है, कहीं गौएं बैलोंसे अधिक हैं—कहीं उनके बराबर हैं, कहीं कम हैं, जिन जिलोंमें—जैसे पूर्वके धानकी पैदावारके जिले—चारा दुर्बल करनेवाला होता है, बैल और गाय अच्छी नहीं रह

सकती, पश्चिमके जिलोंमें अच्छी रहती हैं। मामूली तौरपर अगर कोई विशेष कारण जानवरोंकी तादादके घटनेका न हो तो वे अपनी कमी आप पूरी कर लेते हैं। जितने जानवर मामूली तौरपर या अकालमें मरते हैं उनकी कमी पैदायशके जरियेसे थोड़े दिनोंमें आप पूरी हो जाती है। पंजाबमें जो हिसाब जानवरोंकी तादादका लगाया गया था उससे पाया गया कि वहां १९०४ और १९०९ की जांचमें यह हालत हुई किसी जिलेमें कमी हुई किसीमें नहीं हुई कुल पंजाब प्रान्तमें तादाद बढ़ गयी।

	१९०९ में	१९०४ में
गायें	३३८३६४५	३०३६६८
भैंस	२२४१३७१	१०६७५७६
बैल	४२४७४६४	४०७२५७४

इसका कारण यह मालूम होता है कि वहांपर खुश्क मांसकी तिजारत जितनी संयुक्त प्रान्तमें होती है, नहीं होतीं। वहांके डाइरेक्टर साहिब सीगे जरायत अपनी किताब कैटिल और डायरिङ्ग (Cattle and Dairying) में कहते हैं कि "चारेकी कमी और खालोंकी कीमतका बढ़ना बहुतसे जानवरोंके जो न मारे जाते, मारे जानेका कारण है, सिवाय नकारा जानवरोंके बहुतसा हिस्सा उन बच्चोंका जो बंजारोंके हाथ बिकते हैं किसानोंके हाथोंसे जब चारा कम होता है दिल्ली और उसके

पासकी जगहोंमें पैठोंमें चले जाते हैं बछिया जो परवरिश पाकर अच्छी गाय हो जाती, कसाइयोंके हाथोंमें चली जाती हैं अगर घरपर जानवरोंके पालनेकी हालतमें बेहतरी होगी तो फिर गौओंकी कमीकी शिकायत न होगी ;"

संयुक्तप्रान्तमें भी यही हालत है सिवाय इसके वर्माके साथ जो सूखे मांसकी तिजारत है, उसके और हड्डियों और खालोंके लिये बहुतसे जानवार मारे जाते हैं।

यह विषय कई बार संयुक्त प्रान्तकी कौंसिलमें भी पेश हो चुका है और गवर्नमेण्टका ध्यान उस हानिपर जो इससे हुई है, आकर्षित किया गया था। गवर्नमेण्टसे यह प्रश्न किया गया था कि इस प्रान्तके कुछ जिलोंमें जो सूखे मांसका व्यापार बर्म्माके साथ है उससे पशुओंकी तादातमें कमी और उनके दामोंके बढ़नेसे खेतीको जो नुकसान हुआ उसपर गवर्नमेण्टका ध्यान हुआ या नहीं। इसका जवाब गवर्नमेण्टने यह दिया कि हमारी तवज्जोह इधर हुई है, परन्तु यह निश्चित नहीं है कि इससे वह नुकसान जो खेतीको होना वयान किया जाता है हुआ है या नहीं, क्योंकि जो पशु ऐसे व्यापारियोंके हाथ बेचे गये, वे न केवल खेतीके कामके लिये ही बेकार थे किन्तु वे मालिकोंके लिये बोझ भी थे।" फिर दूसरी बार प्रश्न किया गया कि कितने पशु इस व्यापारके लिये मारे गये तो गवर्नमेण्टने उत्तर दिया कि सिवाय आगरेके जिलेके और कहींकी संख्या मालूम नहीं है।

आगरेमें पांच वर्षमें तादाद यह थी। २१७६८। १४८७२। ३३७६०। ५१५१६। २६१६६ फिर सवाल किया गया कि और किन किन जिलोंमें यह व्यापार जारी है और कितने पशु मारे जाते हैं तो इसका जवाब यह दिया गया कि पिछली साल जब यह प्रश्न किया गया तो उसके उत्तरमें कहा गया था कि यह व्यापार बरेली, शाहजहांपुर, अलीगढ़, आगरा फतेहपुर, कानपुर, झांसी, गोरखपुर और गोंडेमें जारी है। अब तहकीकातसे मालूम हुआ कि गोंडे और गोरखपुरमें यह व्यापार जारी नहीं है कानपुरमें यह व्यापार केवल घाटमपुरमें होता है और वहां ढाई सौसे पांच सौ तक पशु मारे जाते हैं। यह बर्म्माकी तिजारत बड़ी हानि कर रही है और प्रति दिन बढ़ती जाती है इसके घटनेकी कोई आशा नहीं। बैलोंकी यह दशा है कि सन् १८६७ ई० में हलमें जोतने लायक बैलकी जोड़ी मेरठमें ७० रु० को, अलीगढ़में ६२ रु० को, लाहोरमें ८० रु० को मिलती थी दिल्लीमें हांसीके बड़े बैलोंकी जोड़ी १२३ रु: को, अमृतसरमें ८० रु० को, दक्षिणमें ४० रु० से १०० रु० तक मिलती थी। सन् १६०४ ई० में उसी जोड़ीके दाम अलीगढ़में ६७ रु०, लाहौरमें ८७ रु० से ११२ रु०, अमृतसरमें ८० रु० से १३५ रु०, नागपुरमें ७० रु० से १०० रु० हो गये। दक्षिणमें कहीं कीमत उतनी ही रही और कहीं बढ़ गयी। सन् १६१२ ई० में और भी कीमत बढ़ गयी। जो

बैल पहले १० को आता था उसके दाम अब ३० रु० हैं और जो किसान उसको खरीदता है वह प्रायः व्यापारीका सदा कर्जदार रहता है। यह सूखे मांसकी तिजारतका बड़ा कारण है कि झांसीमें सन् १९०८ व १९०९ ई० में ४७११ पशु मारे गये, सन् १९०९ व १९१० ई० में १२७४६ मारे गये इसी एक जगहमें इतनी बृद्धि हुई, ललितपुरमें सन् १९०८ से १९१४ तक छ वर्षमें संख्या इस प्रकार थी—३०७४। ८१६३। ७९५७। ५९६७। ३१८६। २१६४; अलीगढ़के जिलेमें कोयलकी म्युनिसिपलटीमें सन् १९०४ व १९०५ ई० में ८७१९ पशु मारे गये, सन् १९०८ व १९०९ ई० में २०६५० मारे गये, सिकन्दरे राऊ जिले अलीगढ़की म्युनिसिपलटीमें सन् १९०५ व १९०६ ई० में ६४०८ और सन् १९०८ व १९०९ ई० में ५८८३ पशु मारे गये। यह ख्याल कि इस व्यापारका कुछ बड़ा असर नहीं और जो पशु मारे जाते हैं, दुर्बल और बेकार होते हैं और उनके मालिक उनके बेचनेको तैयार होते हैं ठीक नहीं मालूम होता, क्योंकि इस हिसाबपर विचार करनेसे मालूम होगा कि केवल आगरेके जिलेमें ही साल भरमें इतने पशु मारे जाते हैं और झांसी, अलीगढ़, ललितपुर, बरेली, पीलीभीत और शाहजहांपुरको मिलानेसे ७६००० पशु साल भरमें मारे जाते हैं और यदि इस प्रान्तके सब जिले शामिलकर लिये जायं तो तादात शायद एक लाखसे कम न होगी। इनमें बहुतसे पशु कामके योग्य और अच्छे भी निकलेंगे और वे

घातकोंके हाथमें केवल मालिकोंकी गरीबीके कारण पहुंचते हैं। यह व्यापार इस देशके लिये सर्वथा हानिकारक और आपत्तिका मूल है, इसका किसीके धर्मसे कुछ छी सम्बन्ध नहीं है न इससे किसी जातिको लाभ है, यह केवल कुछ स्वार्थ परायण लोगोंको मालदार करनेवाला है और सर्वथा बन्द होना चाहिये। यदि लोग अपने पशुओंको घातकोंको न बेचें तो उनसे कोई बलात्कार नहीं ले सकता। म्युनिसिपल बोर्डोंको भी चाहिये कि ऐसे पशुओंपर टैक्स लगावें और इस बातकी पूरी देख भाल रखें कि कोई अच्छा और कामके लायक पशु न मारा जाय। गवर्नमेण्टकी तरफसे और कुछ नहीं हो सकता। पशुओंको कसाइयोंके हाथमें न पहुंचाना लोगोंका काम है। चमड़ेकी रफतनीके सम्बन्धमें ला० बैजनाथजीने लिखा है कि यहांसे हड्डी और चमड़ा बे बना जाता है और फिर वह बहुतसे सुन्दर और आकर्षण करनेवाली वस्तुओंका रूप धारण करके हमारे शरीरों, घरों देवालयों, विद्यालयोंको अलंकृत करके अन्य देशके लोगोंको एकके एक सौ रुपये देकर धनसे परिपूर्ण करता है, और हम वैसेके वैसे रहते हैं। सन् १६०० ई० से दश वर्ष पहले हर साल दो करोड़ रुपयेका चमड़ा बाहर जाता था सन् १६०० व १६०१ ई० में दो करोड़ सत्तर लाखकी, सन् १६०२ व १६०३ में एक करोड़ ६० लाखकी, सन् १६०३ व १६०४ ई० में दो करोड़की, और १६०४ व १६०५ में एक करोड़ ७५ लाख कमाई

हुइ खालें बाहिर गयीं। इन्हीं सालोंमें २,८०,७५,००० २,७०-००,००० २,८०,००,०००। ३१,५०;००,००० को कच्ची खालें बाहर गयीं। इन सबके दाम इस प्रकार थेः—

सन् ई०	दाम रुपयोंमें
१६०० । १६०१	११४८००००००
१६०१ । १६०२	८२३००००००
१६०२ । १६०३	८४४००००००
१६०३ । १६०४	८६४००००००
१६०४ । १६०५	६६०५६०७२

इसके पीछे एक नकशा जो (Review of Trade of India) रिव्यू आफ ट्रेड आफ इण्डियामें दिया हुआ है उससे पाया गया कि—१६०६-७ में ७२६३००० पौण्डकी खाल और चमड़ा बाहर गया। १६०७–८ में इस तादादमें कुछ कमी हुई। १६०८-६ में कुछ बढ़ गयी, १६०६-१६१० में और भी बढ़ गयी और १६१०-११ में १००७६००० खाल और २३३२५००० चमड़ा मालियत ६६६६०० पौण्डका गया और १६११-१२ में १०६०६००० खालें और २३५२५००० चमड़ा मालियत ६२६५००० पौण्डका गया। यह चमड़ेकी तिजारत यहांकी कुल तिजारतका, सौमें ४.६ हिस्सा है। इसमें १६११ में अमेरिका युनाइटेड स्टेट्सको २ करोड़ ६० लाख रुपयेकी, जर्मनीको २ करोड़ ३३ लाख की, आस्ट्रिया हंगरीकी एक करोड़

४२ लाखकी, इटलीको ७६ लाखकी और इङ्गलैण्डको ५२ लाखकी खालें गयीं। इसमेंसे करीब पौंना माल कलकत्तेसे लादा गया। इससे साबित होता है कि यह चमड़े की तिजारत इस देशमें जानवरोंकी तादाद घटनेका कहांतक कारण है। इसीकी वजहसे सैकड़ों जानवर जहरसे मार दिये जाते हैं। इसीके साथ हड्डियोंकी तिजारतपर विचार करो तो १६०६-१०में ५४०१६४२) रुपयेकी १६१०–११में ५४२५-४०७) रुपयेकी, १६११-१२में ६१७६३३५) रुपयेकी हड्डियां बाहर चली गयीं। इनके साथ १६०६-१०में ७६३८३६६)के १६१०-११ में २३४५०४३)के, १६११-१२में २७६३०८५)के सींग या सींगका बुरादा गया। ये सब चीजें इस मुल्कके लिये बड़ी उपयोगी हैं, परन्तु हम थोड़े से लोभके मारे इन्हें बेंचे चले जाते हैं और और लोग उनसे फायदा उठा रहे हैं। पञ्जाबमें चमड़ेकी जमा करनेकी बड़ी जगह रेलके पास हसन अबदाल—रावलपिण्डी लाहोर फिरोजपुर कसूर मुलतान और दिल्ली है। यहां बड़ी बड़ी कोठियोंके गुमाश्ते खालें स्टेशनके पास जमा करके भेजते रहते हैं।

इससे साफ साबित होगया कि अगर बर्माके साथ खुश्क गोश्तकी तिजारत न हो और योरप और अमेरिकाके लिये चमड़ेकी तिजारतमें कमी हो तो इतने जानवर न मारे जावें तो, मुल्कमें न इतनी बैलोंकी कमी हो, और न घी-दूध की। इस

सारी आफतका कारण चारेकी कमी है, क्योंकि जबतक चारा पूरा मिलेगा कोई ज़मीदार अपने जानवरको न बेचेगा और चारा ज्यादा लोगों और गवर्नमेंट दोनोंके प्रयत्नसे हो सकता है, अन्यथा नहीं। इन सब बातोंका विचारकर देश-वासियोंको गोवंशके ह्रास होनेके कारणोंको शीघ्र बन्द करना चाहिये। एकबात और है, देशी नरेशोंका इस विषयमें एक कर्तव्य है, उन्हें अपने यहां यह नियम बना देना चाहिये कि उनकी रियासतोंसे कोई गौ बैल आदि पशु बाहर न जाने पावे। देखा-गया है, दूर दूरसे कसाइयोंके एजेण्ट रजवाड़ोंमें पहुंचकर गौ बैलोंके झुण्डके झुण्ड खरीद लाते हैं।



बारहवां अध्याय।

दूधका व्यापार।

भारतके प्राचीन समयके गोवंशके गौरव तथा मथुरा वृन्दाबन उत्तर, गोगृह आदिके स्मरण करनेसे अथवा उनका महत्व गानेसे इस समय कुछ फल होनेवाला नहीं है। समय आया है कि गोवंशकी सच्ची उपयोगिताके अनुभव करनेका। गोवंशकी उन्नतिपर भारतवासियोंकी उन्नति होगी, भारतवासियोंकी सभी प्रकारकी उन्नति गोवंशकी उन्नतिपर अवलम्बित है, शारीरिक मानसिक आर्थिक आदि सभी प्रकारकी उन्नतियां गोवंशकी उन्नति होनेपर ही हो सकती हैं। इन बातोंका अनुभव करना इस समय प्रत्येक भारतवासीके लिये आवश्यक होगया है। अतएव गोवंश और और गोपालक-वंशकी उन्नति और वृद्धि करनेका प्रयत्न करना चाहिये। समस्त भारतवासियोंको गोवंशकी उन्नतिके लिये कमर कसकर खड़ा होजाना चाहिये। लौकिक और पारलौकिक उन्नतिके आधार गोवंशकी उन्नति करनेके लिये ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र सभी

को साथ मिलकर काम करना चाहिये। भारतवासियो, देखो योरपके रहनेवालोंको, वे गोसेवा किस प्रकार करते हैं, किस-प्रकार गोवंशकी वृद्धिके लिये प्रयत्न करते हैं आपके पूर्व पुरुष ही गोसेवाको किस दृष्टिसे देखते थे ? बस, अपने कल्याणके लिये, अपने देश और जातिके कल्याणके लिये गोवंशकी वृद्धि भारत-बर्षमें पुनः करनी होगी।

कार्तवीय विश्वामित्र आदि राजाओंने एक समय एक एक गौके बदलेमें अपना समस्त राज्य देना चाहा था। परन्तु उन गोस्वामियोंपर राज्यका लोभ कुछ प्रभाव नहीं जमा सका। उन्होंने राजाओंके इस प्रस्तावको घृणाकी दृष्टिसे देखा था। आज भी योरपके रहनेवाले एक गौके लिये लाखसे भी अधिक खर्चते हैं और गोसेवाका फल लाभ करते हैं। इङ्गलेण्ड अमेरिका आस्ट्रेलिया आदिके सज्जन अपनी खास गायके अतिरिक्त अन्य किसी गायका दूध नहीं खाते। उन देशोंके राजाओंके लिये परीक्षित गाय रखी जाती हैं।

भारतकी दशा इस समय अद्भुत है। यहांके राजा भी चाहे जिस किसी गायका दूध खाया करते हैं। आजकल बहुतसे तो ऐसे राजा हैं जिनका ध्यान दूधकी शुद्धिपर बिल-कुल ही नहीं रहता। विलायतसे मक्खन निकालकर जो जमा हुआ दूध आता है वही उनका प्रियभोजन होरहा है। यह दूध खाना क्या है, एकप्रकारका तमाशा है। मक्खन तो योरप-

वाले निकाल लेते हैं और उस जूठे दूधमें चीनी मिलाकर जमाते हैं और जमाकर इस देशमें भेजते हैं। वही मक्खन निकाला-हुआ जमा और महीनोंका पुराना दूध हमारा आहार होता है, यही दूध हमारे बच्चोंको दिया जाता है। इस जमे हुए दूधमें गायका दूध है या भैंस भेड बकरी शूकरी कुकरीका, इधर ध्यान ही देना मानो इस समय हम लोगोंके लिये असम्भव हो गया है। मालूम नहीं, यह फैशनका बुखार कब हमलोगोंसे बिदा होगा। इस फैशनके बुखारसे हमलोग इतने मूर्ख हो रहे हैं कि क्या कहा जाय? हमारा खाना पीना जो कुछ है, इस समय सब फैशनका गुलाम बनगया है। भारतके फैशनबाज बाबुओ, जमा दूध खाकर तुम लोग धन और धर्म तो खोही चुके, साथ ही तुम्हारा स्वास्थ्य भी नष्ट होरहा है। हेल्थ आफिसर इसका कुछ भी प्रबन्ध नहीं कर सकते। शौक हो तो डाकृर साहबको विजट दिया करो, परन्तु उससे कुछ होने जानेवाला नहीं है।

भारतवासियोंके गृहोंकी शोभा गौसे होती है। आर्योंका प्रधान चिह्न गोसेवा है। हम आर्य बनना चाहते हैं, परन्तु आर्योंका प्रधान चिह्न धारण नहीं करते। आर्य बननेकी इच्छा है, परन्तु काम अनार्योंका ही करते हैं। घरमें गायका नाम नहीं, परन्तु नाम लिखते समय हम अपनेको गोस्वामी लिखना नहीं भूलते। गौओंसे परिचय नहीं, परन्तु कहते हैं बड़े अभिमानसे

अपना गोत्र। गोष्ठका तो लोप होरहा है, परन्तु हमलोग गोष्ठीकी उन्नतिके लिये बड़ी बड़ी सभाओंमें गला फाड़ फाड़ चिल्लाते हैं। गौका त्याग करके गोतमका गुण गान करना भारत-वासियोंको ही ठीक मालूम होता है। आज हम गौओंको कटवाकर गोविन्दकी भक्ति करना चाहते हैं, इसी भक्तिके भरोसे गोलोक प्राप्त करना चाहते हैं। गौओंका लोपकर गोपालकी आराधना करना क्या मूर्खता नहीं है ?

इस समय आवश्यकता है कि गोवंशकी उन्नतिके लिये खूब प्रयत्न किया जाय। फैशनके भूतसे पीछा छुड़ाकर अपनी उन्नतिकी ओर ध्यान देनेका उपयुक्त समय आगया है। यदि इस समय भी अपनी पुरानी अभ्यस्त उपेक्षासे काम लिया गया तो इसका परिणाम भयङ्कर होगा और सन्देह नहीं कि बड़े प्रयत्नोंसे रक्षा किया हुआ इस जातिका नाम भी मिट जाय। इस गोवंशकी उन्नतिके लिये स्थान स्थानपर कम्पनी स्थापन करनेकी आवश्यकता है और उन कम्पनियोंके दुग्धालयों (Dairy) की भी प्रतिष्ठा होनी चाहिये। इस समय यद्यपि इन कम्पनियोंको गवर्नमेंटसे सहायता मिलना भी कुछ असम्भव नहीं है। तथापि सरकारी सहायताके भरोसे न रहकर हमें अपनी शक्तिपर कार्यारम्भ कर देना चाहिये। इस व्यवसायमें लाभ होना निश्चित ही है। आजकल अधिकसे अधिक ८ सेर और कमसे कम ४ सेर तक दूध बिकता है। यदि एक

गायका दाम सौ डेढ़ सौ रुपये तक भी रख लिया जाय, तो भी हानि नहीं। ऐसी एक गाय यदि प्रतिदिन ८ सेर दूध देतो १-२ रुपये रोजकी आमदनी हुई। यदि वह गाय १० महीने दूध दे और खाने आदिमें भी खर्च किया जाय तो भी डेढ़ सौसे ऊपर और तीन सौके भीतर आमदनी हो सकती है। बच्छेका दाम जोड़ देनेसे और भी अधिक हो जायगा। गाय भी ज्योंकी त्यों बनी रहेगी। इससे और अधिक क्या लाभ हो सकता है?

इङ्गलेण्ड, अमेरिका, योरप, अस्ट्रेलिया न्यूजीलेण्ड आदि देशोंमें गौओंका मूल्य बहुत ही अधिक है। वहां गौओंकी सेवा करनेवाले नौकरोंको वेतन भी भारतवर्षकी अपेक्षा अधिक देना पड़ता है। गौओंके चारेका दाम भी वहां अधिक है और जमीनकी मालगुजारी भी उन देशोंमें अधिक देनी पड़ती है। विलायती गौओंके समान यदि भारतकी गौएं खिलायी पिलायी जायं, उनकी अच्छी सेवा की जाय तो वे भी उन्हींके समान अधिक दूध दे सकती हैं। विलायती गायोंके १२ सेरसे २० सेर तक दूधमें आधसेर मक्खन होता है, परन्तु भारतकी गायोंके ६ सेरसे १२ सेर तक दूधमें उतना मक्खन निकलता हैं, योरप आदि देशोंमें मक्खन निकालनेमें भी अधिक खर्च करना पड़ता है। तथापि वहां मक्खन और दूध भारतकी अपेक्षा सस्ते बिकते हैं। ऐसी स्थितिमें यदि यह व्यवसाय यहां किया जाय तो क्या उससे लाभ नहीं होगा?

इस देशमें डेरीफार्म न होनेका प्रधान कारण है, हम लोगोंमें व्यवसाय बुद्धिका अभाव। हम लोग व्यवसाय करना या तो जानते ही नहीं या करना नहीं चाहते। गोपालन करनेको हम लोग घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं, हमारे वैश्य अपनी वृत्तिका त्याग करते जा रहे हैं और शूद्रोंकी वृत्ति दासत्व-नौकरी ग्रहण करते जाते हैं। नौकरी मिल जाना ही वे परमपद मिल जाना समझते हैं। हमारे यहांके गोपालन करनेवाले निरक्षर मूर्ख हैं, वे घृणित समझे जाते हैं। जो किसी कामके योग्य नहीं, जो बुद्धि और ज्ञानसे शून्य हैं वही गोपालन करनेके लिये नियत किया जाता है! हमारे यहांके पढ़े लिखे लोग आफि-सोंमें १५—२० की क्लर्की ढूंढ़ते फिरते हैं परन्तु उनको गोपा-लनके व्यवसायसे धन कमानेकी युक्ति नहीं सूझती। योरपके उत्साही कितने ही नौजवान दूर दूर देशोंमें जाते हैं और वहां जाकर वे डेरीफार्म खोलकर धन उपार्जन करते हैं तथा गो-सेवा भी करते हैं।

भारतमें कितने ही ऐसे प्रान्त हैं, जहां बहुत अधिक जमीन थोड़ी मालगुजारी देनेपर मिल सकती है। वहां यदि देशके पढ़े लिखे जवान जायं और गोपालनका व्यवसाय आरम्भ करें तो अवश्य ही वे लाभवान् हो सकते हैं, उनकी नौकरीकी तलाशमें बङ्गलोंपर खानसामोंको हाथ जोड़नेकी दिक्कत भी मिट जा सकती है। वे यदि वैज्ञानिक रीतिसे गोपालन,

उत्पादन आदि कार्य अपनी देख-रेखमें करावें तो शीघ्र ही भारतमें पुनः गोवंशकी उन्नति हो सकती है। यही उपाय है, जिससे भारतको दरिद्रता दूर हो सकती है। रोगोंको दूर करनेका यही सबसे बड़ा साधन है। क्या भारतकी भलाई चाहनेवालोंके हृदयमें इस बातकी महत्ता आवेगी और वे इस कामके लिये तैयार हो जायंगे। यदि हमारे शिक्षितोंका ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ तो निःसन्देह यह मातृभूमिके बड़े अभ्युदयका चिन्ह समझना चाहिये। डेरीफार्म खोलनेके सम्बन्धमें कुछ बातोंपर ध्यान रखना आवश्यक है। पश्चिमके देशोंमें डेरीफार्म स्थापित करनेकी प्रणाली इस समय बहुत प्रचलित है। हमको उसी ढङ्गपर काम प्रारम्भ करना चाहिये। डेरीफार्मकी देखरेख करनेके लिये जो मनुष्य नियत किया जाय उसको इस विषयकी पूरी अभिज्ञता होनी चाहिये। यदि वह ऐसी किसी संस्थामें काम कर चुका हो, अथवा वहां रहकर सब विषयोंकी जानकारी प्राप्तकर चुका हो, तो सबसे उत्तम। उस मनुष्यको परिश्रमी कर्म-दक्ष और सज्जन होना चाहिये। मूर्ख अनभिज्ञोंके भरोसे इस कामको नहीं छोड़ देना चाहिये, क्योंकि मूर्खसे जो खराबी न हो वही कम है। दूसरी बात यह है कि इस कामके लिये मूलधन होना चाहिये, अन्य कार्य्योंके समान इस कामके लिये भी पूंजीकी आवश्यकता है। यदि जमीन खरीदनी न पड़े तो थोड़ी पूंजीसे भी काम चल सकता है। बहुतसे

ऐसे स्थान हैं जहां पट्टे पर जमीन मिल सकती हैं। ऐसा करनेसे अधिक पूंजीकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी, तथापि कमसे कम १०-१२ हजारकी पूंजीका होना तो अत्यन्त आवश्यक है।

ऊंची भूमिमें डेरीफार्म प्रतिष्ठित करना चाहिये, जिसमें कि वृष्टिका उसपर कुछ भी प्रभाव न पड़े। खूब पानी वर्षनेपर भी उस स्थानपर पानी जमा न हो। इसलिये डेरीके लिये ऊंची भूमिकी आवश्यकता है। इस भूमिके चारों ओर जल निकालनेके लिये नाली बनवा देनी चाहिये। गौओंके चरनेके लिये एक बड़ा मैदान होना चाहिये। कमसे कम प्रत्येक गायके लिये ६-७ बीघा जमीन तो होनी ही चाहिये। इस जमीनके एक तीसरे हिस्सेको उनके चरनेके लिये रखना चाहिये और बाकी जमीनमें उनके लिये चारा बोना चाहिये।

डेरीके पास ही गोचारणकी जमीन रखनी चाहिये। दूध न देनेवाली गायोंको और बच्छोंको चरनेके लिये छोड़ देना चाहिये। इसी देशकी अच्छी अच्छी गौएं रखनेसे हम लोगों को सुविधा और लाभ हो सकता है। स्काटलेण्डकी गायको छोड़कर और किसी भी विदेशी गायके लिये भारतवर्षका जलवायु अनुकूल नहीं है, अतएव यहींकी गौओंको डेरीमें रखना चाहिये। हां, यह जरूर देख लेना चाहिये, कि डेरीमें रखी जानेवाली गाय खूब दूध देती है कि नहीं। कमसे कम १०

सेर दूध देनेवाली गायको डेरीमें रखना चाहिये। यदि कोई गाय इससे भी अधिक दूध देनेवाली मिल जाय, तो बात ही क्या है। कोई कोई गाय १०-१२ महीने और कोई कोई १६ महीने तक दूध देती हैं और कोई ऐसो भी होती हैं कि ६ ही महीने दूध देकर दूध देना बन्द कर देती हैं। इनमें अधिक दिनोंतक दूध देनेवाली गौएं अच्छी होती हैं। इस प्रकारकी गाय खरीदकर रखनेमें पहले कुछ अधिक रुपया लगेगा। इसमें सन्देह नहीं, परन्तु इसका फल बहुत उत्तम होगा। क्योंकि डेरीकी उन्नति अच्छो अच्छी गायोंके रखनेपर ही अवलम्बित है।

डेरीकी अच्छी, अधिक दूध देनेवाली गाय जिस समय दूध देना बन्द कर दें, उस समय उसको बेचना नहीं चाहिये। ब्यानेके तीन चार महीनेके पश्चात् गाय गर्भधारण करती है। गर्भधारणके पश्चात् भी वह ९-१० महीने तक बराबर दूध देती जाती है। कोई कोई गाय ब्यानेके दो तीन महीने पहले दूध देना बन्द कर देती है और कोई कोई तो दो ही चार दिन पहले दूध देना बन्द करती है। फिर कुछ ही दिनोंके लिये अपनी जानी पहचानी गायको बेच देना उचित नहीं है। क्योंकि न मालूम फिर वैसी गाय मिले कि नहीं, और अच्छी गाय ढूंढ़नेके लिये कितना परिश्रम करना पड़े। इन बातोंकी ओर ध्यान देकर उस गायको न बेचना ही अच्छा है। जो गाय कुछ दिनों

पहले तक दूध देती जाती है, उसके बेचनेका तो कोई कारण नहीं है।

गायोंपर प्रेम करनेसे वे शीघ्र ही पोसमान लेती हैं। वे मालिक और गोपालकको पहचान लेती हैं, ऐसी दशामें उनको डेरीसे बाहर निकालना उचित नहीं है। डेरीकी गायोंके खानेके लिये प्रति दिन ठीक समयपर देना चाहिये। इनके स्नान आहार और व्यायाम आदि सभीके लिये समय नियत कर देना चाहिये। इनको सर्वदा स्वच्छ रखना चाहिये। उनके शरीरमें कीचड़ आदि न लगे इसके लिये बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। इनकी सेवाके लिये नौकर नियतकर देना चाहिये।

प्रत्येक डेरीमें सांड भी रखने चाहिये। सांड जितने ही अच्छे होंगे, उतने ही अच्छे बच्छे भी होंगे, गोवंशकी उन्नतिमें सांडोंका महत्व कितना है यह बात पहले दिखलायी जा चुकी है। हिसार, काठियावाड़, गुजरात आदि देशोंके उत्तम उत्तम सांड रखने चाहिये। यदि किसी अच्छी जातिकी गाय बनानेके लिये सङ्कर गाय उत्पन्न करनेकी आवश्यकता मालूम पड़े, तो वह भी करना चाहिये उसका उपाय अन्यत्र लिखा है।

कामकी बातें।

नीचे योरपके डेरी फार्मोंके नियम इसलिये लिखे जाते हैं कि, हमारे यहांके डेरी-फार्म-सञ्चालक भी इनसे लाभ उठावें।

हमारे यहांके डेरी फार्मोंके प्रबन्धकोंको भी अपनी गायोंको समय पर दूहकर समयपर खाना देकर और समयपर लोगोंके पास दूध पहुंचानेका विशेष प्रबन्ध कर लेना चाहिये। नियम और ईमानदारीके साथ काम चलानेसे अवश्य लाभ होगा।

Cow keeping in india के लेखक मि० ईसा ट्विड् कहते हैं कि, भारत भी वास्तवमें उन्हीं देशोंकी श्रेणीमें गिना जाता है जो दूध आदिका काम करनेके लिये सब तरहसे उपयुक्त हैं। यहां जमीन और खान पानकी चीजें भी सस्ती मिलती हैं, कम वेतनपर मजदूर भी मिल जाते हैं और भारतकी गौओंका दूध अमेरिका और इङ्गलैण्डकी अच्छीसे अच्छी गायके सर्वोत्तम दूधके समान है। दूधकी उत्कृष्टताके सम्बन्धमें भारतकी अधिकांश गौएं जर्सी—गौओंकी भांति होती हैं। इङ्गलैण्ड और अमेरिकाकी अपेक्षा भारतमें दूध और मक्खन अधिक दामोंपर बिकनेके कारण कारबारमें खासी आमदनी होती है।

आगे चलकर मि० ईसा ट्विड्, जो मनुष्य गोरसका कारबार चलाना चाहते हैं, उन्हें सलाह देते हैं कि, पहले वे इङ्गलैंड या भारतके सरकारी दुग्धालयोंमें वर्ष भर काम करलें और इस कामका पूरा अनुभव तथा ज्ञान प्राप्त करलें। दैनिक व्यवहार और पुस्तकोंसे ज्ञान प्राप्तकर मनुष्य अपने घरेलू कामोंका सम्पादन सफलता पूर्वक कर सकता है, किन्तु दूधका लम्बा चौड़ा कारबार करनेके लिये प्रकृत रूपसे आभ्यासिक

ज्ञान प्राप्त करना बड़ा आवश्यक है। यदि कोई दूधके व्यवसायसे अपने कुटुम्बका पालन करना चाहें तो बड़े विस्तारसे दूधका व्यवसाय करना चाहिये। गायोंकी संख्या उसके पास ५० से १०० तक होनी चाहिये। जमीन खरीद्कर उसपर इमारत बनानेके बदले भाड़े लेनेसे रकम कम लग सकती है। ३० गौओंको रखकर डेरीका काम चलानेमें १०।५ हजार रुपयेकी रकमसे ही काम चल जायगा।

यहां हम डेरी फार्मके काममें सफलता लाभकर मालोमाल बनजानेवाले मि० केवेण्टर साहबकी राय भी लिखना आवश्यक समझते हैं। आपका मत है कि थोड़े प्रयत्नसे भी अधिक फायदा डेरीके काममें हो सकता है। इसके लिये बहुत मेशीनोंकी आवश्यकता नहीं। प्रायः एक हजारमें जरूरी मशीने आ जायंगी। उक्त साहबने हिसाब लगाकर बताया है कि ८८८।-)॥ आनेके यन्त्रोंकी सहायतासे २५ मन दूधका कारखाना चल सकता है। मामूली कारखानोंमें मेशीनके बिना भी काम चल सकता और उसमें लाभके सिवा हानिका काम नहीं। भैंसके ६ सेर दूधमें आध सेर और गायके १३॥ सेर दूधमें आध सेर मक्खन हिन्दुस्तानी ढङ्गसे निकाल सकता है। किन्तु इस विषयमें नयो वैज्ञानिक रीतिका आश्रय लिया जाय तो गायके ११ सेर और भैंसके ७॥ सेर दूधसे ही आधसेर मक्खन निकल सकता है। Dairy farming in india

नामक पुस्तकमें लिखा है कि दूधको कोयलेकी हलकी आंचसे उबाले। उबालते समय दूधको चलाते रहना चाहिये जिससे वह जल न जाय और खूब गर्म हो जाय। जब वह अच्छी तरह उफान आकर गरम हो जाय तब पात्रमें भरकर ठण्ढे पानीमें उसको लटका दो और फिर भी चलाते रहो। बादमें एक ऐसे पात्रमें कि जिसमें वर्फका पानी भरा हो उस दूधको भर दिया जाय और छै घंटेतक वह उसमें रहे। पश्चात् उसे उस पानीसे निकालकर दूसरे पात्रमें डाल दिया जाय और एक पांच फीटके बांसके टुकड़ेको एक ओरसे चिराकर उसे दूधमें डाल रस्सीसे मथा जाय और यों आध घण्टेमें सब मक्खन निकल आवेगा। यह तो हुई मक्खनको क्रिया और घी निकालनेकी रीति हमारे यहां प्रशस्त है ही कि दूधको मन्दी आगपर गरम करके पात्रमें ठण्ढा कर लिया जाय और कुछ गर्म रहनेकी हालतमे उसमें थोड़ा दही देकर ढांक दिया जाय ४।५ घण्टे बाद दही जम जायगा। बादमें उसमें दो हिस्सा जल मिलाकर मथनी (झरनी) से मथा जाय सब घी अपने आप निकल आवेगा। छाछ बाकी रह जायगी। डेरी फार्ममें दूध बिक जाय वह तो बिक ही जाय, जो बाकी रह जाय, उसीको आवश्यकताके अनुसार इन रीतियोंसे मक्खन या घृत तैयार करनेके काममें ले लेना चाहिये। बम्बईके एलफिनस्टन कालेजके हेड पण्डित स्वर्गीय पं० नानूरामजी शास्त्रीने एकबार

हमसे कहा था कि यदि राजपूतानेमें कई जगह व्यवसाय बुद्धिसे डेरीका काम आरम्भ किया जाय तो बड़ा लाभप्रद हो सकता है। शास्त्रीजी उसकी तरकीब भी बताया करते थे। उनका कथन था कि, हजार पांच सौ बीघा जमीनके दो खेत मालगुजारीपर लेकर उनमें १०० या ५० अपनी शक्तिके अनुसार गौएं रखी जायं, वहां खूब मजबूत बाड़ बनाकर उनके रहनेका स्थान बना दिया जाय। 'दिनमें गौएं खुली चरें। एक चौमासे उन खेतोंमें गौओंके बैठनेसे जमीनमें खादकी पुट लग जायगी और उसकी उपजाऊ शक्ति दूनी बढ़ जायगी। एक खेतमें गौओंके चरनेका घास खड़ा हो जायगा और दूसरेमें खेतीका अन्न। दूसरे वर्ष घासवाले खेतको जोतकर बो दिया जाय। यों करनेसे थोड़े ही समयमें लगा हुआ खर्च वसूल हो जायगा और फिर लाभ ही लाभ होगा। दूध बिकनेका ढङ्ग न हो, वहां घी बनाकर बेचा जाय। छाछ वहांके गरीबोंको बांट दी जाय। यह एक विचार है जो सब देशवासियोंके सामने उपस्थित किया जाता है। जिस प्रांतमें जिनको जहां जैसी सुविधा हो उन्हें वैसे ही डेरी फार्म खोलकर गोवंशकी रक्षा करनी चाहिये। अमेरिकाके सेण्ट अलबनसमें दूध और मक्खनके एक कारखानेमें ३००० गायोंका दूध प्रतिदिन आता है और एक कमरेमें १०।१२ टन तक मक्खन तैयार होता है। एक टन प्रायः अट्ठाइस मनका होता है। लन्दनमें Aylesbury आदि

डेरी कम्पनियोंकी गाड़ी घर घर दूध और मक्खन पहुंचा देती हैं। लन्दनके इर्द गिर्द १५० मीलके भीतर ५००० से अधिक डेरी कम्पनियां हैं और दस लाख गैलन दूध वहां बाहरसे आता है। हमारे यहां प्रयत्न इस बातका होना चाहिये कि, प्रत्येक गृहस्थ अपने यहां गौ रखे किन्तु जिन शहरों या गावोंमें सब लोगोंके लिये गौओंका रखना सहज नहीं है वहां डेरी फार्म खोलकर दूध घीकी आवश्यकता पूरी की जानी चाहिये।

योरपके डेरीफार्मोंके नियम।

डेरीफार्म, हमारे यहांकी चीज नहीं है। गोवंशकी अधिकतासे पहले हमारे यहां इसकी आवश्यकता भी नहीं थी अब आवश्यकता हुई है। योरपमें डेरीफार्म खुले हुए हैं इसलिये उनके चुने हुए नियम यहां लिख दिये जाते हैं:—

(१) डेरीके अध्यक्ष डेरी सम्बन्धी नयी नयी बातोंका ज्ञान, पुस्तक तथा सामयिक पत्रोंके द्वारा प्राप्त करते हैं।

(२) गाय, गोपाल, और गायोंके रहनेका स्थान तथा गोशाला संबन्धी अन्य पदार्थ स्वच्छ रहें, इस ओर डेरीके अध्यक्ष तीखी नजर रखते हैं।

(३) संक्रामक रोगी गौ, और उसका दूध अलग ही रखे जाते हैं।

(४) गोशालामें केवल गाय ही रखी जानी चाहिये, अन्य कोई दूसरी वस्तुओंका रखना वहां उचित नहीं है।

(५) गोशालामें प्रकाश और हवा निर्वाधरूपसे आनी चाहिये , गोशालामें नालीका भी प्रवन्ध होना चाहिये ।

(६) भींगी जमीनमें तथा खराब स्थानमें गायोंको रखना अनुचित है ।

(७) तीखी गन्धकी कोई भी वस्तु गोशालामें नहीं रखनी चाहिये । गोशालासे दूर गोवर इकट्ठा करवाना चाहिये और उसको ढांककर रखना चाहिये । गोशालासे गोमूत्र गोबर आदि शीघ्र शीघ्र हटवा देनेका प्रबन्ध करना चाहिये ।

(८) बच्छेको गोशालामें एक वार या दो वार प्रतिदिन खोल देना चाहिये, इसलिये कि वह कूद फांदले । उसके स्वास्थ्यके लिये इधर उधरकूद लेना बड़ा उपयोगी है ।

(९) दूहनेके पहले सूखा या धूल मिला हुआ आहार गायको न देना चाहिये । जिसमें धूल लगी हो ऐसे खाद्यको धोकर साफ करलेना चाहिये ।

(१०) गायोंको दूहनेके पहले उनके रहनेके स्थानमें खूब वायु आनेका प्रवन्ध करना चाहिये । गरमीके दिनोंमें वहांकी जमीनपर पानीका छिड़काव कर देना चाहिये ।

(११) गोशाला अथवा डेरीके जिसस्थानमें दूध रखा जाता हो, उस स्थानको खूब साफ रखना चाहिये ।

(१२) निपुण-डाक्टरके द्वारा वर्षमें एक दो वार गायोंको परीक्षा करा लेनी चाहिये ।

(१३) यदि कोई गाय बीमार हो जाय तो उसे शीघ्र ही गायोंमेंसे निकालकर बाहर बंधवा देना चाहिये और उसका दूध भी अलग रखवा देना चाहिये। उसके अच्छी होनेपर पुनः गायोंके गोलमें बांध देना चाहिये।

(१४) दूध दूहनेके पहले और भोजन देनेके पहले उन्हें दौड़ाना नहीं चाहिये। दूहनेके स्थानपर तथा भोजनके स्थानपर गायोंको धीरे धीरे लेजाना चाहिये।

(१५) निर्दयता पूर्वक गायोंको दौड़ाना, चिल्लाकर उन्हें डराना अथवा अन्य किसी उपायसे दिक दिकाना अच्छा नहीं है। गायोंको बरसात, धूप और शीतमें बाहर नहीं रखना चाहिये।

(१६) उनके भोजनमें अकस्मात् परिवर्तन करना उचित नहीं।

(१७) गायोंको खूब खिलाना चाहिये ताजा और उत्तम भोजन देना चाहिये। सड़ा गला भोजन उनको कभी नहीं देना चाहिये।

(१८) उत्तम स्वच्छ और ताजा जल उनको पीनेकेलिये देना चाहिये। अशुद्ध या मैला जल उनको कभी नहीं देना चाहिये।

(१९) गोशालामें नमक ऐसे स्थानपर रख देना चाहिये, जिससे वे इच्छानुसार नमक खा सकें।

(२०) प्याजा,बाँधी गोभी अथवा मूली, गाजर आदि दूध दूहनेके पश्चात् ही देना चाहिये। अन्य समयोंमें देनेसे हानि होती है।

(२१) गायके शरीरको खूब साफ रखना चाहिये। यदि रोमोंके कारण उनके शरीर साफ रखनेमें बाधा हो तो रोम काट देने चा हेये।

(२२) प्रसवके २० दिन पहले और ५ दिन बादका दूध व्यवहारमें नहीं लाना चाहिये।

(२३) दूध दूहनेवालेको सब प्रकारसे स्वच्छ रहना चाहिये। गाय दूहनेके पहले तमाकू खाना या पीना नहीं चाहिये। हाथ खूब धोकर तथा सूखे कपड़े से पोंछकर गायको दूहना चाहिये।

(२४) गाय दूहनेके पहले गाय दूहनेवालेको स्वच्छ वस्त्र पहन लेना चाहिये। अन्य समय वह उस वस्त्रको रख दे और केवल गाय दूहने हीके समय उस कपड़ेको पहने।

(२५) दूहनेके पहले गायके थन धोकर साफ कर देने चाहिये और भींगे कपड़े से उन्हें पोंछ लेना चाहिये।

(२६) शान्ति, स्वच्छता और शीघ्रतासे गाय दूहनी चाहिये। क्योंकि व्यर्थका समय कटाना अच्छा नहीं लगता। प्रतिदिन ठीक समयपर दूहना चाहिये।

(२७) गायके प्रत्येक थनका कुछ दूध गिरा देना चाहिये, क्योंकि वह केवल जल ही होता है। उसमें कुछ सार पदार्थ

नहीं होता। वह दूसरे दूधके साथ यदि मिल जाय तो, वह दूध भी नष्ट हो जाता है।

(२८) किसी गायके दूहनेके समय उसका दूध लाल-रंगका निकलने लगे अथवा अस्वाभाविक वर्णका निकलने लगे तो उस समस्त दूधको छोड़ देना चाहिये।

(२९) सूखे हाथसे गायको दूहना चाहिये और ध्यान रखना चाहिये कि दूहनेके समय दूहनेवालेके हाथमें दूध न लग जाय।

(३०) गाय दूहनेके समय बिल्ली कुत्ते आदिको वहांसे हटा देना चाहिये।

(३१) यदि किसी कारणवश दूधका कुछ अंश खराब हो जाय तो केवल उसका उतना ही अंश नहीं फेंकना चाहिये। किन्तु वह समस्त दूध खराब हो जाता है और वह व्यवहारके योग्य नहीं रहता।

(३२) प्रतिदिन प्रत्येक गायके दूधका वजन कर लेना चाहिये, और प्रति सप्ताहमें एक वार मक्खनका वजनकर लेना चाहिये। उस वजनका हिसाब भी रखना चाहिये।

(३३) गाय दूही जानेके पश्चात् शीघ्र ही दूध दूसरे घरमें लेजाना चाहिये, वह घर साफ हो और उसमें वायुका प्रवेश निर्वाध हो।

(३४) दूध दूह लेनेके पश्चात् दूधको साफ करके किसी स्वच्छ कपड़ेसे अथवा धातु पात्रसे ढक देना चाहिये।

(३५) दूध दूह लेनेके पश्चात् शीघ्र ही ठण्ढाकर लेना चाहिये। यदि इसके उपयुक्त पात्र शीघ्र न मिल सके तो उस दूधको स्वच्छ वायुपूर्ण घरमें रख देना चाहिये। यदि उस दूधका चलान करना हो तो ४५ डिग्रीके परिमाणमें और यदि वहीं बेचना हो तो ६० डिग्रीके परिमाणमें ठण्ढा करना चाहिये।

(३६) दूध दूहनेके पश्चात् जबतक दूध ठण्ढा न हो जाय, तबतक उस पात्रका मुंह ढकना न चाहिये।

(३७) यदि दूधके पात्रका मुंह बन्द करनेके लिये कोई पात्र न हो तो किसी स्वच्छ वस्त्रसे उसका मुंह ढक देना चाहिये। जिससे उसमें कोई कीट पतङ्ग घुसने न पावे।

(३८) यदि दूध दूकानमें रखना हो तो स्वच्छ, शुष्क तथा शीतल वायु पूर्ण गृहमें ताजे जलवाले चौबच्चामें दूधका पात्र रख देना चाहिये। इस चौबच्चेका जल प्रतिदिन बदलना चाहिये। यदि उस दूधसे क्रीम निकालना हो तो टीनके मन्थन यन्त्रके द्वारा दूधको मथना चाहिये।

(३९) रातके दूधको छायामें रखना चाहिये, जिसमें वृष्टि आदिका जल उसमें न पड़ने पावे। गरमीके दिनोंमें ठण्ढे जलके चौबच्चेमें रखना चाहिये।

(४०) ताजा दूधको ठण्ढा किये हुए दूधके साथ मिलाना उचित नहीं है।

(४१) दूधको जमने नहीं देना चाहिये।

(४२) किसी प्रकार दूध नष्ट न होने पावे, इसलिये दूधके साथ किसी अन्य पदार्थको मिलने न देना चाहिये ।

(४३) उत्तम दूधकी बिक्री करनी चाहिये, ग्राहकोंको खराब दूध कभी नहीं देना चाहिये ।

(४४) यदि दूध दूर किसी स्थानपर भेजना हो तो स्प्रींग-दार वर्तनमें रखकर भेजना चाहिये ।

(४५) गरमीके दिनोंमें गाड़ीपर रखकर यदि दूध कहीं भेजना हो तो पात्रका मुंह भीगे कपड़ेसे अथवा कैनवससे बन्दकर देना चाहिये ।

(४६) डेरीमें जो पात्र रखे जांय, वे सभी स्वच्छ तथा धातुके हों। पात्रका भीतरी भाग खूब साफ रहे इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये । जो पात्र जोड़े हुए हों उनमें उनके जोड़का स्थान खूब मजबूत होना चाहिये ।

(४७) जिन पात्रोंमें रखकर दूध बेचा जाता है उन पात्रोंको भी खूब साफ रखना चाहिये । मक्खन उठाये हुए दूधपर विशेष ध्यान रखना चाहिये । मट्ठेमें डालनेका जल जिस पात्रमें रखा जाता है उस पात्रको भी खूब सफाई रखनी चाहिये ।

(४८) बाहरसे जो वर्तन डेरीमे आवें, उनको उसी समय साफ करवा लेना चाहिये । इसीप्रकार मक्खन निकाले हुए दूधके पात्र तथा अन्य पात्रोंको भी साफ करवा लेना चाहिये ।

(४६) डेरीके सब पात्रोंको गरम जल डालकर साफ कर लेना चाहिये, गरम जलके साथ मैल दूर करनेवाला पदार्थ मिलाकर उन पात्रोंको बाहर भीतर साफ करना चाहिये। इन सब कामोंमें सदा स्वच्छ जलका व्यवहार करना चाहिये।

(५०) धोये हुए पात्रोंको वायुपूर्ण स्थानमें सूर्यकी गरमीसे सुखा लेना चाहिये।



तेरहवां अध्याय।

गोशाला वा गोगृह।

इसी सिलसिलेमें गोशाला वा गोगृह कैसा होना चाहिये इस विषयपर विचार किया जाता है। महर्षि पराशरने गोशाला बनानेकी विधि यों लिखी है :—

"गोशाला सुदृढ़ा यस्य शुचिर्गोमय-वर्जिता,
तस्यवाहाबिवर्धन्ते पाषाणैरपि वर्जिता।
शकृन्मूत्र-विलिप्ताङ्गा वाहा यत्र दिने दिने,
निःसरन्ति गवां स्थानात् तत्र किं पोषणादिभिः।
पञ्च-पञ्चायता शाला गवां वृद्धिकरी मता,
सिंहस्थाने कृता सैव गो-नाशं कुरुते ध्रुवम्।

महर्षि कहते हैं कि गोशाला दृढ़ तथा गोमय रहित बनवानी चाहिये। गोशाला ५५ हाथकी लम्बी होनी चाहिये। जहां हवा और प्रकाश आ सके, वैसे ऊंचे स्थानपर गोशाला बनवानी चाहिये। सीडके स्थानमें गोशाला कभी नहीं बनवानी चाहिये। गोशाला इस प्रकार बनवानी चाहिये जिसमें

वहां गोमूत्र आदि रहने न पावें। गोमूत्र आदिके निकलनेके लिये नाली बनवा देनी चाहिये। गोशालामें गौओंको इस प्रकार बांधना चाहिये कि जिससे वे अपने स्थानके इधर उधर घूमने न पावें। वे इच्छा पूर्वक उठ बैठ सकें, सो सकें, परन्तु घूम न सकें। उस दशामें उनका मूत्र आदि नालीके द्वारा अनायास ही निकल जा सकता है और गोशाला भी स्वच्छ रह सकती है।

गौके रहनेका घर यदि उत्तर-दक्षिणकी ओर लम्बा हो और पूर्व-पश्चिमकी ओर चौड़ा हो और उसमें दो दरवाजे हों तो पूर्व और पश्चिमकी ओर सिर करके श्रेणीसे गायोंको बांधना चाहिये। बीचमें दो फीट या सवा फुट चौड़ी नाली बनवानी चाहिये, जिससे दोनों ओरकी गायोंका मूत्र आदि उसमें होकर निकल जाय। उनके दूहनेके लिये भी स्थान नियत कर देना चाहिये। अथवा बीचमें खानेके लिये स्थान बनाकर गाय आमने सामने भी बांधी जा सकती है। इसके लिये जहां जैसी सुविधा हो, वैसा कर लेना चाहिये।

यदि गाय इस प्रकार बांधी जाय जिससे उनका मस्तक दिवालसे लगता रहे, तो फिर गायोंको घूमने फिरनेका अवसर नहीं मिलता। गायोंको खाना देनेके लिये मिट्टी लकड़ी अथवा टीनका टब व्यवहारमें लाया जाता है लकड़ीके टबके यद्यपि दाम भी कम लगते हैं और वह मजबूत भी होता है, तथापि उसको

सफाई ठीक नही होनेके कारण उनका व्यवहार नहीं करना चाहिये। मिट्टीका टब मजबूत नहीं होता परन्तु उसमें दाम कम लगते हैं उसकी सफाई अच्छी होती है और उसको मिट्टी में गाड़ देनेसे वह मजबूत भी हो जाता है। गायोंके खानेके लिये जो टब रखे जांय, उनको ऊंचा कर देना चाहिये। ऐसा करनेसे उनको खोंनेमें सुविधा होती है, उनको सिर अधिक नवाना नहीं पड़ता। टबके चारों ओर मिट्टी या ईंटा रख कर ऊंचा कर देना चाहिये। इसमें एकछिद्र रखना चाहिये जिससे कि गंदला जल निकल जाय और वह खूब साफ रहे। टबको प्रतिदिन साफ करना चाहिये।

प्रत्येक गायके रहने के लिये चार फीट ऊंची दीवार बना कर उनके स्थान को घेर देना चाहिये, ऐसा करने से वे आपस में लड़ नहीं सकती। उनके खाने के टब भी अलग अलग होने चाहियें। नहीं तो एक गाय अपना खाकर दूसरेका खानेके लिये भी लपक सकती है। बहुतसी गौएं इस प्रकारकी होती भी हैं। प्रत्येक टबके पास एक खिड़की वायु और प्रकाश के आने के लिये होनी चाहिये। प्रत्येक गायके लिये चार हाथ लम्बा और तीन हाथ चौड़ा स्थान होना चाहिये। इस प्रकार बड़ी सावधानीसे उनकी सुविधा और असुविधाओंकी कल्पना करके उनके लिये स्थानका प्रवन्ध करना चाहिये। स्वच्छता पर अधिकसे अधिक ध्यान देना चाहिये।

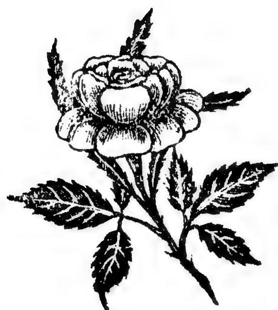
गोशालाका मैदान, गौओंके रहनेका स्थान, तथा नाली आदि खूब साफ रखनी चाहिये। गोमूत्र गोबर आदिको अधिक समय तक वहां पड़े रहने नहीं देना चाहिये। फेनाइल तथा कार्बोलिक पाउडरसे गोशालाकी नाली भी हर रोज साफकर देनी चाहिये। जिससे गोबर और गोमूत्रकी दुर्गन्धसे किसी प्रकारका रोग या शारीरिक पीड़ा होनेका डर न रहे। जिस स्थानपर गोबर और गोमूत्र खादके काममें लाया जाता हैं वहांपर गोशालाके पीछे एक बड़ेसे गढ़ेमें गोबर और गोमूत्र इकट्ठा करना चाहिये और उसे समय समयपर उठवा देना चाहिये। खादके काममें गोबर न लाया जाय तो प्रतिदिन उसकी थेपड़ी बनाकर अलग सुखा देनी चाहियें थेपड़ी वा 'ऊपले' जलानेके काममें आते हैं। गोओंके रस्सी इस प्रकारसे बांधनी चाहिये कि जिसमें वह खुशीसे उठ बैठ सके और सो सके। जिन गौओंके गलेमें रस्सी डालकर बांधना हो, उनके गलेमें भँवरकली रहनेसे किसी प्रकारका भय रस्सीके घूमनेका नहीं होता, वह अपने आप यथोचित घूमती रहती है। उससे पशुओंके गलेमें फंदा लगनेका भय भी नहीं रहता। बैल, बड़े बछड़े या साल भरकी बछिया भी इसी प्रकार बांधी जानी चाहिये। सांड़ोंको गौओंसे दूर रखना चाहिये, जिससे वे छूटकर अन्य पशुओंपर भयानक आक्रमण न कर सकें। प्रत्येक गोशालामें दूध देनेवाली गौके बच्छोंकी रक्षाके लिये एक पृथक्

स्थान निर्दिष्ट रहना आवश्यक है। गौओंको दूहनेके लिये घास, चारा रखनेके लिये, गौओंको प्रसव करानेके लिये, अलग अलग स्थान रहने चाहियें। गोशालाके सामने गौओंके विश्राम करनेके लिये एक बड़ासा चौक रहना चाहिये। उस स्थानमें जितनी गौएं हों उनकी संख्याके अनुसार खूंटे गड़े रहनेसे, वे उन खूंटोंसे बांधी भी जा सकती हैं। क्योंकि जो गौ दूध देती हैं उन्हें छोड़नेपर वे इधरसे उधर दौड़ भी सकती हैं। प्रत्येक गोशालामें गोपालनकी आवश्यक चीजोंका संग्रह रहना उचित है और उन सब चीजोंके रखनेके लिये एक स्वतन्त्र कमरा रहना आवश्यक है। गौशालाके पास ही गुवालोंका घर रहना चाहिये। गौशालाके भीतरके सब स्थान हर समय साफ सुथरे रहने चाहियें, जिससे गौएं भी हर समय साफ सुथरी रहें। दूध देनेवाली गौएं बिदक जाती हैं। दूध देनेवाली गौओंके बिदक वा चमक जानेसे उनकी दूध देनेकी शक्ति नष्ट हो जाती है। गायके पूंछमें गोबर या मूत्र लगा रहनेसे वह उनके शरीरमें भी लग जा सकता है।

गौओंके पानी पीने तथा भोजन करनेके लिये, समय और जल तथा भोज्य पदार्थका परिमाण निश्चितकर देना चाहिये, क्योंकि इसकी उपेक्षा करनेसे गौओंकेलिये अच्छा नहीं होता, विशेषकर जो गाय दूध देती हैं उनके लिये इस नियमका पालन करना तो विशेष आवश्यक है, यदि उनके भोजन और जल पानके

समय तथा परिमाणमें व्यतिक्रम हुआ तो इससे उनकी दूध देनेकी शक्ति मारी जाती हैं। अतएव उनके भोजनका समय तथा परिमाण नियत कर देना चाहिये। प्रातः काल और सायं-कालके पश्चात्—इस प्रकार उन्हें दो वार पूर्ण आहार देना चाहिये बीचमें चरनेके लिये भी छोड़ देना चाहिये।

सांड़, बैल, दूध देनेवाली गाय, बछिया आदि—इन सबके लिये अलग अलग परिमाणमें भोजन की व्यवस्था होनी चाहिये गायोंको प्यास बहुत लगती है अतएव इनको खूब अच्छा और शीतल जल पिलाना चाहिये।



चौदहवां अध्याय।

घास और उनकी रक्षा।

शरीरको हृष्ट पुष्ट बनाये रखना प्रधान कर्तव्य है। शरीर-को हृष्ट पुष्ट रखनेके लिये भोजनकी आवश्यकता है। भोजन चाहिये उत्तम और उचित परिमाणसे। इस पञ्चभूत शरीरको कायम रखनेके लिये और उसका उचित उपयोग करनेके लिये आवश्यकता है, भोजनकी। जिस प्रकार मनुष्यके लिये भोजन आवश्यक है, उसी प्रकार पशुओंके लिये भी। उत्तम भोजन मिलनेसे ही शरीरधारियोंका शरीर बढ़ता है, पुष्ट होता है। आज जो बालक १० सेरका है, वही १५ वर्षके बाद एक मनसे तीन मन तक हो जाता है, आज जो बच्छा बीस सेरका है, वही तीन चार वर्षके बाद १०—१२ मन तकका हो जाता है। यह जो वजन बढ़ता है, यह जो शरीर पुष्ट होता है, यह सब भोजनकी ही करामात है।

गौओंको क्या क्या खानेको देना चाहिये। किन किन वस्तुओं-का खाना उनके लिये हितकर है, आदि बातोंका इस समय कोई

नियम नहीं रहा है, इसकी कोई व्यवस्था नहीं है, गौ जो चाहें या जो पावें खालें , इससे अधिक उनके लिये कोई विधि व्यवस्था नहीं है। न तो उनके खानेके लिये कोई वस्तु उत्पन्न की जाती है, और न उसका प्रचुर व्यापार ही होता है। खेत बोये जाते हैं, अन्न लेलेनेपर जो भूसा या डंठल रह जाते हैं, वही गौओंका आधार है, यदि गौओंकी रक्षा होतो उसी से, या स्वयं उत्पन्न घाससे परन्तु आज जैसा समय आया है, उसे देखते यह बात अवश्य माननी पड़ती है कि इस उपेक्षासे अब काम नहीं चल सकता। अब गो-खाद्य उत्पन्न करनेके लिये भी खेती आदि करनेको विशेष आवश्यकता उत्पन्न हो गयो है। दूसरे दूसरे देशोंमें गौओंके खाद्यके लिये एक तृतीयांशके करीब धरती छोड़ दी जाती है और इसके अतिरिक्त गो--खाद्यके उत्पन्न करनेके लिये खेतो भी की जाती है। जिसमें पुष्टिकर अनेक प्रकारके घास बोये जाते हैं और खास गौओंके लिये जौ, चना गेहूं मकई आदि की भी खेती होती हैं। परन्तु भारतमें यह बात नही है, यद्यपि उन देशोंकी अपेक्षा भारतमें गो-खाद्य उत्पन्न करनेके लिये और भी अधिक आयोजन करनेकी आवश्यकता है। क्योंकि इङ्गलेण्ड-के समान देशोंमें गौओंके न रहने से भी काम चल सकता है परन्तु भारतमें गौओंका अभाव होने पर इसीके नाशकी आशंका उपस्थित हो जायगी। अतएव भारतवासी किसानोंको भी इधर ध्यान देना चाहिये, उन्हें भी गो-खाद्य उत्पन्न करनेके लिये

खेती करनी चाहिये। देशके राजा और जमींदारोंको भी चाहिये, कि वे अपनी प्रजाओंको उत्साहित करें और उन्हें इस काममें सहायता पहुंचावें।

गो-खाद्य उत्पन्न करनेके लिये जो खेतीकी जाय, उसमें भी खाद आदि डालनेकी उतनी ही आवश्यकता है, जितनी कि मनुष्योंके लिये अन्न उत्पन्नकरने वाले खेतोंके लिये होती है। खाद आदि डालनेसे भूमिकी उपजाऊ शक्ति बढ़ती है। उससे जिस प्रकार मनुष्योंके लिये अधिक अन्न उत्पन्न होता है, उसी प्रकार गौओं के लिये चारा। अभी तो वे दिन नहीं आये हैं, परन्तु यदि आवें तो वैज्ञानिक रीतिसे गोखाद्य उत्पन्न करनेके लिये खेतीसे विशेष लाभ होगा। अन्य उन्नत देशोंमें इसी प्रकारसे खेती होती है और वे उससे लाभ भी उठाते हैं। जब वहां वाले इस रीतिका उपयोग करते हैं और वे उससे लाभ उठाते हैं तो इसका कोई कारण नहीं दीख पड़ता कि भारतवासी उस रीतिका अनुसरण करनेसे हानि उठावेंगे।

नदी और तालावोंके किनारे कई प्रकारका घास स्वयं उत्पन्न होता है और वह गौओंके लिये विशेष हितकारी है। चौमासेमें पहाड़ोंमें भी घास खड़े हो जाते हैं। उन घासोंमें कई प्रकारके ऐसे भी होते हैं जिनके खानेसे गौओंको दूध भी अधिक उत्पन्न होता है और वे पुष्ट भी होती है। वे घास यों ही नष्ट हो जाते हैं, उनका उपयोग होता भी होगा तो

बहुत कम। सीन, गांडर तथा दूब जातिका घास और इसी प्रकारके बहुतसे घास गौओंके लिये लाभदायक हैं और उन्हें गौएं बड़ी रुचिके साथ खाती भी हैं, परन्तु अधिक परिमाणसे उनका मिलना इस समय कठिन है। गौ प्रेमी और गौ भक्तोंका कर्तव्य है कि वे इस कठिनता को दूर करें।

साइलो और साइलेज।

गायोंको हरा ताजा घास खिलाने की आवश्यकता है, यह बात लिखी जा चुकी है। परन्तु सदा हरे, घासका मिलना अथवा प्राप्त करना कुछ सहज बात नहीं है। अतएव इङ्गलेण्ड आदि देशोंमें साइलो बनवाते हैं और उसमें हरा घास रखते हैं। इङ्गलेण्ड आदिमें साइलो बनवानेका एक कारण यह भी है कि वहां हरियाली बहुत अधिक होती है और वर्षाका भी कोई शुमार नहीं रहता। इसलिये घास काट कर सुखाया नहीं जा सकता और सुखाया जाय तो वर्षाके कारण गल कर सड़ जानेका डर रहता है। इसी कठिनतासे बचनेके लिये वहां 'साइलो' की सृष्टि हुई है। साइलोमें घास रखा जाने पर चाहे जितना पानी वर्षता रहे, कोई डरनेकी बात नहीं। साइलोमें घासको दबा कर छे महीनेके पश्चात् पशुओंको खिलाया जाता है। चारों ओरसे चार दीवारीसे घिरे हुए स्थान विशेषको साइलो कहते हैं। यह इस प्रकारसे बनाया जाता है, जिससे

पानी और हवाके जानेमें रुकावट हो। उसमें बहुत दिनां तक हरा घास रखा जा सकता है। उसकी बनावट इस प्रकारकी होती है, कि जिससे साइलोमें घास रखने तथा निकालनेमें किसी प्रकारका कष्ट न हो। उसके भीतरका भाग बहुत ही चिकना और स्वच्छ होता है। ताप-परिचालक पदार्थोंके द्वारा उसे बनवाना चाहिये। वह इतना मजबूत बनाया जाना चाहिये कि जिससे बहुत अधिक वजनके दबावको भी वह सह सके।

अनुभवसे मालूम होता है कि साइलो गोलाकार ही अच्छा होता है। जबतक उसमें वायुका प्रवेश नहीं होता, तबतक उसमें घास अच्छी दशामें रहता है।

साइलो काठ ईंटा चूना आदिके द्वारा बनाया जाता है। जमीनके भीतर तथा ऊपर बनाया जाता हैं। भारतमें साइलो जमीनमें अवस्थाके अनुसार कूएंके समान बनवाना लाभ-दायक है। मिट्टीमें जो साइलो बनाया जाय, उसके चारों ओर पक्की चार दीवारी बनवा लेनी चाहिये। दीवारमें चूनेका पलश्तर करवाना चाहिये। जिनके पास बहुत धन हो और जो इस काममें बहुत धन लगा सकते हों उनको जमीनपर ही साइलो बनाना चाहिये।

साइलो १० फीट लम्बा और १५ फीट गहरा हो, इससे कम बनवाना अच्छा नहीं है। जमीनके भीतर जो साइलो बनवाया जाता है, उसकी गहराईका परिमाण जल निकलने पर अवल-

म्बित है। यानी जितनी गहराई पर जल निकले, उससे कुछ कम ही गहरा साइलो बनवाना चाहिये। जिस स्थानपर १२॥ फीटसे नीचे खोदनेसे जल निकलता हो उस स्थानपर १० फीट से अधिक साइलोकी गहराई नहीं होनी चाहिये। जल स्थान-की गहराईसे दो फीट कम गहराई साइलोकी होनी चाहिये। उसमेंसे घास निकालनेके लिये दो फीटका गोलाकार एक मार्ग बनवा देना चाहिये। इसी मार्गसे घास रखा और निकाला जा सकता है। साइलोका अधिक गहरा होना आवश्यक है। क्योंकि दाबके भीतर रहनेसे घास अच्छी दशामें रहता है। १६ फीटकी गहराईवाले साइलोकी अपेक्षा ३२ फीटकी गहराई वाला अधिक अच्छा होता है। गौओंकी संख्याके अनुसार साइलो छोटा और बड़ा भी बनाया जा सकता है। १०० गाय बैलोंके लिये घास रखना हो तो साइलोका व्यास २० फीट और गहराई ३२ फीट होनी चाहिये। ५० से लेकर १०० गायोंके लिये यदि घास रखना हो तो १० से २० फीटके व्यासका साइलो होना चाहिये। १० से पचासके लिये साइलोका व्यास १० फीटसे १५ फीट तक होना चाहिये। १० से कम गायोंके लिये साइलो बनवानेमें लाभ नहीं है। वैसी स्थितिमें दो चार ऐसे लोग, जिनके पास पांच पांच चार :चार गौ-बैल हों, मिलकर साइलो बना सकते हैं।

जहां पानीका ठहराव न हो, वहां सूखी जमीनमें गढ़ा खोद-कर उसमें घास रखा जाय और मिट्टीसे ढांक दिया जाय तो भी घास हरा ही बना रहता है। परन्तु कुछ सावधानी रखनी चाहिये, जिससे वर्षाका जल उसमें घुसने न पावे। ऊपर मिट्टीका घेरा बनवा देनेसे ही जलका जाना रुक सकता है। साइलोमें जो घास रखा जाता है वह साइलेज कहाता है। साइलेज गौओंके लिये पुष्टिकारी और रुचिकर खाद्य पदार्थ है। साइलोमें दो तीन वर्षतक कच्चा (हरा) घास रखा जा सकता है।

'दूब' और 'सीन' 'गाण्डर'के सिवा भुट्टा (मकई) जुआर, बा-जरा आदिके डंठलमें शर्कराका परिमाण अधिक होता है अतएव ये सब साइलोमें अवश्य रखे जाने चाहियें। जो कच्चा घास गौएं यों नहीं खाती, उसीको यदि साइलोमें रखकर साइलेज बना दिया जाता है तो उसे बड़े प्रेमसे गाय बैल खाते हैं। साइ-लेजके खानेसे दूध देनेकी शक्ति बढ़ती है, साथ ही शारीरिक बल भी।

जिस समय घास पकने लगे, अथवा जिस समय उसमें दूध उत्पन्न हो जाय, उसी समय काटकर साइलोमें रखना चाहिये। पीछे रखनेसे वह खराब हो जाता है। यदि अन्नके डंठलोंकी पूली बनाकर रखना हो तो कटनेके बाद ही रख देना चाहिये, साइलोमें रखनेके समय पैरसे दबा दबाकर रखना चा-

हिये। घास भर जानेपर नमक मिला हुआ जल उसपर छिड़क देना चाहिये और ऊपर टीन अथवा और किसी-से छा देना चाहिये। बड़े यत्न हीसे साइलोमें घास क्यों न रखा जाय, तथापि ऊपरका कुछ घास खराब हो ही जाता है। यह घास सदा ही व्यवहारमें लाया जा सकता है। अच्छे साइलोमें अच्छे प्रकारसे यदि घास रख दिया जाय तो वह बहुत दिनोंतक काम देनेके योग्य रहता है।

साइलोसे घास निकालनेके समय कहीं एक स्थानपर गढ़ा नहीं बना देना चाहिये। किन्तु सर्वत्रसे बराबर निकालना चाहिये। इस घासमें सबसे बड़ा गुण तो यह है कि वह शीघ्र ही गायोंको पच जाता है और खानेमें स्वादयुक्त होता है, क्योंकि वह गरमीमें पका हुआ होता है। अन्य गो-खाद्योंकी अपेक्षा इसके खानेसे गायोंकी शक्ति बढ़ती है, यह हमें पुनर्वार कहना पड़ता हैं। जिस खाद्यको गाय अखाद्य समझती हैं और खाती नहीं, वही घास यदि साइलोंमें रख दिया जाय तो वह गायोंको प्रिय हो जाता है, और गाय उसे बड़े चावसे खाती हैं।

साइलेज अत्यन्त गरमीमें अच्छे ढङ्गसे पकता है इस कारण उसके सभी दूषित बीजाणु नष्ट हो जाते हैं। साइलोंमें जो घास रखा जाता है, उसको काटकर छोटा बनानेकी एक कल आती है, जिसके द्वारा थोड़े ही समयमें कई मन घास कटा जा सकता है। काटी हुई साइलेज गोओंके लिये बड़े कामकी चीज है।

बिना काटे जो एक तृतीयांशसे आधे हिस्सेतक नष्ट हो जाता हैं वह बच जायगा। काटकर बनी हुई शानीको साइलोंमें पहुंचानेकी मशीन होती है। उसमें लोहेकी नालीसे काम लेना पड़ता है। उसकी सहायतासे ४० फीटकी ऊंचाई तक शानी भरी जा सकती है। दिनभरमें ३०० मन तक कुटी या शानी साइलोंमें पहुंचायी जा सकती है।

और चीजें।

साइलेजके सिवा विलायती दुनियांकी चीजें जो हमारे यहांके लिये उपयोगी हैं, मेंगोलड और बरसीम हैं। मेंगोलड हमारे यहांके शलगमके ढङ्गका होता है और 'बरसीम' मेथी वा सेंजीकी भांतिका घास हैं। पंजाबके श्रीयुत भागवानदास वर्मा मेनेजर गवर्नमेण्ट मिलटरी डेरी फार्मने सात सेर तकका एक मेंगोलड देखा है। उनकी सम्मतिके अनुसार मेंगोलड शलगमसे अधिक मीठा होता हैं। जब गायको यह खिलाया जाय तो दूसरा चारा दाना कम कर देना चाहिये। गौओंको खिलानेसे पहले मेंगोलडको खूब धो लेना चाहिये। एक गायको एक या दोसे अधिक मेंगोलड खिलाना अच्छा नहीं। मेंगोलड सितम्बर अक्टूबरमें बोया जाता है और छे महीनेमें उखाड़नेके लायक होजाता है। जिस खेतमें मेंगोलड बोये जायं उसमें उनको तोड़ते समय एकको

छोड़कर एक तोड़ना चाहिये। ऐसा करनेसे आकारमें मेंगोल्ड खूब बढ़ेंगे।

बरसीम जिसका नाम ऊपर आचुका है, बोयी जानेके बाद तीसरे महीने काममें लाने लायक हो जाती हैं। हर १५ वें दिन कटकर इसे आठ बार तक काटी जा सकती है। सितम्बरमें बरसीमकी बुआई होती है। गौ बैल इसे बड़े चावसे खाते हैं। चार सौ मन एकड़की पैदावारी कूत बरसीमकी की जाती है। मईके आरम्भमें बरसीम सूख जाती है। उक्त बा० भगवान दास कहते हैं कि, दूसरी बार जब बरसीम बोनी हो तो उस जमीनको जून जुलाईमें बादकर खाद डालकर छोड़ दो और वर्षा बन्द होनेपर खेतको साफ करके सितम्बरमें जोतो और पानी भर दो अनन्तर बीस सेर एकड़के हिसाबसे बीज फैलाकर पानी भर दो और बादमें हर आठवें दिन पानी दिया जाया करे, तीसरे महीने यह परम लाभदायक चीज तैयार हो जायगी।

चीनी (खांड) बनाने पर जो गन्नेके रससे शीरा निकलता है वह भी दूध देनेवाली गायके लिये परमोपयोगी है। उसमें 'कार्बोहाइडरेट' होता है। वर्षा बन्द होजानेके बाद दिया जानेपर गायोंके लिये गुणकारी हैं। इसमें पाचक शक्ति बहुत होती है।

विलायती जुआर जिसे अंग्रेजीमें इम्फी (Imphy) कहते हैं, उसकी भी फसल यहां तैयार की जाय तो गौओंके चारेके अभावकी बहुत कुछ पूर्ति हो सकती है, फसलके तैयार करनेमें कोई अधिक

झंझट भी नहीं। किन्तु की जानी चाहिये सावधानीके साथ एक एकड़में ५० टन तक इम्फी तैयार हो सकती है और उसकी कई फसलें वर्ष भरमें कट सकती हैं। इधर काटा और उधर उसमें नयी पत्तलें फूट आती हैं। पशुपालनके लेखक कहते हैं कि इम्फीसे शक्कर भी निकल सकती है। एक एकड़में ४० मनसे अधिक शक्कर निकलेंगी। उसके पत्तोंकी खाद भी उत्तम होती है। इम्फीके दानेका आटा हमारी मकई और जुआरसे बढ़िया होता है। देशके किसानोंको चाहिये कि इन बातोंकी ओर ध्यान देकर शीघ्र कार्य्यमें प्रवृत्त हो जायं। हाथपर हाथ धरकर बैठनेसे जो कुछ रहा है, वह भी चौपट हो जायगा। समय काम करनेका है, बैठकर दूसरोंका मुंह ताकनेका नहीं।



पन्द्रहवां अध्याय।

गोचर भूमि।

सब देशोंमें गौओंके चरनेके लिये कुछ भूमि छोड़ दी जाती है, उस भूमिमें खेती-वारी नही होती। वह भूमि केवल गौओंके चरनेके ही काममें आती है। इङ्गलेण्डमें जितनी भूमि जोती जाती है, उतनो ही गौओंके चरनेके लिये भी रखी जाती है। वहां समस्त भूमि दो भागोमें बटी है। एक भागमें खेती होती है और उसके दूसरे आधे भागमें गौ चरती हैं। परन्तु इस समय भारतवर्षमें गोचर-भूमि नहींके समान है। गोचर भूमिका न होना गौओंके ह्रासका कारण माना जाता है। स्वच्छ हवामें अनेक प्रकारके तृण-लता-गुल्म आदिके खानेसे वे हृष्ट पुष्टऔर नीरोग रहतो हैं। घासों के साथ बहुतसी औषधियोंके खाजाने से उनकी आहार करने को इच्छा और भी बढ़ती है। एक स्थान पर खाना उन्हें अच्छा भी नहीं मालूम होता है और न उससे उनको कोई विशेष लाभ ही होता है।

आज भारतवर्षमें गोचर-भूमिका अभाव है, इससे ऐसा नहीं समझना चाहिये कि पहले भी यहां गोचर-भूमि नहीं थी।

पहले यहां गोचर-भूमि थी और उसमें असंख्य गौएं चरा करती थीं। गोवर्धन, वृन्दावन, महावन, काम्यवन, अप्सरवन, सुरभि-वन, स्वर्णवन, भाण्डीरवन, तपोवन, कोकिलवन, तालवन, कुरुवन, खदिरवन, लोहवन, भद्रवन और कदम्बवन आदि अनेक बन थे, जो केवल गोचारणके लिये छोड़े गये थे। गोकुलकी बहुत बडी गोचर भूमि थी, जिसमें असंख्य गौएं चरा करती थी, वहां गौ बड़े सुख स्वाच्छन्द्यसे रहा करतीं थीं। इसीसे एक दन्त कथा प्रचलित हो गयी है, जिससे मालूम होता हैं कि उस समय वहां गौओं को कितना सुख था। "मथुराकी बेटी गोकुलकी गाय, करम फूटे तो बाहर जाय"। मथुराकी लड़की और गोकुलकी गायको यदि वहांसे बाहर जाना पड़े तो यह उनके दुष्कर्मोंका ही फल समझना चाहिये, क्योंकि वहांके समान सुख उनको और जगह नहीं मिल सकता था।

उत्तर-गोगृह और दक्षिण गोगृह नामसे गोचर भूमि प्रसिद्ध थी, वह भी बहुत बड़ी थी और वहां भी अनेक गायें रह सकती थीं। श्रीकृष्णकी राजधानी द्वारका गुजरातमें हैं। इसी प्रदेशके कच्छमें गोचर-भूमि है, वहां सदा गौओंके लिये घास वर्तमान रहता है, इसीलिये वहांकी गौएं भारतमें और गौओंकी अपेक्षा अच्छी समझी जाती हैं। वहां वालोंका विश्वास है कि इस प्रदेशमें कभी किसी भी कारणसे गौओंके लिये अकाल या मरकी नहीं हो सकती। वहां बहुत जङ्गल

हैं, उसमें गौ स्वच्छन्दतासे विहार करती हैं, अतएव वे हृष्ट-पुष्ट तथा नीरोग रहा करती हैं ।

सामवेदकी छान्दोग्योपनिषद्में एक कथा है, जिससे मालूम होता है, कि पहलेके समयमें यहां गौचर भूमिकी कितनी अधिकता थी । महर्षि गोतमके शिष्यका नाम था सत्यकाम । सत्यकाम बहुत दुर्बल हो गया था । यह देखकर महर्षिने अपने शिष्यको चार सौ गौओंके चरानेका भार सौंपा । वह गौ-ओंको लेकर भारतके प्रत्येक प्रान्तकी गोचर भूमियोंमें चरानेके लिये बाहर निकला । उसने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक इन चार सौ गौओंकी संख्या बढ़कर हजार नहीं हो जायगी, तब तक मैं नहीं लौटूंगा । थोड़े ही दिनोंमें उन गौओंकी संख्या एक सौसे हजार हो गयी । इन बातोंको देखनेसे प्राचीन समयके भारतमें गोचर-भूमिकी अधिकता साफ ही मालूम पड़ती है । भारतके उप-द्वीपोंमें भी गोचर-भूमि है । यद्यपि वहां वर्ष भरमें २० । ३० इञ्चसे अधिक वर्षा नहीं होती, परन्तु घासकी पैदावार वहां अधिक होती है । मैशोरमें २१० गौचर भूमि छुटी हुई हैं और वहां बारह महीने घास आदिकी अधिकता रहती हैं । इन गोचर भूमियोंमें विचरण करनेवाली गौएं अन्य गायोंको अपेक्षा पुष्टऔर बड़ी भी होती हैं । पर्वतोंके समीप जो गोचर-भूमि होती हैं उनमें चरने वाली गौ और भी अधिक पुष्ट होती हैं ।

मैशोरके अमृतमहाल 'नेलो, कथिवर्जी सातपुरा कच्छ और गुजरात आदि प्रदेशोंकी गौ भारतके अन्य प्रदेशोंकी गौओंकी अपेक्षा सुस्थ, बली और लम्बी चौड़ी होती हैं, इसका सबसे बड़ा कारण यही है कि उन प्रदेशोंमें गोचर-भूमि है, जहां वे स्वच्छन्दतासे भोजन पाती हैं और घूम सकती हैं।

राजपूतानामें भी बीहड़के नामसे काफी गोचर भूमि छुटी हुई है। पश्चिमके आष्ट्रेलिया न्यूजीलैण्ड, इङ्गलैण्ड, स्वीजरलैण्ड, हालैण्ड और अमेरिका आदि देशोंकी गौएं अच्छी समझी जाती हैं, संसारमें उनकी प्रसिद्धि है इसका कारण यही है कि उन देशोंमें गोचर भूमिकी सुव्यवस्था है, जहां वे सुखसे चरती फिरती हैं।

ग्रेटबृटेनमें जितनी भूमि जोती जाती है उतनी गोचरके लिये भी छोड़ी गयी है यह कहा जा चुका है। वहांकी भूमिका मूल्य बहुत है तथापि वहांके विचारवान मनुष्योंने बहुत गोचर-भूमि रखनेकी व्यवस्थाकी है। गोचर भूमिकी आवश्यकता और गौओंसे होनेवाले लाभको देखकर ही वहांके लोगोंने ऐसी व्यवस्थाकी है। यही कारण है कि आज इङ्गलैण्डकी गौओंके समान दूध देनेकी शक्ति अन्य देशोंकी गौओंमें नहीं है।

अमेरिकाके युक्त राज्यमें विशेषतः टेकसस् प्रदेशके लिविङ्गस्टन कौंटोमें एक आदमीके अधीन आठ मील लम्बी और ८ मील चौड़ी गौओंके चरनेके लिये जमीन है। उस साहबके ३२ डेरी फार्म हैं। प्रत्येक डेरी फार्ममें एक कप्तान, दो

लेफ्टिनेण्ट और एक उनपर कमाण्डर-इन-चीफ नियुक्त हैं। केवल यहीं नहीं, उक्त टेकसस् प्रदेशके प्रसिद्ध गोपालक जान हिट्सन ५००००, जान चिल्स ३००००, कार्गन्स एण्ड पोर्कर २००००, जेम्स ब्राउन १५००० रावर्ट स्लान १२००० चिपविवर्स १००००, मार्टिङ्ग चाइल्डर्स १००००, विलियम हिट्सन ८ हजार जानसन ८ हजार और जार्ज विवर्स ६ हजार गौएं रखे हुए हैं और समस्त टेकसस् प्रदेशमें कुल मिलाकर ४० लाख गौएं हैं। अब विचार कीजिये, इस संख्याकी तुलनामें हमारे देशमें गौओं-की संख्या कितनी लज्जा जनक है! इङ्गलेण्डमें कुल ३२५६०३५७ एकड़ जमीन स्थायी रूपसे गोचारणके लिये निर्दिष्ट है। वेल्स प्रदेशमें ४७३४४८६ एकड़ जमीनमें पहाड़ी और जलीय प्रदेशके अतिरिक्त १५२७५३४ एकड़ गोचर भूमि है। स्काटलेण्डमें कुल १६६३६३७७ एकड़ जमीनमें ११११२२-६६ एकड़ जमीन गोचारणके लिये नियत हैं। इसके सिवा वहां और भी ४६७८६४० एकड़ जमीन योंही पड़ी हुई है उसमें कुछ आवादी नहीं है। वहां बारहो महीने गौएं बड़े आनन्दके साथ चरती हैं। स्वेच्छापूर्व्वक विचरणसे वे खूब हृष्ट पुष्ट रहती हैं ओर उनका दूध बड़ा स्वास्थ्यकर होता है। इङ्गलेण्डकी भांति ही स्वीजरलेण्ड हालेण्ड प्रभृति योरपके समस्त राज्योंमें और उत्तर एवं दक्षिण अमेरिका, आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलेण्ड आदि देशोंमें इतनी गोचर-भूमि छूटी हुई हैं कि उन देशोंको

गोचर-भूमिमय कहनेमें भी कोई अत्युक्ति नहीं। जिस परिमाणसे वहां गोचर-भूमि है उसी परिमाणसे वहांके निवासी गौएं रखते हैं। पाठक जरा ध्यानसे विचार करें।

भारतके पश्चिमोत्तर प्रदेश मध्यप्रदेश और दक्षिणात्यमें बहुत घास पैदा होता है यदि किसी साल घासकी कमी हुई तो वहांकी गायोंको भूसा दिया जाता है। इसके अतिरिक्त वहांके खेत भी रबी बोनेके पश्चात् परती रहा करते हैं जिससे गौओंके चरनेमें सुविधा होती है।

परन्तु अन्य अनेक प्रान्त ऐसे हैं, जहां गोचर भूमिके अभावसे गौओंकी अत्यन्त दुर्दशा हो रही है। उन प्रदेशोंमें बारहों महीने खेती की जाती है, अतएव खेत तो कभी खाली ही नहीं रहते, गोचर-भूमि है ही नहीं, गौ चरें तो कहां चरें? इसका फल भी वही होता है जो होना चाहिये। उन प्रदेशोंके मनुष्योंके समान वहांकी गौएं भी जीर्ण-शीर्ण दीख पड़ती हैं।

बङ्गालकी दशा तो और भी विचित्र है। कुछ प्रकृति और कुछ मनुष्योंके लोभके कारण वहांकी गौओंकी बड़ी दुर्दशा होती है। आज कल पाटका मूल्य खूब बढ़ा हुआ है, अतएव दरिद्र किसान धनके लोभसे पाटकी ही खेती करते हैं जिससे भूसा गौओंके लिये नहीं मिलता। गोचर- भूमि है ही नहीं, खेत हमेशा बोये रहते हैं। इससे गौओंकी जो दुर्दशा वहां है वह बड़ी ही करुणा जनक है। गौ बेचारी खूंटेमें बंधी

भारतीय गोधन

गोभक्त बा० हासानन्द वर्मा ।



आपने गोरक्षाके लिये अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया है ।

हैं, चरनेके लिये उसकी स्वाभाविक इच्छा उसे प्रेरित कर रही है, यदि वह रस्सी तोड़कर किसी खेतमें पहुंच जाय तो वहां तीन चार ग्रास खानेका प्रायश्चित्त उसे कानीहौसमें जा कर तीन चार दिनके उपवास द्वारा करना पड़ता है। यही अवस्था हैं जो यहां-की गौओंकी उन्नतिकी आशाको निराशामें परिणत करती हैं।

कलकत्तेकी गौओंकी दुर्दशा देखकर ही श्रीकृष्ण गौशाला-के सर्वस्व बा० हासानन्द वर्माने गोचर भूमिकी ओर कलकत्ते वालोंका ध्यान आकर्षित किया। रात दिनके अविराम परि-श्रमसे वर्माजी लिलुआमें गोचरण भूमि खरीद भी कर चुके हैं किन्तु कलकत्ते जैसे महानगरकी गौओंका क्लेश काटनेके लिये उतनी ही भूमि पर्याप्त नहीं है आशा है उदार जनोंकी सहायतासे बा० हासानन्दजी अपने सदुद्देश्यको पूर्ण करनेमें समर्थ होंगे।

गोचारण भूमि नियत होनेपर उसमें गो-खाद्योंकी खेती की जा सकती है, कम दाममें अच्छा और अधिक घास मिल सकता है तथा सदा हरे घासका मिलना सुलभ हो सकता है। गांवकी गायोंके चरनेके लिये जमीन छोड़नेपर ही उनके प्राणोंकी भी रक्षा हो सकती है।

* उनके लिये प्रति गाय ३॥ बीघा जमीन छोड़नी चाहिये इङ्ग-लेण्डके किसी किसी गोस्वामीका मत है कि प्रत्येक गायके खानेके उपयुक्त पदार्थ एक वीघे जमीनमें उपजाया जा सकता है।

कोई कोई कहता है कि जमीनसे खाद्य उत्पन्न करके गो-पालन करना चाहिये। किसीके मतसे जमीनमें घास रोप कर वही गायोंको खिलाना लाभ दायक समझा जाता है। किसी किसीके मतसे कुछ जमीनमें घास जमाना चाहिये और कुछ जमीनमें अन्न, इस प्रकार गो-पालन करना चाहिये। ऐसा करनेसे सभी बातोंकी सुविधा हो सकती है। गोचर भूमिको परती नहीं छोड़ना चाहिये ४—५ वर्षके अन्तरसे उसको जुतवा देना चाहिये। उसका घास आदि सब साफ करवा लेना चाहिये। गोबर तथा दूसरी खाद उसमें डालना चाहिये। गोचर-भूमिसे जल निकालनेका प्रबन्ध होना चाहिये। गोचर-भूमिको इस प्रकार रखनेसे कभी गायोंके लिये घासकी कमी नहीं हो सकती। गांडर सीन दूब तथा इस जातिके दूसरे घास गायों के लिये उपकारी तथा पुष्टकारी हैं। जमीन जोतकर तथा साफकर उसमें दूबके छोटे पौधे रोप देनेसे दूबकी खेती बहुत अच्छी हो जाती है। विलायती घास इस देशकी गायोंके लिये उपयोगी नहीं हैं। उन घासोंके खानेसे यहांकी गायोंका रक्त गरम हो जाता है। इससे उनका दूध सूख जाता है। परन्तु बछिया बैलों और सांड़ोंको वह घासभी दिया जा सकता है।

अस्तु, इस समय अधिक नहीं, किन्तु भारतके किसान यदि अपने जोतनेके खेतसे प्रति १० बीघेके हिसाबसे गोचारणके लिये छोड़ दें, अथवा उसमें गो-खाद्यमें उत्पन्न करें और इसी प्रकार जमी-

दार भी अपने प्रत्येक ग्राममें गौओंकी संख्याके अनुसार उनके चर-नेके लिये जमीन छोड़ी जानेकी व्यवस्था करदें तो इस समय बड़ा लाभ हो। गोवंश की वृद्धिमें बड़ी सहायता मिले।

पहले यहांके जमीदार गोचर भूमिका कर लेना पाप समझते थे, परन्तु आज वह बात नहीं है। आजके जमीदार इन कुसंस्कार युक्त बातोंको नहीं मानते। आजके जमीदार अपनी जमीदारीमें ऐसी एक इञ्च भी जमीन नहीं छोड़ते जिसकी मालगुजारी न हो। गोचर-भूमिके अभावसे अब गौएं खूंटेपर बंधी रह कर ही अपने जमीदारको आशीर्वाद देती हैं। आज गोचर भूमि न होनेके कारण अकाल हीमें गौओंको प्राण छोड़ने पड़ते हैं। इस कष्टको दूर करनेके लिये सब स्थानोंमें गोचर-भूमि छोड़नेकी आवश्यकता है। शहरोंका प्रबन्ध म्यूनिसपलिटियां करती हैं। शहरके निवासियोंके अभाव अभियोगोंकी रक्षा करना म्युनिसिपलिटियोंका कर्तव्य है। नगरनिवासियोंके स्वास्थ्य-की ओर ध्यान देना भी उन्हीं का कर्तव्य है। प्रायः सब स्थानों-की म्युनिसिपलिटियोंके अधिकारमें जमीन रहा करती है, वे उनसे किराया वसूल किया करती हैं। यदि कirayeका कुछ लोभ संवरण करें और गोचर भूमिके लिये थोड़ीसीं भूमि छोड़दें तो इससे गौओंकी बड़ी रक्षा हो साथ साथ स्वस्थ हृष्ट पुष्ट गौ-ओंका सुन्दर दूध मिलनेसे नगर वासियोंके स्वास्थ्य सुधारमें भी बड़ी सहायता मिले। इसी प्रकार डिस्ट्रिक्ट और लोकल

बोर्डोंका भी ध्यान इधर आकृष्ट होना चाहिये। कहनेका यह अर्थ नहीं है, कि वे मुफ्तही ऐसी व्यवस्था करें, क्योंकि ऐसा होना अहिन्दू शासित राज्यमें असम्भव हैं। प्रत्येक गाय पर निर्धारित कर नियत करदें। गो-स्वामी उतना कर देगा और उस भूमिमें अपनी गौ चराबेगा। इस उपायसे दो फल होंगे एकतो म्युनिसिपलिटीकी आयमें किसी प्रकारकी वाधा न होगी, दूसरे गो-रक्षाके समान महा पुण्य मिलेगा। धन और धर्मका लाभ इसे ही कहते हैं।



सोलहवां अध्याय।

गौओंका आहार।

यह बात सभी जानते हैं कि गायोंके थनमें दूध नहीं होता, किन्तु दूध होताहै उनके मुंहमें। अच्छा भोजन खाकर गौएं दूध भी खूब अच्छा देती हैं। भारतके विभिन्न प्रान्तोंकी गौओंके लिये एक आहारका नियम तो हो नहीं सकता जिस प्रान्तमें परम्परासे पुष्टिकर जो खाद्य समझा जाता हो, वहांकी गौओंको वही देना चाहिये, और कोई गाय किसी ऐसे प्रान्तमें ले जायी जाय कि जहां उसका अभ्यस्त चारा न मिलता हो, तो धीरे धीरे वहांका खाद्य खानेकी आदत डाल लेनी चाहिये। राजपूताना और हरियानेकी गौ और बैलोंको चौमासेमें हरा घास खानेको दिया जाता हैं। चौमासेकी समाप्तिमें जब फसल पकनेमें आती है तो हरा गंवार भी खिलाया जाता है। बाजरेकी चीबी और चरी (जुआर) को भी गौएं बड़े प्रेमसे खाती हैं। दूध देनेवाली गौओंको रांधकर या भिगोकर गंवार, सरसों और तिलकी खली तथा बीनोले भी

दिये जाते हैं। गंवार वहां पुष्टिकर समझा जाता है। खली तथा बीनौले घृत-वर्द्धक। जौ, गेहूं और चनेकी फसलमें उनकी खूद भी खिलायी जाती हैं। गाजर और गजरा भी दूध बढ़ानेवाली चीज हैं। फसल कट आनेपर बाजरेकी कड़बीके पूलोंकी शानी बनाकर गंवारमें छिड़ककर वह गौ बैलोंको खिलायी जाती हैं और सूखा घास तथा फूस भी। सूखे फूसमें 'पाला' और चारा प्रधान है। 'पाला' कोरा और शानीमें मिलाकर भी गौओंको खिलाया जाता है। 'चारा' मूंग और मोठोंकी सूखी हुई पत्तियोंको कहते हैं। दूधवाली गायके लिये यह चारा दूध सुखानेका कारण समझा जाता है। कमजोर गौओंको सबल बनानेके लिये जौका दलिया पानीमें भिगोकर उचित परिमाणमें दिया जाता है और उससे मृत समान गौओंमें भी जान आ जाती है। जो भी दाना गायको दिया जाय, दलनेके बाद खूब भिगोकर या आगमें सिजाकर देना चाहिये। साबित मोटा या कड़कड़ा दाना खिलानेसे वह गोबरमें ज्योंका त्यों निकल जाता है। अतएव उससे कोई लाभ नहीं।

इसके सिवा गौओंके खानेके पदार्थोंमें सड़ा गला और दुर्गंध युक्त पदार्थ नहीं होना चाहिये। ऐसा होनेसे गौएं उस पदार्थको खाती नहीं हैं। किसी पदार्थसे एक वार मुंह ज्ठा लेनेपर फिर उनको खानेमें लगाना कठिन है। इसलिये उनके आहारके पदार्थोंकी पहले ही परीक्षा कर लेनी चाहिये।

उनके भोजनका पात्र प्रतिदिन साफ किया जाना चाहिये। उसमें जो कुछ बचा हो, वह बाहर निकालकर डाल देना चाहिये।

दूध दुहनेके पहले गायको कुछ खिला देना उचित है बिना खिलाये दूध दूहनेसे गौएं अस्थिर हो जाती हैं। उस समय उनको दूहना कठिन हो जाता है। प्रातः काल अच्छा चारा और दाना (बांट) खिला देनेसे गाय प्रसन्नतापूर्वक दूध देती है और अधिक दूध देती हैं। गायोंको व्यानेपर प्रति दिन १-२ महीने भी प्रातः काल अन्न खिलाया जाय तो उनका दूध बढ़कर डेढ़ा हो जाता है।

प्रातः काल दूध दूहलेनेके बाद गायको चरनेके लिये छोड़ देना चाहिये। गौको धूप न लग जाय, इस बातकी ओर भी ध्यान रहना चाहिये। धूप लग जाने से गौएं हांफने लग जाती हैं। जो गाय ८ सेर या इससे अधिक दूध दे उसको नीचे लिखे अनुसार आहार देना बङ्गीय सज्जन मि० गिरीश-चन्द्र चक्रवर्त्ती अपनी पुस्तकमें बतलाते हैं :—

जुआर, जौ, गेहूं इनमेंसे किसी एकका दलिया किंवा चावल तीन पाव, दालकी चूरी एक सेर, खली आध सेर बींनौले या चने या कलाई एक पाव, कलाईकी भूसी डेढ़ सेर, घासकी कुटी या शानी ६ सेर इन सबको मिलाकर और उसमें आधी छटाक नमक मिलाकर गायको खानेके लिये देना चाहिये। इसमें यदि आधा तोला गन्धक मिला दी जाय तो और भी

उत्तम। जौ, चना और बीनौले आदिको पहलेसे ही पानीमें भीगो रखना चाहिये, या आगपर चढ़ाकर पका लेना चाहिये। गायके शरीर और दूधके अनुसार उनके खानेके परिमाणमें घटी बढ़ी की जानी चाहिये। आवश्यकता मालूम पड़नेपर ऊपर लिखे पदार्थोंके साथ ४ सेर शानी और मिला देनी चाहिये हरे घासके अभावमें सूखा भी दिया जा सकता है। चावलका धोया हुआ जल और मांड गायके लिये अत्यन्त हितकारी हैं। इससे वे शीघ्र ही पुष्ट हो जाती हैं। दो पहरके पश्चात् गायको बाहर बांध देना चाहिये। सन्ध्याके समय उनको लाकर स्वच्छ और शीतल जल पिलाकर ऊपर लिखे अनुसार भोजन देना चाहिये। किसी किसीका कथन हैं कि भूसी और खली ६ घण्टे पहलेसे भिगो रखनी चाहिये और वह ठण्ढे जलके साथ पतली बनाकर गायको देनेसे उनकी दूध देनेकी शक्ति बढ़ जाती है। बच्छे और सांड़के लिये चने अत्यन्त उपयोगी हैं। गायके लिये वह उतने, उपयोगी नहीं हैं। गायके दुर्वल हो जानेपर गेहूं चावल या और कोई पौष्टिक पदार्थ खानेको देना चाहिये। हरा घास खिलानेसे गायका दूध बढ़ता है और उसमें घीका परिमाण भी वढ़ता है। बड़ी गायको भी प्रतिदिन आध सेरसे अधिक बीनौले नहीं देने चाहिये क्योंकि बीनौले उत्तेजक, गरम और पचनेमें गुरु होते हैं। अधिक खानेसे हानि करते हैं। खली देनेसे दूध और घी बढ़ते हैं।

भूसी पाचक और दूध बढ़ाने वाली है। नमक और गन्धकसे कोठा साफ रहता हैं। उसके खाते रहनेसे किसी रोगके होनेका भय नहीं रहता। धानका पुआल अत्यन्त पुष्टि कारकआहार हैं।

दूधवाली गायके लिये सरसोंकी खली विशेष लाभकारी नहीं है। उसके खानेसे चर्वी बढ़ती है और वह बढ़ी हुई चर्बी नुकसान करती हैं। तिलकी खली अच्छी होती है और उससे दूध भी बढ़ता है। परन्तु वह पुरानी हो जानेपर बहुत कड़ी हो जाती है। दूध देनेवाली गायोंके लिये तिलकी खली अत्यन्त उपयोगी है सही, परन्तु उसका अधिक परिमाणमें मिलना कठिन है। तीसी की खलीसे भी लाभ होता हैं, परन्तु पहले पहल उसको गाय इच्छा पूर्वक खाती नहीं हैं, इस कारण धीरे धीरे उन्हें इसके खानेका अभ्यास डालना चाहिये। सब प्रकारकी खली गायके लिये पुष्टिकारक हैं। उसके खानेसे गायोंकी मांस-पेशी बलवान् होकर भर जाती हैं। खून साफ होता है और दूध भी बढ़ता है। खली जल्दी ही बिगड़ जाती हैं और उसमें कीड़े भी पड़ जाते हैं। इस कारण ताजी खली काममें लानी चाहिये। यदि पुरानी खलीका व्यवहार करना पड़े तो उसकी खूब परीक्षाकर लेनी चाहिये। यदि गायको अन्न देना हो, तो उसे पहले दल लेना चाहिये और खिलानेके ५-४ घंटे पहले भिगो देना चाहिये अथवा पकाकर ठण्ढा कर लेना चाहिये। गायको सूखा घास फायदा नही पहुंचाता।

अधिक सूखी भूसी खानेसे गायका पेट फूल जाता है और कई प्रकारके रोग हो जाते हैं। कभी कभी वे रोग ही उनको मृत्युके कारण होते हैं। अधिक भात या अन्न देना भी हानि कारी है। जो चारा गायको दिया जाय, उसे खूब साफ करलेना चाहिये। खलीके टुकड़े करके भिगो देने चाहिये, परन्तु उसे अधिक देर तक भिगो नहीं रखना चाहिये। देर तक भिगो रखने से उसमेंसे दुर्गन्ध आने लगती है और गाय उसे प्रेमपूर्वक नहीं खाती। गौओंके खानेके पदार्थमें नमक और गन्धकको पीसकर मिला देना चाहिये। गायको जो आहार दिया जाय वह गोला बनाकर दिया जाना चाहिये।

हरा घास गायके लिये बड़ी अच्छी चीज है। उसमें भी दूब सीन और गांडर गायके लिये अत्यन्त लाभ कारी हैं। दूब साफ करके गायको खानेके लिये देनी चाहिये : जहां बांस होते हैं, वहां की गायोंके लिये बांसकी पत्ती भी अच्छा आहार है। गाजर मूली, पानगोभी और फूलगोभीके पत्त ईखकी पत्तियां और उसके छोटे छोटे टुकड़े, आम, कटहर, केला आदि, गायोंको खिलानेसे उनकी परिपाक शक्ति बढ़ती है और प्रसन्नतापूर्वक खाती हैं।

धानके पुआलकी अपेक्षा भी जौ और गेहूंका भूसा गायोंके लिये विशेष हितकर होता है। यदि धानका पुआल ही देना हो तो उस धानका पुआल देना चाहिये, जो हेमन्त ऋतुमें पकता है

जौ-गेहूंका तूड़ा दूधको सुखा देता है। सड़ी भूमिका उत्पन्न घास गायोंके लिये हानिकारी है। इस बातको कभी भूलना न चाहिये कि गाय जो खाती हैं उसीका दूध बनता है और वही दूध हम लोगोंके उपयोगमें आता है। खराब आहार देनेसे गायोंको कई प्रकारके रोग हो जाते हैं और वे रोग दूधके द्वारा मनुष्योंको भी दबा लेते हैं। वे रोग इतने भयानक होते हैं कि उनका आराम होना कठिन हो जाता है। रोगी गायका दूध पीनेसे बहुत लोग बीमार पड़ जाया करते हैं। जिस प्रकार माताके रोगिणी होनेपर उसका बच्चाभी रोगी हो जाता है, उसी प्रकार रोगिनी गायके दूध पीनेवालोंकी दशा होती है। जब कोई बालक बीमार पड़ता है, तब उसकी माताकी चिकित्सा की जाती है, इसी तरह गायको औषध खिलाकर नीरोग बनाकर उसका दूध पीनेसे मनुष्योंको बहुत लाभ होता हैं। अधिक परिमाणमें घास खिलानेसे गायका दूध मीठा हो जाता है और नीमकी पत्ती आदिसे उसका दूध कडुआ हो जाता है।

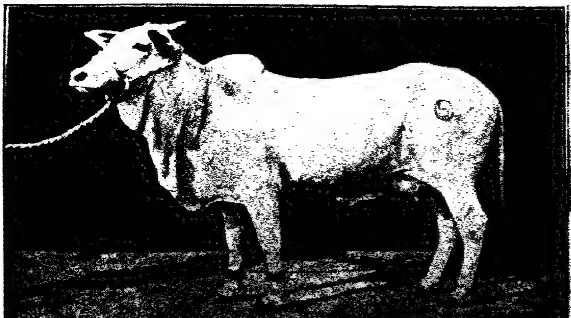
गायोंको प्यास अधिक लगती है, इस कारण उनके पीने के लिये अच्छे जलका प्रबन्ध होना चाहिये। जिस प्रकार उनके लिये शुद्ध वायुहितकर है, उसी प्रकार शुद्ध जल भी। खराब जल गायोंके शरीरमें रोग पैदा कर देता है अतएव उसकी शुद्धिपर भी पुरा ध्यान रखना चाहिये।

सतरहवां अध्याय ।

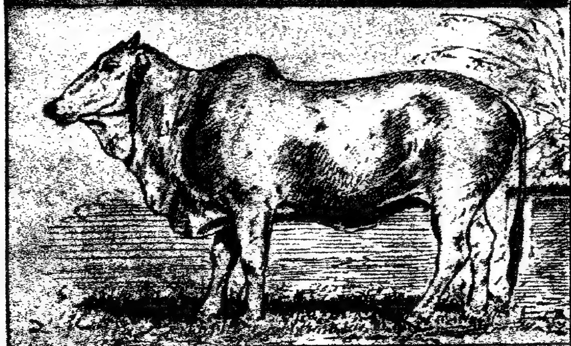


गौओंका श्रेणि-विभाग ।

विलायतवाले अपने यहांकी गौओंका क्रमिक इतिहास लिपि-बद्ध रखते हैं । किन्तु हमारे यहां इस ओर ध्यान नहीं दिया जाता । यद्यपि कई एक भारतीय और योरपीय गो-तत्त्वविद् सज्जनोंने भारतकी भिन्न भिन्न गौओंके विषयमें आलोचना की है, किन्तु किसी सज्जनने उनका वर्ग-विन्यास करनेका विशेष प्रयत्न नहीं किया । ऐसी स्थितिमें अवश्य ही मि० गिरीशचन्द्र चक्रवर्त्ती और और मि० प्रकाशचन्द्र सरकार हमारे धन्यवाद भाजन हैं, कि जिन्होंने बहुत कुछ श्रम स्वीकारकर इस ओर दृक्पात किया है । विषयकी उपयोगिताका विचार कर इस अध्यायमें हम भी भारतीय गौओंके श्रेणि विभागका दिग्दर्शन कराना चाहते हैं । इससे हमारे हिन्दी भाषी देशवासियोंको यह जाननेमें, अधिक नहीं तो आंशिक सहायता अवश्य मिलेगी कि किस प्रान्तमें किस स्थितिकी गौएं हैं । आशा है पाठक इसे अप्रासङ्गिक न समझेंगे ।









२। हरियानी गौ।

४। गुजराती गौ।

गुजराती गौ।

बम्बई प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत गुजरात प्रान्तके उत्तर भागकी गौएं भारतीय गौओंमें बहुत ही अच्छी होती हैं। गुजरातके उत्तर भागमें ही भगवान् कृष्णकी राजधानी द्वारकापुरी है। यहांकी गौ देखनेमें सुन्दर और बलिष्ठ होती हैं, दूध भी अधिक देती हैं। दस सेरसे सोलह सेर तक प्रति दिन उनके दूध देनेका परिमाण है। वहांके बैल भी खेतीके काममें उपयुक्त होते हैं। ये बैल चलते भी खूब तेज हैं। कच्ची सड़कोंपर गाड़ी लेकर शीघ्रतापूर्वक चलनेका इन्हें खूब अभ्यास है। चार पांच वर्षकी अवस्थामें ही वहांके बैल हल खींचने लग जाते हैं। इनका मूल्य इनके आकार और गुणके अनुसार कम वेशी हुआ करता है। एक अच्छी बैलोंकी जोड़ीका मूल्य २५० से ३०० सौ रुपया तक होता है। अकबर बादशाहके समयमें गुजराती बैल और गायोंकी बड़ी प्रसिद्धि थी।

गुजराती गौएं छोटी बड़ी दो प्रकारकी होती हैं। उनके शरीरका गठन भी बुरा नहीं होता। गौओंका रङ्ग सफेद, काला गगूला और छमकेदार होता है। सांड और बैल प्रायः गहरे पीले रङ्गके होते हैं। किसी किसी सांड-बैलकी पीठपर हरी धारियां होती है। सींग भी सीधे जाकर जरा मुड़क जाकर बड़े अच्छे मालूम देते हैं। थुई खूब ऊंची, कान लम्बे, शरीर

मांसल होता है। देखनेमें शान्त होते हैं। तोपें खींचनेमें ये बैल बड़े चतुर होते हैं।

हरियानी गौ।

पञ्जाबके पूर्व भागको हरियाना प्रान्त कहते हैं। इस प्रान्त की गौएं हरियानी गौओंके नामसे प्रसिद्ध हैं। भारतीय गौओंमें सबसे अधिक दूध देने वाली गौएं हरियाने प्रान्तकी होती हैं। गुजराती गौओंका नम्बर इनके बाद है। यहांकी गौ प्रायः सफेद अथवा धूसर वर्णकी होती हैं। दूसरे दूसरे रङ्गोंकी भी गौएं पायी जाती हैं, परन्तु कम। ये पूरी ऊंची होती हैं। तीन हाथसे लेकर साढ़े तीन हाथ तक होती हैं। इनका शरीर लम्बा और वजनी होता है। हालेण्ड देशकी लेकनफील्ड जातिकी गौओंके समान यहांकी गौओंका भी मस्तक ऊंचा और देखनेमें सुन्दर होता है। गला छोटा होता है और पीछेका शरीर ऊंचा। सींग लम्बे और पीछेकी ओर मुड़े हुए होते हैं। पूंछ लम्बी और सीधी होती है। यहांके बैल लम्बे-चौड़े बलिष्ठ और चलनेमें शीघ्रगामी होते हैं। साधारणतः हरियानेकी गौएं ६ सेरसे १२ सेर और कोई कोई १६ सेर तक दूध देती हैं। प्रोफेसर वालेसके मतानुसार सिन्धुदेशीय गौओंसे हरियानी गौओंकी उत्पत्ति हुई है। गुजराती गायोंसे दूध देने आदिमें इनकी बहुत कुछ समानता पायी जाती है।

हिसारमें गवर्नमेण्टकी एक पशुशाला है, जिससे किसानों-को गवनमेण्टकी ओरसे बैल दिये जाते हैं। इसी गोशालासे गवर्नमेण्टके सेना–विभागमें रसद ढोनेके लिये बैल भेजे जाते हैं। वहांकी गौओंकी अधिक प्रसिद्धि होनेके कारण वे सब प्रायः बाहर भेज दी जाती हैं। उस प्रान्तमें खास हरियानेकी गौ कम ही पायी जाती है। परन्तु आशा यही है कि गवर्नमेण्टकी दृष्टि इस ओर आकर्षित हुई है, अब शीघ्र ही हरियाने प्रान्तमें गौ-ओंकी अधिकता होगी और उस प्रान्तकी प्रतिष्ठाकी रक्षा होगी। गवर्नमेण्टने इस ओर काम भी प्रारम्भ कर दिया है। हरि-यानेकी गौओंको हांसी और हिसारकी भी गौ कहते हैं। हांसी, रोहतक, झज्झर आदि जिलेकी गौएं भी हरियानी ही कहाती हैं। इनका मस्तक प्रशस्त और उन्नत तथा गला छोटा होता है। ककुद ऊंचा आगेकी ओरसे सुन्दर और पीछेकी ओर गोलाकार और चौड़ा होता है। इनके पैर कुछ छोटे होते हैं। बैल देखनेमें बड़े सुन्दर और वलिष्ठ मालूम पड़ते हैं। ये भारीसे भारी हल खींच सकते हैं। परन्तु गुजराती बैलोंके समान शीघ्र नहीं चल सकते। गाय भी देखनेमें बड़ी सुन्दर होती हैं। यहांकी गाय बाहर ले जाने पर कुछ कम दूध देती हैं। इसका कारण उत्तम गोचारण भूमिका न होना ही है। इनका दूध खानेमें बड़ा ही स्वादिष्ट होता है। यहांकी एक एक गायका दाम ४०-५० रुपयेसे लेकर ६०-७०-७५ रुपये

तक होता है और बैलोंका दाम ७५ से लेकर २०० तक होता है। बङ्गालकी ओर ले जाने पर इन गौओंका मूल्य दूना हो जाता है।

सिन्धु देशी गौ।

सिन्धु प्रदेश कथिवरके दक्षिण-ओरके बनमें और जीर नामक पहाड़में एक प्रकारकी गौ होती हैं वह बहुत दूध देने-वाली होती हैं। उनके लक्षण भी सभी अच्छे होते हैं।

अनेक विषयोंमें ये भारतीय गौओंसे भिन्न मालूम पड़ती हैं। साधारणतः वे दो रङ्गकी होती हैं, परन्तु उनके शरीरमें दोनों रङ्ग इस प्रकार मिल जाते हैं कि वे देखनेमें एक हीरङ्गकी मालूम देती हैं। आगेके भागकी हड्डी बढ़ी हुई होती है, अतएव उनका मस्तक गोल और देखनेमें सुन्दर होता है। इनके कान खरगोशके कानके समान लम्बे और बीचसे फटकर नाक तक लटके हुए होते हैं। सींग छोटे होते हैं, और पीछेकी ओर टेढ़े होते हैं। इनका मस्तक छोटा और दृढ़ होता है। गलकम्बल बड़ा होता है। पूंछ लम्बी और उसमें बाल भी बड़े बड़े होते हैं। इस जातिकी गौ मझोले कदकी और गठीली होती है। बच्चे उत्पन्न करनेका इनका कोई नियम नहीं है। बंधी रहनेसे इनका स्वभाव चिड़ चिड़ा हो जाता है। अतः शीघ्र ही इनका दूध भी कम हो जाता है। ये प्रति दिन १२ सेरतक दूध देती हैं। इनका दाम ६० रुपये तक होता है।

उम्र ढलनेपर ये आलसी हो जाती हैं। इनके पैर लम्बे और कोमल होते हैं। दूध दूहनेके समय इनके न्याना (बन्धन) लगा दिया जाता है। इनमें कई भेद हैं।

जीर पहाड़की गौ।

सिन्धु देशकी तराईमें दूध देनेवाली एक गौ पायी जाती है। इस प्रदेशमें मुसलमानोंकी वस्ती अधिक है। अतएव वहां इन गौओंको पालते हैं। यहांके अधिवासी खेती नहीं करते, किन्तु गोचारणके द्वारा ही अपना निर्वाह करते हैं। एक जङ्गलसे दूसरे जङ्गलमें, इसी प्रकार वे गौओंको चराया करते हैं ५०, ५० गौओंका एक दल होता है। इन गौओंका आकार और रङ्ग दोनों ही बड़े सुन्दर होते हैं। यहांकी गौ प्रायः लाल रङ्गकी होती हैं। बीच बीचमें किसीके सफेद लकीर होती हैं। ये मझौले कदकी होती हैं। इनके पैर छोटे और मोटे होते हैं। माथा बड़ा, सींग खरखरे, गला छोटा और बड़ा तथा गलकम्बल बहुत लम्बा होता है। इस जातिकी गौ खूब दूध देती हैं, क्योंकि गोचारण भूमिकी इन्हें सुविधा है और सांड भी इनको अच्छे मिल जाते हैं। यहाकी गौ १५ महीनेके बाद बच्चे देती हैं। प्रतिदिन १५ सेर तक दूध दे सकती हैं। ४५ से लेकर ६० तक इनका दाम होता है। ये बड़ी शान्त होती हैं। यहां बच्छोंको बैल बनानेकी नृशंस प्रथा नहीं है। वहां बिना बधिया

किये ही बैलोंसे खेती की जाती है। बलवान् एक जोड़ी बैलोंका मूल्य ८० रुपये हैं। खेतीके काममें जैसे ये शिथिल होते हैं वैसे ही गाड़ी खीचनेमें भी तेज नहीं होते।

मुलतानी गौ।

मुलतान जिलेमें अच्छी जातिकी गौ होती हैं। इनके अन्य गुण तो हिसारकी गौओंके समान हैं परन्तु ये उतनी ऊंची और लम्बी नहीं होती। ये मझोले आकारकी गठीली, रङ्गकी काली अथवा लाल होती है। बहुतसी गौओंके शरीरमें काले काले दाग होते हैं। ये सुस्त और बलवान् होती हैं। दूध भी अधिक देती हैं। इनके सींग लम्बे नहीं होते। ये प्रतिदिन नौ सेर दस सेर दूध देती है। मुलतान जिलेमें इस जातिकी गौ ३० से ६० तकमें बिकती हैं। कलकत्ताके चितपुरके बाजारमें इनका दाम २०० से भी अधिक है, कम नहीं।

माराटगोमरी गौ।

माण्टगोमरी पञ्जाबके एक जिलेका नाम है। यह मुलतानके पूर्व उत्तरकी ओर हैं। यहां हरियानेकी गौओंके समान एक तरहकी गौएं होती हैं। ये छोटी और गठीली होती हैं। इनके पैर छोटे होते हैं। इनका मस्तक सुन्दर, सींग छोटे गला पतला, पैरकी हड्डी सुन्दर, पूंछ लम्बी और पतली, शरीरका रङ्ग अनेक प्रकारका होता है। परन्तु साधारणतः इनका वर्ण लाल



एक मन दूध देनेवाली गोपाल मन्दिर कलकत्ताकी मुलतानी गौ।

सफेद और धूसर होता है। कोई कोई चितकबरी भी होती हैं। वहां वृष्टि कम होती हैं। घासका मैदान बहुत बड़ा है। सरकारकी ओरसे वहां नहरें खुदी हुई हैं। गोपालक अपनी गौओंको लेकर इसी नहरके किनारे रहते हैं। ये गौएं ८ सेर प्रतिदिन दूध देती हैं। साधारणतः इनका मूल्य ५० से ६० तक है। परन्तु अच्छी गायें १०० और इससे भी अधिकमें बिकती हैं।

अयोध्या प्रान्तकी गौ।

अयोध्या प्रान्तमें बगौधा नामकी गौओंकी एक जाति होती है। इनके सींग छोटे, मस्तक प्रशस्त, ऊंचाई साढ़े तीन हाथ और शरीर मोटा होता है। ये ५।६ सेर दूध देती हैं। बैल हल खींचने, गाड़ी खींचने और पुरवट खींचनेमें बड़े दक्ष होते हैं। अत्यन्त परिश्रमी और कामकाजी होते हैं।

अयोध्या प्रान्तके पर्वत और जङ्गलोंमें एक तरहकी जङ्गली गौएं होती हैं, जो दल वद्ध होकर घूमा करती हैं। इस जातिके बैल पाले जानेपर सब काम अन्यान्य बैलोंके समान कर सकते हैं। इन गौओंको अधिक दूध नहीं होता।

मथुरा और वृन्दाबनमें देशी तथा कोशी नामके दो भेद गौओंके होते हैं। ये गौ खूब दूध देती हैं। देखनेमें मोटी और सुन्दर होती हैं।

बुन्देलखण्डी गौ।

यहां मझोले आकारकी गौएं होती हैं, इनके सींग लम्बे और अलग अलग होते हैं। पूंछके अन्तमें गुच्छेदार बाल चँवरके समान बनजाते हैं। इनके खुर कठिन और स्वच्छ होते हैं। इनकी गर्दन मोटी किन्तु छोटी होतो है। भारतीय गौओंमें इस जातिके वैल भी अत्यन्त परिश्रमो और काम-काजी होते हैं।

यहांकी गौ जाति प्रायः सफेद और गहरे धूसर वर्णकी होती है, किसी किसीके अङ्गमें चिकत्ते भी होते हैं। ये देखनेमें धीर, परिश्रमी और सुलक्षण सम्पन्न होती हैं। इनका शरीर गठीला और बलवान् होता है।

पहाड़ी गौ।

इस जातिको हिमालयकी पहाड़ी गोजाति कहा जा सकता है। इनमें कोई कोई अधिक दूध देनेवाली भी होती हैं। ये काली और लाल (dawn and brown) रंगकी होती है। आकार भी इनका छोटा होता है। थुई प्रायः नहींके समान होती है। इस गोवंशमें जो साम्प्रदायिक (Sub- Types) शाखाजाति देखी जाती हैं, उसमें दार्जिलिङ्ग और सिकमकी गौएं प्रधान हैं। पहाड़ी गौ देखनेमें सुन्दर और मोटी होती हैं। परन्तु बनैली गौओंके समान इनके भी दूध अधिक नहीं होत ।

दार्जिलिङ्ग शहरमें विलायती गौओंके समान बहुतसी गौएं देखी जाती हैं। वे प्रतिदिन ५-६ सेर दूध देती हैं। ये गौएं वहींकी हैं, बलवान् और सुन्दर हैं। इनकी पीठपर थुई होती है। इनके शरीरके लंबे लोम घने और चिकने होते हैं सारा शरीर बालोंसे ढका रहता है। ये अनेक वर्णकी होती हैं।

यहां बिना थुईकी छोटी एक प्रकारकी बनैली गौएं भी देखी जाती हैं, परन्तु उनको अधिक दूध नहीं होता।

सिकमकी गौ दुग्धवती हैं, उनके रोम मोटे होते हैं, थुई होती नहीं। नेपाल और सिमलेके पहाड़ोंमें भी एक छोटी जातिकी गौएं देखी जाती हैं। परन्तु इनके भी विशेष दूध नहीं होता।

केरी जातिके विलायती सांडके साथ इस जातिकी गौओंका संयोग कराकर सङ्कर (Cross) उत्पादन करनेका प्रयत्न किया जा सकता है। हां, डाङ्गी नामकी एक तरहकी पहाड़ी गौएं जलपाईगुड़ीके इर्द-गिर्द पायी जाती हैं, ये बड़ी परिश्रमी होती हैं।

भूटानमें जङ्गली सङ्कर गौओं और खसिया जातिकी गौओंके संयोगसे उत्पन्न भूटिया जाति और सिरी जातिकी गौएं पायी जाती हैं। इन दोनोंमें कोई भी अधिक दूध नहीं देती।

खसिया पहाड़में मझोले आकारकी एक तरहकी गौ होती है, परन्तु इसको भी दूध अधिक नहीं होता।

आसाम और वहांके पहाड़ी प्रान्तमें एक भांतिकी छो[illegible]ी गो जाति देखी जाती है। यह बड़ी परिश्रमी और चञ्चल-[illegible]कृति

विशिष्ट होती है। जोतनेमें इस जातिके बैल अच्छा काम दे सकते हैं। आसाम और श्रीहट्ट प्रान्तकी गौएं वहां वालोंकी लापरवाहीसे अपनी ठीक दशामें नहीं है।

अन्यान्य पहाड़ोंमें 'गवाय' वा गयल संज्ञक जङ्गली गायें होती हैं, परन्तु उनको भी अधिक दूध नहीं होता। उनका आकार भैंसके आकारसे मिलता जुलता है, इस जातिके बैल बलवान होते हैं और खेतीके काममें उपयोगी होते हैं।

काश्मीर और तिब्बत-प्रदेशमें एक प्रकारकी गौ होती है, उसके लोम बड़े होते हैं, परन्तु दूध कम होता है।

कुमायूंकी गौ।

कुमायूंकी गौओंका शरीर गठीला और छोटा होता है। पैर छोटे और मस्तक ऊंचा तथा सुगठित होता है। मुख-मण्डल सुन्दर होता है। गला छोटा और मोटा होता है। इनकी पीठ सीधी होती है। इन गायोंका रंग अनेक प्रकारका होता है। इनके शरीरके लोम घने और चिकने होते हैं। ये जङ्गली गौओंके समान क्रोधी और चञ्चल होती हैं। वनके अनेक प्रकारके घासोंके खानेसे ये अत्यन्त पुष्ट रहती हैं। इनके दूधमें घी अधिक होता है। इनका दूध भी अधिक मीठा होता है। साधारणतः ४—५ सेर ये दूध देती हैं। ये शीत प्रधान देशमें रहती हैं इस कारण विलायती गौओंसे इनकी बहुत कुछ समता

समानता प्रतीत होती है। दूधवाली गायें ५) रु० से २५) रु० तकमें मिलती हैं। पशु चिकित्सक ले० वर्कर साहब कहते हैं कि नैनीताल और अलमोड़ा प्रान्तकी गोजातिके संयोगसे इनके बच्छे बच्छी पैदा कराया जाना विशेष उपयोगी है। बृटनी सांडसे भी अच्छी सङ्कर गाय उत्पन्न करायी गयी हैं। और भी इस कार्यमें अधिक सफलता हो सकती हैं। तीन वर्षकी उम्रमें ही ये कुमायूंकी गौएं गर्भधारण करने योग्य हो जाती हैं।

बंगाली गौ।

मेदिनीपुरके पास एक गोप नामका स्थान है और बालेश्वर जिलेके जलेश्वर नामक स्थानमें लक्ष्मणनाथके पास भी एक गोप नामक स्थान है। इसी प्रकार बङ्गालमें और कई स्थान हैं, जहां पहले बहुत गौएं रहा करती थीं। अकबर बादशाहके समयमें भी बङ्गालमें बहुत गौएं पायीं जाती थीं और वे अच्छी होती थीं, परन्तु इस समय बङ्गालकी वह दशा नहीं है। बाहरकी गौओंसे ही बङ्गालका अभाव दूर होता है।

फिर भी बांकुड़ा जिलेमें एक जातिकी छोटी गौएं देखी जाती हैं। वे दूध अधिक नहीं देती, किन्तु परिश्रमी और कष्ट-सहिष्णु खूब हैं। हलोंके लिये इस जातिके बैल अच्छा काम देते हैं। बैलोंका मूल्य गत ५ वर्षोंमें चौगुना बढ़ गया है।

पटनाई गौ।

गत सन् १८५७ ई० के सिपाही विद्रोहके बादकई वर्षों तक

पटनेके कमिश्नर मि० टेलर साहब थे। आप पहले गयाके डिस्ट्रिक्ट जज थे। मिजाज भी आपका बहुत कड़ा था। आपने बांकीपुरकी म्युनिसिपलिटीकी ओरसे एक बार अस्ट्रेलियासे दो सांड मंगवाये थे। उनमें एकका नाम सुलतान और दूसरेका नवाब रखा गया था। एकका मूल्य था ८०० रु० और दूसरेका ५००) ये दोनों सांड दो तीन वर्षके बीचमें ही मर गये थे। परन्तु, पटनेमें इतने ही समयमें उनके वंशका अच्छा विस्तार हो गया था। इन सांडोंसे उत्पन्न पटनेकी संकर गौएं पटनाई और टेलर वंशी नामसे विख्यात हो गयी। उनके दूधका परिमाण ६ सेरसे २५ सेर तक है। वे सांड खूब बलवान थे और सवा तीन हाथ उनकी ऊंचाई थी। पटना, बांकीपुर वाकरगञ्ज, चौहट्टा, दानापुर आदि स्थानोंमे इसी जातिकी गौएं पायी जाती हैं। इनके थुई नहीं होती देखनेमें बड़ी सुन्दर होती हैं शरीरकी बाढ़ लम्बी और सींग दोनों विलायती गौओंकी भांति अर्द्ध गोलाकार होते है। उनका रङ्ग लाल सफेद और धूसर होता है। डेढ़ डेढ़ सौ रुपये तकमें ये गायें बिकती हैं।

पटनेके पास कार्तिकके महीनेमें हरिहरक्षेत्रका मेला लगता है। उसे छत्रका भी मेला कहते हैं। वहां सभी प्रकारके पशु बिकते हैं। पटनेकी ये शङ्कर गौएं इसी मेलेके कारण बङ्ग देशमें भी चारों ओर फैल गयी हैं। परन्तु बङ्गदेशके गोपालक लोग अच्छे सांडकी आवश्यकताको नहीं जानते। अतएव वे गौएं बङ्गालमें आकर अब दुर्बल सन्तान उत्पन्न करने लगी हैं।

जनकपुर मुजफ्फरपुर दरभङ्गा आदि प्रदेश गौओंके लिये पहले प्रसिद्ध थे। परन्तु इस समय वहां भी गौओंकी बहुतायत नहीं और न अच्छी गौएं ही मिलती हैं।

भागलपुरी गौ।

भागलपुरी गौओंके पैर लम्बे होते हैं। उनका रङ्ग सफेद होता है। परिश्रमी और कर्मठ भी खूब होती हैं। बर्दवानकी कुछ गौएं हिसारके सांडोंके उत्पन्न हुई हैं। वे ७।८ सेर दूध तक देती हैं।

कलकत्तेकी गौ।

कलकत्तेमें बहुत अच्छी अच्छी गौएं देखी जाती हैं, क्योंकि यहांकी गौएं विलायती हिसारी और मुलतानी सांडोंसे बच्चे पैदा करती हैं और वे होती भी प्रायः इन्हीं स्थानोंकी हैं। अतएव कलकत्तेमें अच्छी अच्छी गायें देखी जाती हैं। काशीपुर और चितपुरके बाजारोंमें प्रति दिन मुलतानी गौ बिका करती हैं। ये ६ सेर तक दूध देती हैं। इसके अतिरिक्त अङ्गरेजोंके और बड़े आदमियोंके घरोंमें देश देशान्तरकी गौएं देखी जाती हैं। कलकत्तेमें जो गौएं बड़े आदमियोंके घरपर बंधी हुई हैं उनकी तो बात नहीं, किन्तु ग्वालोंके घर कसाईखानोंसे कम नहीं! बड़ी तङ्गी जगहमें गौएं दुर्दशाके साथ खड़ी रहती हैं। न बैठनेको स्थान मिलता है और न हिलने टह-

लनेको जगह । खड़े खड़े उनका दूध सूख जाता है । लोभके कारण उनके बच्चे कसाइयोंको बेच दिये जाते हैं और फूका लगाकर अस्वाभाविक रीतिसे गोएं दूही जाती हैं। जिससे वे ठांठ रह जाती हैं, अन्तमें उन्हें भी कसाईके यहीं जाना पड़ता है।

बङ्गालके यशोहर, खुलना और वरीसाल जिलेमें धानकी खेती अधिक होती हैं। वहांके गृहस्थ अधिक गौएं रखते हैं। परन्तु उनमें अच्छी गौओंकी संख्या बहुत ही कम है।

ढाका और फरीदपुर जिलेमें देशाल नामकी गौएं हैं इस जातिकी गाय लम्बी और ५० इञ्च ऊंची होती हैं। यह बहुत ही शान्त होती हैं और प्रतिदिन ८ सेर तक दूध देती है।

मैमनसिंहकी गौ।

हरिहरक्षेत्रके मेलेके बाद मैमनसिंह जिलेके जमालपुरमें एक मेला होता है। वहां बहुतसी गौएं खरीदी और बेची जाती हैं। वहां छत्र और अयोध्या प्रान्तकी गौओंकी अधिक बिक्री होती है। मैमनसिंह शहरमें ४।५ सेर दूध देनेवाली बहुत गौएं हैं। वहांके जमीदार और रईसोंका गौओंके प्रति अच्छा ध्यान है। बहुतसे जमीदार और रईसोंने अपने यहां मुलतानसे गौ और सांड मगवाकर रखे हैं, अतएव इस प्रदेशमें गो जातिकी उन्नति भी विशेष हुई है।

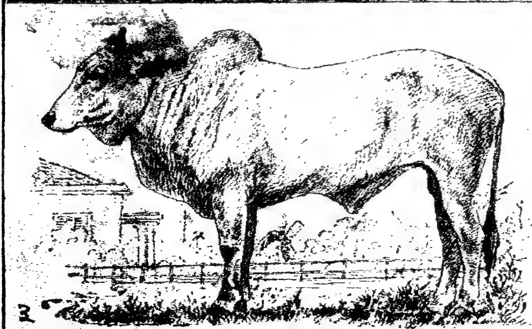
गफूर गांव नामक स्टेशनके पास एक मेला लगता हैं, उसमें गौओंकी बिक्री होती है। परन्तु वहां अच्छी दूध देने

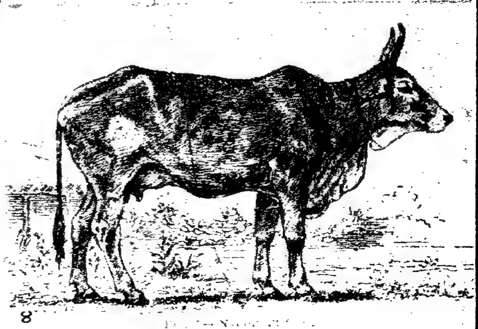
१। दार्जिलिङ्गकी गौ।

२। नेलोरका वैल।









घाली गौ नहीं आती। भैरवबाजार और उसके समीपके स्थानों-में काशीपुर और हरिहर क्षेत्रकी गौएं प्रतिवर्ष आती हैं। परन्तु उनकी यथोचित सेवा शुश्रूषा न होनेके कारण वे वैसी नहीं रह जाती।

कुमिल्ला श्रीहट्ट आदिमें भी अच्छी गौ नहीं पायी जाती। पहाड़ी प्रदेशोंसे प्रायः यहां गौ आती हैं परन्तु थोड़े दिनोंके बाद ही वे दुर्बल हो जाती हैं।

नागपुरी गौ।

इस जातिकी गौओंकी जन्मभूमि मध्यप्रदेशके अन्तर्गत नागपुरका प्रान्त है। पहले दिल्लीसे लाकर यहां गौ पाली जाती थीं। इस समय समस्त मध्यप्रदेशमें वे ही गौएं पायी जाती हैं। ये गौ शान्त होती हैं और प्रतिदिन १० सेरसे १६ सेर तक दूध देती हैं, परन्तु इनका दूध अच्छा नहीं होता। ये गौ बहुत शीघ्र चल सकती हैं। वहांके बैल गाड़ी खींचनेके काममें आते हैं। ५० वर्ष पहले यहांके धनी बलिष्ठ बैलोंको गाड़ीमें जोतते थे, और बड़े यत्नसे उनका वंश बढ़ानेका प्रायः करते थे। आजकल उस ओर उतना ध्यान नहीं दिया जाता। अतएव यहां अच्छी अच्छी गौओंका भी अभाव हो रहा है। वहांकी गौएं लम्बी और पतली होती हैं। कोई कोई गाय ३॥ हाथ तक ऊंची होती हैं। इनके सींग चार फीट ऊंचे और ऊपरकी ओर टेढ़े होते हैं। माथा और थुई

लम्बी होती है, पर सुन्दर नहीं होती। पूंछ लम्बी और पतली होती है। पूंछके बाल बड़े काले और चिकने होते हैं।

इन गौओंके पैर खूब लम्बे होते हैं इसलिये इनका शीघ्र चलना स्वाभाविक है। ये बहुत मोटी नहीं होतो।

हिसारके बैलोंसे यहांके बैलोंका यह भेद है कि ये गाड़ीमें घोड़ोंके समान तेज़ चल सकते हैं परन्तु अधिक भार खींचना इनके वशकी बात नहीं है। इनकी गाड़ी इक्केके समान दो पहियों वाली होती है। ये नीलिमा लिये सफेद होते हैं। भारतीय बैलोंमें ये सबसे सुकुमार होते हैं। यहांकी गौओंका मूल्य ६०) से सौ तक होता है और बैलोंका मूल्य दो सौसे चार सौ तक होता है। इस प्रान्तकी गौए हरियानी गौओंके समान अधिक बच्चे नहीं पैदा करती। ये एकबार प्रसव करनेपर अधिक दिनों तक दूध देती जाती हैं। इनमें मालवी और जैतपुरी खैरी और पारसरानी इन चार जातियोंकी गौएं बहुत अच्छी होती हैं।

दक्षिणका गोवंश।

मद्रास प्रदेशमें गौओंकी अधिकता है। इस प्रदेशमें मैशोर और अङ्गोलकीही गौ प्रसिद्ध हैं और ये किसी किसी बातमें भारतकी सब गौओंसे श्रेष्ठ हैं। त्रिचिनापल्ली, मदुरा, तिनोवेली, अनन्तपुर आदि स्थानोंकी प्रदर्शनियों और मेलोंमें यहांकी गौएं सर्वोत्कृष्ट प्रमाणित हुई हैं।

मद्रास प्रान्तकी गौ ६ जातियोंमें विभक्त हैं (१) मैशोर (२) नेलोर, वा अङ्गोल (३) काङ्गयम (४) पालिकोलम (५) कप्पिलियान (६) गमसुर।

मद्रास प्रान्तकी सब गौओंका प्रधानतः दो भागोंमें विभाग कियां जा सकता है। (१) नादूदाना और (२) दादूदाना। पहले जो गौओंके ६ विभाग किये गये हैं वे दादूदानाके अन्तर्गत हैं। अन्य दूसरी श्रेणीकी गौ नादूदाना विभागमें आजाती हैं। दादूदाना श्रेणीकी गौओंकी संख्या बहुत हो थोड़ी है। ये अधिक दामपर बिकती हैं और बलवान् होती हैं।

मेशोर राज्य तथा उसके पूर्वीय भागमें दोनों श्रेणियोंकी गौएं होती हैं। मैशोर राज्यमें नादूदाना श्रेणीको गौ अधिक हैं। इसी जातिके बैलोंसे वहांकी खेती होती है और इसी जातिकी गायें दूधके लिये वहां पाली जाती हैं।

धनो किसान तथा अन्य धनी लोग दादूदाना जातिके गो-जात बैल रखते हैं। इनकी संख्या इस प्रदेशमें थोड़ी है। ये बलवान्, शक्तिवान् और वृहत्काय होते हैं, कठिनसे कठिन परिश्रमकर सकते हैं, अतएव गाड़ी आदि खींचनेका काम इनसे लिया जाता है। ये चलनेमें बहुत तेज होते हैं। हलीकर, चित्रल-दुर्ग और हगलवाड़ी गोवंश भी अमृतमहल जातिके ही अन्तर्गत है। मामूली घोड़ोंसे घुड़दौड़के घोड़ोंमें जिस प्रकार विशेषता होती है, उसी प्रकारकी विशेषता संसारकी अन्य गौओंसे उक्त गोवंशमें है।

अमृत महालकी गौ ।

मैशोर राज्यकी एक गोजातिका यह नाम है। मैशोरके राजा सिक्का देवराज उदियारने इस जातिकी गौओंकी सृष्टि करायी। नवाब हैदरअलीने इनकी उन्नतिकी और टीपू सुलताननेे इस वंशको और भी उन्नत बनाया।

ई० सन् १५७२ से १६०० तक विजयानगरम्‌के राजप्रतिनिधि विजयनगरम्‌से हालिकर नामकी एक जातिकी गौ लाये और श्रीरङ्गपट्टम्‌में इसके वंशका विस्तार कराया। यही गौ अमृत-महाली गौओंकी आदि जननी है। इसके बाद मैशोरके राजाओंके ये सब गौएं हाथमें आ गयीं।

मैशोरके भिन्न भिन्न राजाओंने इन गौओंपर अपना अधिकार रखा। जब सिक्का देवराज उदियारका अधिकार इस गोवंशपर हुआ, तब उन्होंने इनके लिये विशेष विधि व्यवस्था कर दी। अनेक स्थानोंसे गौ मंगवाकर उन्होंने इन गौओंकी संख्या बढ़वायी। इन गौओंके चरनेके लिये उन्होंने अपने राज्यके भिन्न भिन्न स्थानोंमें २१० माठ गोचारणके लिये स्थायी रूपसे नियत कर दिये। आज भी वे सब गोष्ठ वर्तमान हैं। वे शीत और वर्षाकालके उपयोगी हैं। वहां सब मौसिमोंमें सुख-स्वच्छन्दताके साथ तरह तरहके घास खाकर गौएं बड़ी स्वस्थ रहती हैं और इसीलिये वे लम्बी चौड़ी और बलिष्ठ होती हैं। सिक्का देवराज उदियारके समयसे ही राज्यमें

गो-विगभा नामसे एक विभाग खुला हुआ है। वह वर्षके अन्तमें गौओंकी गणना कराते और अपने नामके एकांशकी छाप उनके शरीरपर लगवा देते। इसी विभागसे खास राज-घरानेके लिये दूध, घी, मक्खन आदि जाता था। सिक्का देव-राज उदियारने इस विभागका नाम "बेनीचावादी" रखा था। हैदरअलीके अधिकार स्थापनके बाद वे गौएं भी उसके अधि-कारमें आगयीं। हैदरअलीने नागोरके राजा और दूसरे कई सरदारोंको परास्तकरके उनके गो-बैल मंगवा अपनी गौओंकी संख्या बढ़ायी थी। राज्यके भिन्न भिन्न स्थानोंमें हैदरअलीके ६० हजार बैल थे। वह युद्धके समयमें इन बैलोंसे रसद, तोप, गोला-बारूद आदि ढोनेका काम लेता था। हैदरअलीका पुत्र टीपू सुलतान जब सिंहासनपर बैठा, तब उसने इस विभागकी और भी उन्नति की। उसने "बेनीचावादी" नाम बदलकर इस विभागका नाम "अमृतमहाल" कर दिया। इसने 'हागलवादी' और 'पोली गार' नामक गोजातिसे अपनी गौओंकी संख्या बढ़ायी थी। उसके इस विभागकी उन्नतिके लिये समय समयपर निकाले हुए आज्ञा-पत्र मिलते हैं। इन आज्ञा पत्रोंमें गौओंके आहार आदिकी ही व्यवस्था है।

टीपू सुलतानने इस विभागमें बहुतसे मनुष्योंको काम करनेका अवसर और स्थान दिया था। कुछ लोग बैलोंको बचपनमें हल खींचने और तोप टानने आदिकी शिक्षा दिया करते थे।

वर्षके अन्तमें सब गौओंकी गणना होती थी। उस समय टीपू सुलतान स्वयं वहां उपस्थित रहा करता था और अच्छी गौओंके लिये अपने कर्मचारियोंको पारितोषिक दिया करता था। तदनन्तर अङ्गरेज कर्मचारी इन सबका काम चलाते थे।

चेलमब्रूमकी सहायताके लिये हैदरअलोने इन्हीं सब बैलोंके रथपर २॥ दिनमें सौ मीलका रास्ता तय किया था। हैदर-अली किसी युद्धमें पराजित भी हो जाता था तो इन बैलोंकी सहायतासे उसकी कुछ भी युद्ध सामग्री शत्रुओंके हाथ नहीं लगती थी। कारण बैल इतने शीघ्रगामी थे कि, शत्रुको उनका पीछा करके भी खाली हाथों लौटना पड़ता था। हैदर-अलीका सभी सामान बैल ही ढो लाया करते थे। ये बैल सैनि-कोंकी अपेक्षा शीघ्रतासे चल सकते हैं। टीपू सुलतान इन्हीं बैलोंकी सहायतासे जनरल मेटरके साथ वाले युद्धमें बदनौर नगरके उद्धारके लिये दो दिनमें ६३ मील और एक महीनेमें सारे दक्षिण प्रदेशमें घूम आया था।

ड्यूक आफ वेलिङ्गटनने इन्हीं बैलोंकी सहायतासे बड़ी जल्दी लड़ाईका रास्ता तय करके सैनिकोंको विस्मित कर दिया था। पेनिन्सुलाके युद्धमें इन बैलोंकी सहायता न मिलनेके कारण वह बड़ा दुखी हुआ था। शीघ्रगति परिश्रम और कष्ट-सहिष्णुता आदि देखकर वह इन बैलोंपर मुग्ध हो गया था और उसने उस समयके सर्व प्रधान सेनापति

स्टुअर्ट साहबका ध्यान इन बैलोंकी ओर आकर्षित किया था।

सन १८४२ ई० में कप्तान डेविडसन काबुल भेजे गये थे। उस समय उनके साथ २३० अमृतमहाली बैल थे। उन्होंने उन बैलोंकी सहायतासे बड़ी ही फुर्तीके साथ 'टीरा पर्वत' के दुर्गम पहाड़ी मार्गोंको तय किया था। अपनी रिपोर्टमें कप्तान साहबने इन बैलोंकी बड़ी प्रशंसा की है। बैल उस समय १६ घण्टे से अधिक समय तक गाड़ी खींचा करते थे।

१८०८ ई० में मैशोरके कमिश्नरने अपनी रिपोर्टमें इन बैलोंको परिश्रमी कष्ट-सहिष्णु और सैनिकोंकी अपेक्षा अधिक शीघ्र चलनेवाला लिखा है। उन्होंने इनको पृथिवीके समस्त बैलोंसे श्रेष्ठ बतलाया है। १८६६ ई० में प्रोफेसर वेल्सने इस मतका समर्थन किया है।

टीपू सुलतानके अनन्तर इस गोवंशपर अङ्गरेजी गवर्नमेण्ट-का अधिकार हुआ। अङ्गरेजी गवर्नमेण्टने इनकी देख-रेखका भार मैशोर दरबारके हाथमें दे दिया। टीपू सुलतान अपनी सेनाकी कामयाबी इन्हीं बैलोंकी सहायतासे ही समझते थे। परन्तु मैशोर दरबारके लिये वैसा कोई काम नहीं था। अतएव इनकी देख-रेखमें त्रुटि होने लगी। मैशोर दरबारकी अधीनता-में १३ वर्ष रहनेमें ही इस वंशके लोप होनेकी सम्भावना हो गयी। यह देखकर अङ्गरेजी सरकारने उसकी देख रेखका भार

फिर अपने हाथमें लिया और मद्रासके कमिश्नरके अधीन उस विभागको कर दिया। इसके पश्चात् दस वर्षोंमें इस जातिकी गौओंकी विशेष उन्नति हुई। १८४० ई० में मैशोर दरबार और अङ्गरेजी सरकार दोनोंके गाय बैल मिला दिये गये। १८६० ई० में गवर्नमेण्टने इस गो-विभागको तोड़कर अपने गाय बैलों को बेच दिया। बेच तो दिया, किन्तु फिर उनका अभाव खटकने लगा, इस लिये १८६६ ई० में मैशोर दरबारकी सहायतासे पुनः इन अमृतमहालके गाय-बैलोंको एकत्र करना प्रारम्भ किया।

गवर्नमेण्टने गाय बैलोंको बेचा, उस समय मिसरके पाशाने गाय और बैल खरीद लिये थे तथा मैशोर महाराजने भी बहुत-सी खरीद करके अपने यहां गो-बैल रख लिये थे। इसलिये गवर्नमेण्ट जब इस जातिके गाय-बैलोंको एकत्र करने लगी, तब उसे बड़ी बड़ी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा था। परन्तु उन कठिनाइयोंको कुछ भी परवा न कर सरकारने बड़े बड़े प्रयत्नोंसे १८७० ई० में ४ हजार गाय और १०० बैल इकट्ठे करके पुनः एक गो-विभाग कायम किया। इसके बाद १८८३ ई० में गवर्नमेण्टने अपना यह विभाग दो लाख रुपये लेकर मशोर दरबारको दे दिया। मैशोर दरबारसे गवर्नमेण्ट हर साल दो सौ बैल लिया करती है और उसका मूल्य देती है। तबसे इन गौओंपर मैशोर दरबारका ही अधिकार हो गया। मैशोर दरबारने इस विभागका अलग प्रबन्ध कर रखा है। इस

विभागमें अनेक कर्मचारी नियुक्त हैं। वे गौओंकी जन्म मृत्यु आदिका पूरा व्यौरा लिखकर प्रति मास उसकी रिपोर्ट पेश करते हैं।

मैशोर राज्यके सेना विभागके कर्मचारीके नाम पत्र लिखनेसे इस जातिकी गौ मिल सकती है। साधारण मूल्य एक बैलका १००) होता है और बैलोंकी एक अच्छी जोड़ी ५००—७००) सौ रुपये तकमें आती है। एक समय इसी जातिका एक जोड़ा बैल बहुत अधिक बोझ लेकर रेतीले मार्गसे होकर गया था इस कारण वह जोड़ा ८०० रुपयेमें बिका था। १८६० ई० तक हालिकर, हागलबादी और चित्रलदुर्ग--गौओंकी ये तीन जातियां अलग अलग थीं। परन्तु १८६६ ई० में गवर्नमेण्टने अपना गो-विभाग उठाकर जब फिर इस गो-विभागकी स्थापना की तबसे ये तीनों गोबंश आपसमें मिल गये और फिर तो दूसरी दूसरी जातिकी गौओंसे भी इनका संमिश्रण हो गया। उक्त तीनों जातिकी गौओंमें आकृतिगत कोई भेद नहीं है। जो भेद है भी, वह बहुत ही थोड़ा। गोएं अधिक दूध नहीं देतीं। प्रति दिन दो सेर दूध देती हैं। इसका कारण यह है कि ये एक तरह जङ्गली अवस्थामें रहती हैं।

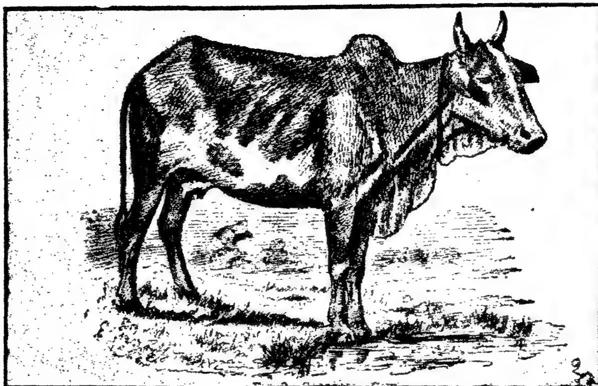
मैशोर राज्यके ये बैल गाय कई दलोंमें विभक्त हैं। एक दलमें दो सौ गाय, १२ सांड और उनके बछड़े बछड़ी होती हैं। इनकी रक्षाके लिये एक चौकीदार और दो अहीर नियुक्त हैं।

गौओंकी संख्याके अनुसार एक एक दलके लिये तीनसे नौतक माठ नियत हैं। गौओंके सब दल ३४ भागोंमें विभक्त हैं। इस एक एक भागमें २।३ दल तक शामिल हैं। एक एक भागकी देखरेख करनेके लिये एक एक दरोगा नियत है। सावन और भादों महीनेमें प्रत्येक दलमें अलग अलग करके गौओंकी गणना होती है। उस समय निकृष्ट श्रेणीकी गौ उस दलसे निकाल दी जाती हैं और अच्छी गौ जिनपर चिन्ह अङ्कित नहीं रहता वे चिन्हित कर दी जाती हैं।

बच्छे जब डेढ़ वर्षके होते हैं तब बैल बना दिये जाते हैं। जब उनकी उमर चार वर्षकी हो जाती है तब वे दलसे बाहर कर दिये जाते हैं और उनको शिक्षा दी जाती है। पांचवें वर्षमें उनकी शिक्षा समाप्त हो जाती है। सात वर्षकी अवस्थामें वे पूरे जवान हो जाते हैं। १२ बारह वर्षकी अवस्थातक वे बलवान् रहते हैं और बड़ी तेजीसे काम करते हैं तदनन्तर वे दुर्बल होने लगते हैं और १८ वर्षकी अवस्थामें मर जाते हैं।

नादूदाना और दादूदाना इन दोनों जातिकी गौओंके संयोगसे वहां एक दूसरी गोजातिकी उत्पत्ति हुई है। इस शङ्कर जातिको वहांवाले "ईगोसू" कहते हैं।

अमृतमहली सांड और बैल अपने पराक्रम और कष्टसहिष्णुताके लिये प्रसिद्ध हैं। वे ४८ से ६० इञ्च तक ऊंचे होते हैं। जितने ऊंचे होते हैं उनकी छाती भी उतनी ही लम्बी



१। व्रजमण्डलकी गौ।



२। आलमवादी बैल।

चौड़ी होती है। पीठ भी खूब विशाल होती है। कन्धा और दोनों आगेके पैर बहुत गठीले और मजबूत होते हैं। इनके सींग दो तीन फीटतक लम्बे होते हैं और चढ़ाव उतरावके साथ आगेकी ओर टेढ़े होकर आपसमें मिल जाते हैं। आंखें बड़ी बड़ी और काली होती हैं। उनका माथा ऊंचा, गला गलकम्बल और थुई बड़ीअच्छी मालूम होती है। गाय प्रायः सफेद और बैल काले अथवा धूसर-वर्णके होते हैं। ये बहुतकामके और कष्ट सहनेवाले होते हैं। भरी गाड़ी लेकर ये दूरतक चले जाते हैं। इनके काले काले खुर और गठीले पैर देखनेसे ही इनकी शक्तिका पता लगता हैं। इनका सबसे बड़ा गुण यह है कि ये थोड़ा खाकर भी बड़ी देरतक कठिन परिश्रमका काम कर सकते हैं।

हालिकरी गौ।

अमृतमहली गो-विभागमें हालिकर जातिकी गाय उत्तम होती हैं। इनकी उत्पत्तिके विषयमें वहां एक किंवदन्ती प्रसिद्ध है। कहते हैं हैदरअली दक्षिणसे २०० सौ ब्राह्मणी गौ लाया था। चरनेके लिये वे गौएं छोड़ दी गयीं। इन्हीं गौओं और कृष्णसार मृगके संयोगसे हालिकर जातिकी गौओंकी उत्पत्ति हुई है। इस प्रवादका कारण यह है कि इनकी आंखोंके पास कृष्णसार मृगके समान एक प्रकारका चिन्ह होता है। इनके

पैर लम्बे और सूड़िया उतार होते हैं, शीघ्र चलनेका गुण भी इनमें पूरी तौरसे है। इस जातिके बैल और गाय दोनोंका आकार एक ही समान होता है। इन गायोंको थोड़ा ही दूध होता है।

इस जातिकी गौओंमें गोजमातृभू नामकी एक गो-जाति है, उसके गाय बैल बहुत अच्छे होते हैं।

चित्रल दुर्ग।

यह भी गौओंकी एक जातिका नाम है। इस जातिकी गौ हालिकार जातीय गौओंके समान होती हैं, परन्तु इनका आकार कुछ छोटा होता है। इनका मस्तक भी बड़ा नहीं होता और गलकम्बल देखनेमें सुन्दर है।

कपिलियान जातिकी गौ।

मदुरा जिलेके कण्वाम नामक प्रदेशमें एक मनुष्य जाति रहती है। उसका नाम है कप्पिलियान। उनकी गाय भी उन्हींके नामसे प्रसिद्ध हैं। इस जातिके लोग पहले कनाड़ीमें रहा करते थे। इनकी गौ छोटे आकारकी और कामकाजी होती हैं। यह गो-जाति दौड़नेके लिये प्रसिद्ध हैं। कप्पिलियान लोग जब पहले पहल इस प्रदेशमें आये, उस समय ये अपने साथ इन गौओंको भी ले आये थे। उस समय भी इस

जातिकी गाय और बैल खूब दौड़ते थे। कनाड़ी भाषामें इनका नाम है "देभारू आभू" और तामील भाषामें कहते हैं "ताण्विरान मदू" इसका अर्थ है "स्वर्गीय दल" इन गायोंसे दूध नहीं निकाला जाता, किन्तु ये केवल जननकार्य किया करती हैं। इस जातिके बैल या गाय मर जाते हैं तो उनको मिट्टीमें गाड़ देते हैं। मरनेपर उनके शरीरमें चमारका अस्त्र प्रयोग होना महा अधर्म समझा जाता है। इन गौओंके दलमें एक प्रधान बैल होता है, उसको "पल्लादू आभू" कहते हैं। एक पल्लादू आभूकी मृत्यु होनेपर दूसरा उसी पदपर बैठाया जाता है। इस नये पल्लादू आभूके निर्वाचनका ढङ्ग विलक्षण है। पहलेसे निर्वाचनका एक दिन नियत किया जाता है और उस दिन सब गाय बैल एकत्र किये जाते हैं। तदनन्तर केला पान सुपारी कर्पूर आदि लाकर वहां छोड़ दिया जाता है। पश्चात् मदारका मुट्ठा गौओंके सामने रखा जाता है। इस समय वहांके खड़े हुए लोग गौओंकी ओर बड़ी सावधानीसे देखते हैं। जो बैल सबसे पहले उस मुट्ठेको सूंघता है वही "पल्लादू आभू" वृषराज समझा जाता है। तदनन्तर उसके गलेमें माला पहनायी जाती है और उसकी पूजा होती है। उस दिनसे वह देवता समझा जाने लगता है। और उसका नाम होता है "नन्द गोपाल स्वामी"।

कावेरी गौ।

मैशोरी गौओंमें 'महादेवेश्वर' संज्ञक एक और उत्तम श्रेणीकी गौएं हैं। कावेरी नदीका उत्तम-तटवर्त्ती-घास खाकर वे स्वभावतः हृष्ट-पुष्ट और वलिष्ठ रहती हैं। कावेरी नदीके कारण ही इस जातिके गो-बैल कावेरी गो-बैलोंके नामसे परिचित हैं। कावेरी नदीके तीरवाले आलमावाद नामक स्थानसे इनकी संज्ञा आलमाबादी भी प्रसिद्ध हो गयी है। अमृतमहाली गोजातिसे यह देखनेमें अधिक बलवान् और बड़े मालूम पड़ते है। इनके शरीरका रङ्ग घोर धूसरश्याम (Dark gray) या हलका धूसर होता हैं। बैल-सांड प्रायः गहरे रङ्गके ही होते हैं। सभी मैशोरी गायोंमें ये गाय अधिक दूधवाली होती हैं। इनकी संख्या भी वहां बहुत है। इसका कारण यह है कि यह गोजाति परिश्रमी, अल्पभोजी, थोड़ी दामी और बहुत ही शान्त है।

मद्रास और बम्बई अहातेमें इन्हींकी मांग अधिक रहती है। वर्ष भरके बच्छेका मूल्य २०) से २५) रुपयेतक है। बैल ४०) से १०० तकमें आते हैं। गाड़ीके बैल ३०) से ७०) में मिल जाते हैं। इस जातिके गो-बैल भारतवर्षसे बाहर सिङ्गापुर, कोलम्बो जावा आदि देशोंमें भी ले जाये जाते हैं। गत कई वर्षोंके बीच ६।१० हजारसे अधिक गो-बैल नागापट्टमसे पिनाङ्ग भेजे गये हैं।

नेलोर अथवा अंगोलकी गौ।

मद्रास प्रान्तके अन्तर्गत नेलोर एक जिलेका नाम है। वहांके गाय-बैल अङ्गोल जातिके कहे जाते हैं। भारतके सब स्थानोंमें और दक्षिण अमेरिका तथा पृथ्वीके अन्य प्रान्तोंमें भी इनकी प्रसिद्धि है। यहांकी गाय मैशोरकी गायोंसे कई बातोंमें भिन्न होती हैं। यह जाति बड़ी होती है और शान्त होती है। बीहड़ रास्तोंमें भी दूरतक जा सकती है। मैशोरके बैल पक्की सड़कपर ही चल सकते हैं। चलनेके समय इनके खुरका शब्द होता है। ये दादूदाना (बड़ी) श्रेणीके होते हैं। इस जातिकी गाय प्रति दिन ६।७ सेर दूध देती हैं। बैल बहुत बड़े और तेजस्वी होते हैं। इनका माथा लम्बा, ललाट प्रशस्त, आंखें लम्बी और बड़ी होती हैं। आंखोंके चारों ओर आधी इञ्चके बराबर काला दाग होता है। इनकी नाभी और गलकम्बल बड़े और लटकते होते हैं। इनके सींग छोटे, पर मोटे होते हैं। कन्धा छोटा किन्तु विस्तृत होता है। इनकी थुई सुन्दर होती है। इनमें कई बैल तो ६३ इञ्चतक ऊंचे होते हैं। इनकी थुई तक ऊंचाई नापनेसे किसी किसीकी ऊंचाई चौरासी इञ्चतक पहुंच जाती हैं। ये प्रायः सफेद और काले होते हैं। इनका स्वभाव शान्त होता है। ये अधिक कष्ट तो नहीं सह सकते, परन्तु बोझा खूब अधिक ढो सकते हैं। सौ मन बोझ

वाली गाड़ीको ये खींच ले जाते हैं। यहांकी गाय ऊंची और काले तथा सफेद् वर्णकी होती हैं। कोई कोई गौ चित्र विचित्र रङ्गकी भी होती हैं। बम्बई प्रदेशकी कृष्ण नदीके तीरके गाय-बैल इसी जातिके हैं। इनमें कोई कोई बैल मझोले आकारका होता है। ये गाड़ी खींचने तथा हल खींचनेके काम आते हैं। मद्रासके उत्तरी भागमें ये बैल अधिक परिमाणसे काममें लाये जाते हैं। इनकी पीठ चौड़ी और छोटी होती है, छाती चौड़ी और विशाल होती है। पैर साफ मोटे पर सीधे और जरा फासिलेपर होते हैं। इनका चमड़ा बड़ा ही कोमल होता है और उसपर छोटे छोटे बाल होते हैं। अच्छी एक जोड़ी गायका दाम १०० से ३०० तक और अच्छी एक जोड़ी बैलका दाम २००—३५० से ४५० तक है।

१६०६ ई० में इसी जातिकी २०० सौ गौएं दक्षिण अमेरिकाके ब्रेजिल नामक प्रदेशको भेजी गयी थीं। वहां इनका बड़ा आदर है।

कृष्ण और कावेरीकी गोचर भूमि ही इस गोजातिकी श्रेष्ठताका कारण है। नेलोर जिलेके पश्चिमांशमें वर्षा होते ही किसान लोग घास चरनेके लिये अपने गो-बैलोंको भेज देते हैं। यहांके बैल ब्राह्मी-बुल कहे जाते हैं। गौएं ५ सेरसे १० सेरतक दूध देती हैं। तीन महीनेतक बच्चे लगातार गौओंका दूध पीते रहते हैं। इसलिये उनके शरीरमें बड़ा बल आ जाता

है। इन गौओंमें भी दो भेद हैं—एक बड़े सींगोंवाली और दूसरी छोटे सींगोंवाली। चार वर्षकी होनेपर इस जातिकी बाछियां गर्भधारण करने योग्य होती हैं। फ्रांसके बृटानी सांडका संयोग करानेसे इन गौओंकी नसल अच्छी बढ़ सकती हैं।

कांगायम गौ।

इनमें छोटे बड़े दो विभाग होते हैं। काङ्गायम कोम्बाटूर मदुरा और त्रिचिनापल्ली आदि स्थानोंमें इस जातिके गाय बैल होते हैं। इस जातिकी गौ प्रति दिन ८।१ सेर दूध देती हैं। ये साधारणतः काले और सफेद रङ्गकी होती हैं।

जेलिकट गौ।

मदुरा जिलेमें एवं उसके पासके स्थानों तथा पेरिया नदीके तीरवर्ती प्रदेशोंमें इस जातिकी गौएं पायी जाती हैं। इन गाय-बैलोंको किलाकात भी कहते हैं। ये आकारमें छोटे होते हैं। इस जातिकी गौएं अधिक दूध नहीं देती। परन्तु बैल गाड़ी लेकर घण्टेमें ५।६ मीलतक दौड़ जाते हैं।

जेलिकट शब्दका अर्थ है पत्रालङ्कार। मदुरा जिलेमें एक प्रकारका खेल होता है। उस खेलमें एक सांडके सींगमें लाल कपड़ा बांधकर छोड़ दिया जाता है। जो उसके सींगसे

उस कपड़ेको खींचकर लाता हैं, उसको पुरस्कार दिया जाता है। उस कपड़ेको खोलनेके लिये बहुत लोग जाते हैं उनमें कितने घायल होते हैं, कितने मर भी जाते हैं। उस सांडको जेलिकट कहते हैं, और इसलिये उस जातिके गाय बैल जेलिकट भी कहे जाते हैं।

तञ्जोरकी गौ।

तञ्जोर प्रदेशमें एक गौ होती हैं, वह मेना जातिकी गौ कही जाती है। ये कङ्गायम जातिकी गौओंके समान होती हैं। परन्तु इनके सींग नहीं होते। इनके कान भा कई स्थानोंसे कटे होते हैं। वहांके गोपालक सींग निकलनेके समय लोहा तपाकर सींग जला देते हैं और कानोंके भी कई अंश काट देते हैं। इसी कारण वहांकी गौओंके सींग छोटे होते हैं और कान कटे होते हैं।

गञ्जाम जिलेके गमसुर प्रदेशमें एक छोटी जातिकी गौएं होती हैं। वे गमसुरके नामसे पुकारी जाती हैं।

पश्चिम घाटकी गौ।

दक्षिणके पश्चिम घाट नामक पर्वतके समीपके स्थानोंमें मालावारी कोङ्कणी बस्तैया और अरबी गौ-बैल देखे आते हैं। यहांकी गौएं छोटी जातिकी अङ्गुली गौओंके समान होती हैं।

ये गायें अधिक दूध भी नहीं देती। यहांके बैल खेतीके काममें बहुत ही उपयोगी होते हैं। इनकी थुई छोटी होती हैं और कान भी मझोले होते हैं।

कोंकणकी गौ।

यह एक प्रकारकी जङ्गली गो-जाति है। ये रङ्गमें अनेक प्रकारकी होती हैं। इनके सींग मोटे और टेढ़े होते हैं। इस जातिके बैल गाड़ी खींचनेका काम बहुत अच्छा करते हैं। १—घण्टेमें ये ६।७ मीलतक गाड़ी खींच ले जाते हैं। बैलोंकी अच्छी जोड़ी २५०) तकमें मिलती है।

महाराष्ट्री गौ।

इस जातिकी गौओंमें ३।४ भिन्न भिन्न विभाग हैं। वहां एक जातिकी गौएं होती हैं जिनके मुंह और पैर काले रङ्गके होते हैं। इसी जातिकी गौओंकी वहां प्रधानता है। इनके मुंहके निचले भागसे लेकर पैरतक एक बदामी रङ्गकी रेखा होती है। इस जातिके बैल खेतीके काममें बड़े ही बलिष्ठ होते हैं।

एडेनवंशी गौ।

इस जातिकी गौएं अधिकांश अरब देशान्तर्गत एडेनसे पश्चिम भारतमें आयी हैं। बम्बई प्रदेशमें इस वंशकी गौएं अधिक दृष्टिगोचर होती हैं। इनका शरीर गठीला और शक्तिसम्पन्न

होता है। इस जातिके बैल छोटे किन्तु बलिष्ठ होते हैं। किन्तु भारतके अन्य बैलोंकी तरह कष्ट-सहिष्णु नहीं होते। सींग भी इनके बहुत छोटे परन्तु मोटे होते हैं। मुंह और शरीरका रङ्ग प्रायः ही सफेद होता है। थुई भी खूब पुष्ट और मोटी होती है, कान छोटे होते हैं। ये दूध अधिक देती हैं।

पलामूकी गौ।

छोटा नागपुर—विभागके पहाड़ी तृण-विहीन प्रदेशमें और गया--जिलेके दक्षिणस्थ अनुर्वर पर्वतमय प्रान्तमें एक प्रकारकी वहींका (Indigenous) गोजाति है, वह परिश्रमी और बोझा ढोनेमें बड़ी उपयोगी है। इस जातिकी गौएं जिस प्रकार आकारमें छोटी होती हैं उसी तरह दूध भी अधिक नहीं देती। अच्छे सांडोंके संयोगसे ये गाभिन करायी जायें तो इनकी उन्नति हो सकती है।

राजपूतानाकी गौ।

राजपूतानेमें भिन्न भिन्न जातिकी गौएं देखी जाती हैं। नागोरी गौओंके साथ इनका अधिक मिलान खानेपर भी सब स्थानोंमें नागोरी गायें नहीं पायी जातीं। नागोरी गोवंश राजपूतानेका प्रधान गो-परिवार है। इसके सिवा बीकानेरी, मारोठी, कोटाई, जयपुरी, अलवरी और मालवेकी गौएं हैं।

इन श्रेणियोंकी गौएं साधारणत: ४ सेरसे ८ सेरतक दूध देती हैं। २०) रु० से ६०) रु० तक उनका साधारण मूल्य है। बैलोंकी जोड़ी ५०) से १५०) २००) तकमें बिकती हैं। बैल हल खींचने गाड़ीमें जुतने आदिके काममें आते हैं। परिश्रमी भी खूब होते हैं। कई जगह उनके वर्ष भरमें मेले लगते हैं। नागोरी गोजाति उत्कृष्टताके हिसाबसे बहुत बढ़ी चढ़ी हैं। मैशोरके अमृतमहाली वंशके बाद नागोरी बैलोंकी ही गणना की जाती है। वीकानेरका समीपवर्ती नागोर ही इस गोवंशकी उत्पत्तिका प्रधान स्थान है। नागोरी बैल गाड़ी खींचने रथ और बहलोंमें जुतने आदिके ही कामके होते हैं। चलनेमें बड़े तेज होते हैं। नागोरी गाय अधिक दूधवाली नहीं होती।

नागौरी बैल देखनेमें बड़े ही सुघट होते हैं। उनके कान लम्बे और झुके हुए तथा रङ्ग सफेद और श्यामल (Mostly white or light gray though a number are of the light brown and white with a tinge of brown about the head generally, in and about the horns) बहुत बड़े (they are large and heavy in all the parts) तथा लम्बे सींगोंवाले होते हैं। उनके सींग २।३ और ४ फीटतक लम्बे उर्ध्वगामी होते हैं। ("often grows up to a tremendous size, strong and poin-

ted, often terminaited by an elongated spiral twist and inclination back wards") मि० वाटने इस जातिकी गौओंके विषयमें विस्तृत विचार किया है। नोगोटी बैलोंकी अच्छी जोड़ीका मूल्य ४००—५०० रु० हैं।

निजाम राज्यमें तेलिङ्गाना, माहट्टावादी, लिङ्गसगुर और इलागण्डल श्रेणीकी गायें विशेष प्रसिद्ध हैं।

अरबी गौ।

अरब देशकी एक प्रकारकी गोजाति दक्षिणके पश्चिम घाट नामक पर्वतके पासके स्थानोंमें ही देखी जाती हैं। वे प्रायः नेलोरकी गोजातिके समान होती हैं। परन्तु यह गोजाति न तो परिश्रमी होती है और न कष्ट-सहिष्णु ही। कर्मठ भी नहीं होती। इनका आकार छोटा होता है और गठन भो अच्छा नहीं होता।

अफगानिस्थान और फारसकी गोजाति।

काबुल और फारस देशकी गोजाति भारतीय गौओंके समान गलकम्बल और थुईवाली होती हैं। यहांकी गायें अधिक दूध भी देती हैं। इनकी उन्नतिके लिये वहां कुछ विशेष प्रयत्न नहीं किया जाता। वहांको गोजाति इच्छापूर्वक वहांके पर्वतोंके शिखरोंपर घूमती हैं और चरती हैं। काबुली मेवोंकी पत्तियां खाती हैं। इस कारण वहांके गो-बैल हृष्टपुष्ट रहते हैं।

काबुली गायोंमें कोई कोई गाय मुलतानी गौके समान दूध देनेवाली होती है।

सिंगापुर चीन जापानकी गौ।

पहले समूची मङ्गोलीजाति गौके दूधका व्यवहार करना नहीं जानती थी, परन्तु आज पश्चिमी शिक्षाके साथ वहांके लोगोंने दूधका व्यवहार करना भी सीखा है। अब वे कई प्रकारके दूधका व्यवहार करने लग गये हैं। वहांकी गौओंको उचित रीतिसे घास दिया जाता है। वहांके गौ-बैल काम करनेमें दक्ष और हल खींचनेमें निपुण होते हैं। सिङ्गापुर आदि स्थानोंमें मैशोरसे बहुतसी गौएं गयी हैं।

वक्तव्य।

यह भारतीय और भारतके निकटके देशोंकी गोजातिका विवरण दिया गया। योरपीय गौओंका भेद यहां बतलाना विशेष आवश्यक प्रतीत नहीं होता क्योंकि वहांकी गाय यद्यपि दूध देती हैं, परन्तु भारतीय गौओंकी जो परिभाषा है उस परिभाषाके अनुसार योरपीय गौओंको गौ नहीं कह सकते। वे गोजातिके समीपवर्ती एक जाति विशेषके जीव हैं, यही उनके लिये कहा जा सकता है। इस ग्रन्थके लिखे जानेका यही उद्देश्य है कि भारतवासियोंकी गोजातिपर दृष्टि खींची जाय

जिससे भारतीय गोवंशकी उन्नतिके कार्यमें सहायता मिले। अतएव यहां योरपीय गौओंके वर्णनकी उतनी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। तथापि अगले अध्यायमें हम अपने पाठकोंकी अवगतिके लिये उनका संक्षेपसे नामनिर्देशकर परिचय देंगे।



अठारहवां अध्याय.



विलायती गोवंश ।

विलायतकी जो गोजातियां अधिक दूध देनेके लिये प्रसिद्ध हैं उनमें विशेष उल्लेख करने योग्य निम्न लिखित हैं ।

(१) शर्ट-हर्न (Short-horn) (२) लिङ्कन-शायर रेड शर्ट-हर्न (Lincoln-Shire Red Short-horn) (३) हेरीफोर्ड (Hereford) (४) नार्थ डिवन् (North Devon) (५) साउथ डिविन् (South Deven) (६) ससेक्स (Sussex) (७) वेल्स (welsh) (८) लाङ्गहार्न (Long-horn) (९) रेडपोल्ड (Red Polled) (१०) एबर्डिन-एङ्गस् (Aberdeen- Angus) (११) गेलोवे (Galloway) (१२) वेस्ट-हाईलेण्ड (west Highland) (१३) आर-शायर (Ayr-Shire) (१४) जर्सी (Jersey) (१५) गर्नसी (Guernsey) (१६) केरी (Kerry) (१७) डेक्सिटर (Dexter)

इनमें १ से ९ नम्बर तकका गो-वंश इङ्गलेण्डका, १० से १३ तकका स्काटलेण्डका है। केरी और डिक्सिटर जाति आय-

लैंण्डको और जर्सी तथा गर्नसी वंश अपने नामसे ही प्रसिद्ध द्वीपोंकी है। फरासी प्राणि-तत्वविद् लोगोंके मतसे शेषोक्त दो जातियां नरमेण्डी परिवार भुक्त कही जा सकती हैं। इसका कारण यह है कि 'बृटानी'का रक्त प्रवाहित होता है। इसके अतिरिक्त भी विलायतमें कई एक प्रशस्त गो-वंश है। अमेरिकामें हालस्टिन् संज्ञक एक प्रख्यात प्रचुर दुग्धवती गोजाति है। यह आकारमें बड़ी है रङ्गकी सफेद या काली अथवा सफेद-काली होती है। डचवेलटिड (Dutch-Belted-breed) वंशकी भी वहां कम प्रख्याति नहीं है और दूध देनेमें भी इस वंशकी गायें किसीसे कम नहीं हैं। शर्ट-हर्न गो-वंश विलायतके सभी स्थानोंमें पाया जाता है।



उन्नीसवां अध्याय.

अवशिष्ट बातें।

गोरक्षिणी संस्थाएं

भारतमें गोशालाओं और पिंजरापोलोंकी संख्या प्रायः ५५५ बतायी जाती है। उन सबकी स्थापना गोवंशकी रक्षाके लिये ही हुई है—इसमें सन्देह नहीं, किन्तु उनके कार्यकी वर्तमान प्रगतिको देखकर कहना पड़ता है कि, परिमित गौओंका पालन ही देशकी इन गोशालाओं और पिञ्जरापोलोंमें हो रहा है। अतएव गोवंशकी रक्षाके लिये हमें अपने कार्यको दूसरा स्वरूप देना पड़ेगा। पिञ्जरापोलें और गोशालाएं इस समय लूली-लङ्गड़ी बूढ़ी-ठेरी गौओंके रहनेका ही स्थल बनी हुई हैं और इसके लिये उनकी संख्या जितनी बढ़े उतना ही लाभ है, किन्तु साथ ही हमें गोवंशकी रक्षाके बोड़ेको उठाकर व्यापारिक बुद्धिसे कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण होना चाहिये। बिना व्यापारिक दृष्टिसे काम लिये गोवंशकी वृद्धि नहीं हो सकती। हमारे देशवासियोंको यह सदा स्मरण रखना चाहिये कि, गोधनसे श्रेष्ठ धन इस संसारमें दूसरा नहीं है। इस बातको हृदयमें धारणकर जिस दिनसे कार्य होने लगेगा, उसी दिनसे गोवंशकी उन्नतिका क्रम आरम्भ हो जायगा।

गोरक्षाका उद्योग जोर शोरसे होना चाहिये। इसके निमित्त सहयोग समितियां बनें, गो-सेवाकी शिक्षा देनेवाले विद्यालय खुलें, सभाएं प्रतिष्ठित हों और समय समयपर प्रदर्शिनियां हुआ करें। संवादपत्रोंकी सहायताका भी इसमें बड़ा प्रयोजन है। योरपमें इन सभी कामोंकी व्यवस्था है। वहां सहयोग समितियां बनी हुई हैं। गो-प्रदर्शिनी होती हैं, उनके साथ ही दूध और मक्खनका भी प्रदर्शन किया जाता है। हमें यह देखकर प्रसन्नता हुई कि भारतके गोवंशकी रक्षा और उन्नतिके उद्देश्यसे गत सन् १९१७ ई०के दिसम्वरमें अखिल भारतवर्षीय गो-महासभाकी स्थापना हो गयी है, जिसके सभापति कलकत्ता हाईकोर्टके विचारपति सर जान उडरफ (किन्तु अब जस्टिस ग्रीव्स) महोदय हैं। प्रतिवर्ष इस महासभाकी बैठक देशके विभिन्न स्थानोंमें हो, यह नियम कियागया है। पहला अधिवेशन कलकत्तेमें हुआ था और दूसरा भारतकी प्राचीन और वर्त्तमान राजधानी दिल्लीमें। गो-महासभाका कार्यालय इस समय कलकत्तेमें है।

अवस्थाका अनुमान।

लोगोंका कथन है, कि साधारणतः गौएं २२ वर्ष जीवित रहती हैं, किन्तु किसी किसी गायको २७।२८वर्षतक भी जीते देखा गया है। स्थायी दांतोंकी उत्पत्ति और सींगोंमें पड़े हुए छल्लोंको

देखकर ही गौ-बैलोंकी उम्रका प्रायः अनुमान किया जाता है। किन्तु दांतों द्वारा अवस्था जाननेकी रीति विशेष विश्वसनीय है। बच्छे-बच्छीकी उम्रका तब तक अनुमान करना कठिन होता है, जब तक कि उनके बीचके दो दूधवाले दांत नहीं निकल आते। इसके सिवा उस समय भी कठिनता पड़ती है जब ५वें वर्षमें गौ-बैलोंके पूरे दांत निकल आते हैं। छठे वर्षमें ८ स्थायी दांत पूरे हो जाते हैं और उनकी पांत बराबर हो जाती है। उस अवस्थामें कहा जाता है कि मुंह पूरा हो गया। मुंह पूरा हो जानेपर गौ या बैल पूर्ण अवस्था सम्पन्न समझा जाता है। इसके बाद उसकी अवस्थाके ढलनेका क्रम आरम्भ हो जाता है। पैदा होते समय बच्छे-बच्छियोंको दो दूधके दांत होते हैं। वे नीचके जबाड़ेमें होते हैं। ऊपरके जबाड़े दांत रहित होते हैं। पैदा होनेके दो सप्ताह बाद दो दांत और निकलते हैं और तीसरे सप्ताहमें ६ दांत निकल आते हैं, इस प्रकार मुंहमें दांतोंकी संख्या ८ हो जाती है। जब तक छठा महीना नहीं बीतता, तबतक ये दांत स्वच्छ तथा समतल प्रतीत होते हैं। किन्तु छठा महीना बीत जानेपर उनके रङ्गमें विकृति आ जाती है और वे घिसने लगते हैं। ८ वें महीनेमें बीचके २ दांत बिगड़ जाते है और वर्षभरमें विकृत दांतोंकी संख्या ४तथा सवा वर्षमें ६ हो जाती है। दो वर्ष पूरे होते होते आठों दांत खराब हो जाते हैं और उस अवस्थामें बीचके दो दांत

गिर भी जाते हैं। गिरे हुए दांतोंके स्थानमें स्थायी दांत उत्पन्न होते हैं। दूधके दांतों और स्थायी दांतोंमें जो अन्तर होता है, वह स्पष्ट .दिखायी देने लगता है। तीसरे वर्षमें ४ दांत, चौथे वर्षमें ६ दांत और पांचवें वर्षमें पूरे आठ स्थायी दांत निकल आते हैं। छैं वर्षकी अवस्था पूर्ण हो चुकनेपर धीरे धीरे दांत एक एक करके गिरने लगते हैं और आठ या दश वर्षमें सब गिर जाते हैं। चारेकी कमी वा शारीरिक निर्बलताके कारण समयसे पहले भी दांत गिरने लग जाते हैं। दांत गिर जानेपर भी कई गौएं बच्छे देती रहती हैं। इसीलिये कहावत प्रसिद्ध है, कि "गाय बूढ़ी आंतसे और बैल बूढ़ा दांतसे"—इसका मतलब यह है, कि गौ बच्चा जनना जब बन्द कर देती है तब बुड्ढी समझी जाती है और बैल दांत गिर पड़नेपर। गौओंकी उम्र जाननेका एक उपाय और है, गर्भावस्थामें सींगोंकी बृद्धि स्थगित रहती है। प्रसव हो जानेके उपरान्त सींग अपने स्वाभाविक रूपसे फिर बढ़ने लगते हैं। यही कारण है कि प्रत्येक गर्भकालमें उनके सींगोंमें

पड़ जाता है। जितने छल्ले होते हैं उतनी ही बारकी व्यायी हुई गाय समझी जाती है। गौ तीन वर्षमें पहला बच्चा देती है। इसके बाद प्रति पन्द्रहवें या बारहवें महीनेके हिसाबसे प्रत्येक बच्चेका होना मान लिया जाय और आरम्भके ३ वर्ष उसमें जोड़ लिये जायं तो गौकी अवस्था मालूम हो सकती

है। किन्तु इसमें एक व्यतिक्रम हो सकता है। कोई कोई गाय दूसरे वर्ष ही व्या आती है। उस अवस्थामें तीन वर्षका हिसाब ठीक नहीं रहता।

व्यायाम।

शरीरको स्वस्थ रखनेके लिये, खाये हुए पदार्थोंके परिपाकके लिये तथा भूख बढ़ानेके लिये उचित रीतिसे परिश्रम करनेकी आवश्यकता है। यह बात जिस प्रकार मनुष्योंके लिये है, उसी प्रकार पशुओंके लिये भी है। बैलोंको गाड़ी, हल खींचने पड़ते हैं अतएव उनसे और परिश्रम कराना अनुचित है। पर दूध नेवाली गायोंसे उचित परिश्रम कराना चाहिये। उनसे उचित प्रकारका परिश्रम न करानेसे अनेक दोष उत्पन्न होते हैं। परिश्रम न करानेसे रक्तका संचालन जैसा होना चाहिये वैसा नहीं होता, दूध कम हो जाता है, परिपाक-शक्ति क्षीण हो जाती है। और भी कई प्रकारके रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतएव इनको प्रतिदिन चरनेके लिये छोड़ देना चाहिये, छोड़ देनेसे वे अपना व्यायाम कर लेती हैं। जो गाय या बैल बंधे रहते हैं, वे खोल दिये जानेपर बड़े जोरसे दौड़ते हैं, उनको दौड़ते देखकर बंधे हुए अन्य गाय बैल भी दौड़नेके लिये उत्तेजित हो उठते हैं। जो गाय दूध नहीं देती, उसको तथा बड़े बच्छे एवं ब-च्छियोंको पानी और धूपके समयको बचाकर समस्त दिन

चरनेके लिये छोड़ देना चाहिये। जङ्गलमें इच्छापूर्वक चरनेसे उनका व्यायाम भी हो जाता है। धूपके समयमें छायामें-जहां हवा आती हो, वहां उनके बैठनेके लिये प्रबन्ध होना चाहिये। उन बैलोंसे भी जो गाड़ी या हलमें नहीं जोते जाते, व्यायाम कराना चाहिये, नहीं तो चर्बी बढ़ जानेसे उनके अकर्मण्य होनेका भय रहता है।

विश्राम और निद्रा।

गौओंको उचित रीतिसे विश्राम करने देना चाहिये तथा सोने देना चाहिये। दूध देनेवाली गायकी निद्रामें बाधा उपस्थित होनेपर वह नियमित रूपसे दूध कभी दे नहीं सकती। यदि वह रातको कुछ भी न सो पावे तो सवेरे दूध कभी देना नहीं चाहेगी। अतएव इस बातपर ध्यान रखना चाहिये कि, गायको किस कारणसे निद्रा नहीं आती, जब कारण मालूम हो जाय तो उसको दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिये। दूध देनेवाली गायोंकी प्रकृति अत्यन्त कोमल होती है, मच्छर या डांसके काटनेसे उनको नींद नहीं आती।

दो पहरके पश्चात् गायोंको अच्छे स्थानमें विश्राम करने देना चाहिये। उस समय वे अपने खाये हुए पदार्थको बैठकर चबाती हैं, जो उनके लिये आवश्यक है। चरनेके समय भोज्य पदार्थ गायोंकी पाकस्थलीमें नहीं जाते। जिस समय

वे चरते हैं, उस समय उनका खाया हुआ द्रव्य एक अन्य पाकस्थलीमें जाता है और वहांसे दूसरी, तीसरी पाकस्थलीमें होता हुआ लाटकी सहायतासे वह मुंहमें आता है, उस समय गाय बैल उस खाये हुए पदार्थको फिरसे चबाते हैं, तब वह पचन करनेवाली पाकस्थलीमें जाता है और पचता है। इस प्रकार गो-बैलोंका भोजन चौथी पाकस्थलीमें जाकर पचता है।

सन्ध्याके समय जब वे चर चुकें तब उन्हें शान्तिके साथ आराम करने देना चाहिये। मच्छर और डांस वहां न रहने पावें, इसका प्रबन्ध करना ही उनके सोनेके लिये प्रधान प्रबन्ध है। रेतीली जमीनमें जीव (जइये) भी पैदा हो जाते हैं, वे भी उनके आराममें बाधक होते हैं। इसलिये राजपूताना आदि प्रान्तोंमें गो-ठानोंमें मुर्गे छोड़ दिये जाते हैं, वे उन 'जइयों'को चुग लेते हैं।

स्नान।

गाय और बैलोंको खूब स्वच्छ रखना चाहिये। गर्मीके दिनोंमें एक दो दिनपर, बरसातमें सप्ताहमें एक दिन और शीतकालमें धूप निकलनेके बाद कमसे कम महीनेमें एक दिन उनको स्नान कराना चाहिये। स्नानके पश्चात् उनका शरीर खूब पोंछकर उन्हें छोड़ देना चाहिये। गायके शरीरमें शीत न लगे इस ओर विशेष ध्यान रखना चाहिये। इस बातका

स्मरण रखना चाहिये कि उनके थनोंको शीघ्र ही ठंढक लग जाती है।

सफाई।

गायके शरीरपर प्रतिदिन हाथ या ब्रस फेरकर सफाई कर देनी चाहिये। ऐसा बिना किये उनके शरीरमें कई प्रकारके जीव पड़ जाते हैं। प्रतिदिन ब्रस फेरनेसे वे जीव पड़ने नहीं पाते। इन जीवोंके शरीरमें पड़ जानेसे गाय, बैल व्याकुल हो जाते हैं। गायोंका दूध कम हो जाता है। इन जीवोंके निकल जानेसे वे खूब प्रसन्न हो जाती हैं, उनकी व्याकुलता जाती रहती है। गायें दूध भी अधिक देती हैं। शरीर और मनकी स्वस्थता तथा प्रसन्नताके ऊपर दूध देनेकी शक्ति अवलम्बित है। शरीरको प्रतिदिन साफ रखनेसे ही गायें स्वस्थ और प्रसन्न रहती हैं।

प्रायः गौएं अपने शरीरके बहुतसे भागको जीभसे चाटकर साफ कर दिया करती हैं। परन्तु वे अपना गला चाट नहीं सकतीं, अतएव गलेमें जो जीव पड़ जाते हैं उन्हें हाथसे पकड़कर निकाल देना चाहिये। हाथसे गला सहरानेपर गाय बहुत प्रसन्न होती हैं और सामने गला पसार देती है।

संकर गौ।

विलायती गौएं बहुत दूध देती हैं, यह देखकर कतिपय

भारतवासी उनकी वंशवृद्धि यहां करना चाहते हैं। परन्तु परीक्षा द्वारा मालूम हुआ है कि, इस कार्यमें सफलता नहीं हो सकती। शीत प्रधान देशमें रहनेवाली गौएं यहां आकर मर जाती हैं। इस कारण अब एक दूसरा उपाय ढूंढ़ निकाला गया है। अब कुछ लोगोंकी यह राय हुई है कि विलायतके किसी प्रदेशसे—जो वहां सब स्थानोंकी अपेक्षा गर्म हो—सांढ़ मंगाया जाय और उसके संयोगसे सङ्कर जातीय गोवंशकी वृद्धि की जाय।

विलायतके सबसे गर्म प्रदेशका सांढ़ यत्न पूर्वक यदि रखा जाय तो वह भारतमें भी रह सकता है और उसके द्वारा भारतीय गौओंका दूध बढ़ाया जा सकता है। ऐसा कई स्थानोंमें किया भी गया है और उससे अधिक दूध देनेवाली गाय भी जहां तहां देखी गयी।

परन्तु इस उपायकी परीक्षा और भी प्रमाणों द्वारा होनी चाहिये। सबसे अधिक इस विषयमें विचारणीय बात यह है कि, इस प्रकार जिन गौओंका दूध बढ़ता है, उनके दूधमें घीका भाग वैसा ही रहता है या कम हो जाता है। क्योंकि भारतीय गौका दूध अधिक घीके लिये प्रसिद्ध है और विलायती गौका दूध अधिक दूधके लिये। इस कारण विलायती सांढ़ों द्वारा जो बच्चे उत्पन्न हों, उनमें विलायती सांढ़ोंका केवल गुण ही आता है या गुणके साथ दोष भी? इस बातकी परीक्षा होनी चाहिये। भारतीय गाय बैलोंमें परिश्रम करने, दुःख सहने आदिकी शक्ति

अधिक होती है। यदि ये गुण विलायती सांढ़ोंके संयोगसे नष्ट हो जांय, तो कोई आवश्यकता नहीं है कि थोड़े फलके लोभमें पड़ कर अच्छे अच्छे अपने गुण खो दिये जायं। इस बातका निश्चय परीक्षाके द्वारा होना चाहिये ।

गो-दोहनकी रीति ।

इस समय दो प्रकारसे गौएं दूही जाती हैं—अमेरिका और योरपमें यन्त्रके सहायतासे और हमारे यहां हाथोंसे । योरपमें गाय दूहनेके पहले बच्छेको दूध नहीं पिलाया जाता । जो हो, हमारी गायोंके बायें भागमें बैठ कर दूध दोहना चाहिये । दूहनेसे पहले बच्छेको दूध पिला कर थन स्वच्छ जलसे धो डालने चाहियें । हाथसे गायोंको दूहनेकी जो प्रक्रिया हमारे देशमें प्रचलित है उसमें भी दो भेद हैं । मुट्ठीसे थनोंको दबा कर दूहा जाता है और अंगुलियोंके अग्र भागसे थन पकड़ कर भी दूध निकाला जाता है । दूध निकालनेकी ये दोनों ही रीतियां हमारे देशमें प्रच-लित हैं । किसी प्रान्तमें मुट्ठीसे और किसी प्रान्तमें चुटकीसे गायें दूही जाती हैं ।

गो दोहनेके सम्बन्धमें अनुभवी लोगोंकी राय है कि जितनी शीघ्रता और शान्तिसे दूध दूहा जा सके उतना ही अच्छा । ऐसा करनेसे गाय अधिक दूध देती है । परन्तु ऐसा करना इस कार्यमें निपुण व्यक्तिको छोड़कर दूसरेके लिये कठिन है । तथापि

अभ्यास वैसा होना कुछ कठिन नहीं है। पहले इस देशमें बड़े अच्छे अच्छे इस कार्यके ज्ञाता थे। वे जितनी शांति और शीघ्रतासे गो-दोहन करते थे उनकी बातें सुनकर अचम्भेमें आना पड़ता है। अब भी हरियानेके जाट, अहीर और गूजर गो दोहनमें बड़े चतुर समझे जाते हैं।

गो--दोहनके समय कभी भी गायको मारना नहीं चाहिये, उनके साथ बड़े स्नेहका वर्ताव करना चाहिये, नहीं तो हानि होती है।

दूध दूहनेके समय इस बातपर विशेष ध्यान रखना चाहिये कि दूहनेसे गायको किसी प्रकारका कष्ट न हो। दूध दूहनेके पात्रको स्वच्छ रखना चाहिये। वर्तनके सफा न होनेसे दूधमें अवगुण पैदा हो जाते हैं। दूहनेका समय निश्चित होना चाहिये और दूध दूहनेवाला भी नियत रहना चाहिये। यदि दूध दूहनेके समय गायके थन कड़े मालूम पड़ें तो मक्खन या तेल लगा कर उन्हें मुलायम बना लेना चाहिये। इस देशमें दूहनेके समय गायके सामने बच्छेको अवश्य रखना चाहिये। अन्यथा दूध दे ही नहीं सकती। दूध दूहनेके लिये ऐसा करना आवश्यक है। हां, जो बच्छेको स्वयं हटा दे या दैवात् बच्छेकी मृत्यु हो जाय तो गायको चाट पर दूध देनेकी आदत डाल लेनी चाहिये और ऐसा किया भी जाता है। योरप, अमेरिकामें दूध दूहनेके समय बच्छेकी आवश्यकता इस लिये नहीं समझी जाती

कि वहांकी गायोंको बिना ही बच्छेके दूध देनेकी आदत पड़ी हुई है। परन्तु हमारे यहांकी गौओंके लिये वह प्रथा सात्म्य है ।

स्तनोंकी रक्षा ।

दूध देनेवाली गौओंकी प्रकृति अत्यन्त कोमल होती है। थोड़ी असावधानीसे भी उनके शरीरमें विकृति उत्पन्न हो जाती और उनका दूध भी कम होने लगता है। स्थन-भागके अत्यन्त कोमल होनेके कारण उसमें अनायास ही सर्दी लग जानेका डर रहता है। सर्दी लगनेपर भी दूध कम होता देखा गया है और कभी कभी एक दो थन भी मारे जाते हैं। इसलिये थनोंमें सर्दी न लगने पावे, इस ओर भी विशेष ध्यान रखना चाहिये ।

यदि गाय जाड़के दिनोंमें बच्चा जने तो उसके स्तन-भागको कपड़ेसे बांध देना चाहिये। कभी कभी गौओंके थनोंमें घाव भी हो जाते हैं और उसका कारण प्रकृतिके विरुद्ध अधिक गर्म चीजोंका खाना तथा दूध न होनेपर भी बच्छे या बच्छीका अधिक देरतक थनोंको लबड़ते रहना है। उस दशामें गाय थन नहीं पकड़ने देती, यदि कोई थनोंके हाथ लगाता है तो वह कूदने लगती है। वैसी स्थितिमें गायको दूहना न चाहिये। कारण दूहनेसे रक्त निकल सकता है। पत्तियां पानीमें उबालकर उससे थनके घावोंको धो देना

चाहिये और अलसीके तेलमें मुर्गीका अण्डा मिलाकर खिला देना चाहिये। इससे घाव सूख जाते हैं। इसके सिवा नारियल के तेल वा घीमें नीमकी पत्तियां जलाकर वह तेल अथवा घी लगानेसे आराम हो जाता है।

दूधके गुण।

दूधसे मृत्युपर्य्यन्त हमारे जीवनकी रक्षा होती है। अतएव इस बातके माननेमें कोई आपत्ति नहीं कि वह जीवनधारणका एक प्रधान पदार्थ है। आयुर्वेदमें गायके दूधके अमोघ गुणोंका विशेष रूपसे उल्लेख किया गया है। दूध, युवा, बालक, वृद्ध और दुर्बल मनुष्यके लिये अमृतोपम रसायन है। दूधमें शरीरकी पोषणोपयोगी यथेष्ट वस्तुएं हैं—यह अङ्गरेज चिकित्सकोंने भी समस्वरसे स्वीकार किया है। डाक्टरी मतसे पुराने अतिसार, गुल्म, बायु (हिस्टीरिया) आदि रोगोंमें दूध आहार और औषध दोनोंका काम करता है। रूमके प्रसिद्ध डाक्टर फिलिप्का अनुरोध है कि मक्खन निकाले हुए दूधकी एकसे तीन छटाक तक की मात्रा उक्त रोगोंमें अवस्था विशेषके विचारसे दिनमें ३।४ बार दी जानी चाहिये। डाक्टर स्काट डनकिन साहबका कथन है कि मैंने एक मधुप्रमेहके रोगीको केवल दूध सेवन कराकर चिकित्सा की, जिससे २४ घण्टेमें ही उसका ७ सेर पेशाब और १६३ ग्रेन चीनी कम हो गयी। आयुर्वेदके मान्य-ग्रन्थ भाव-

प्रकाश और सुश्रुतादिके मतसे गौओंके रङ्गके अनुसार उनके दूधमें गुण होते हैं। काली गौका दूध वायु नाशक, पीलीका वायु-पित्त नाशक, सफेदका गुल्मक और श्लेष्मकर एवं लालका वायु शमनकारक होता है। जवान गायका दूध त्रिदोष नाशक, तृप्तिकर और बलकर होता है। गाय और बच्छेका एक रङ्ग होनेपर भी दूधमें विशेष गुण आ जाते हैं। रासायनिक परीक्षाके द्वारा जाना गया है कि दूधमें चर्बी, चीनी, केसिन, एलमिनिम धातव पदार्थ और घन पदार्थके परमाणु न्यूनाधिक रूपसे रहते हैं। गौ जैसा चारा खाती है उसीके अनुरूप गुणयुक्त वह दूध देती है। दूधका पतला और गाढ़ा होना भी गौके खाद्य पदार्थ पर ही निर्भर है, केवल यही नहीं, खाद्यपदार्थके अनुसार दूधका स्वाद भी बदल जाता है। पहलौन ब्यायी हुई गायसे कई बारकी ब्यायींका दूध कुछ भारी होता है। जङ्गलमें खुला उछलकर जो गाएं तरह तरहकी घास खाती हैं उनका दूध विशेष हितकारक होता है। जो गौएं एक स्थान पर रहती है और उन्हें घूमने फिरनेका अवसर नहीं मिलता—उनका दूध स्वाथ्यके लिये अधिक उपकारी नहीं होता है। वर्षा ऋतुकी अपेक्षा शीतकालमें गौओंके दूधमें गाढ़ापन अधिक आ जाता है। इसी प्रकार ऋतु भेदसे दूधके स्वरूप और गुण—दोनोंमें थोड़ी बहुत विभिन्नता आ जाती है। प्रातः कालके दूधकी अपेक्षा सायंकालके दूहे हुए दूधमें मक्खनका भाग अधिक

रहता है। यह बात भी खूब परखी जा चुकी है कि विलायती गायोंसे हमारे यहांकी गायोंके दूधमें मक्खन अधिक अंशमें होता है। पहले निकले हुए दूधकी अपेक्षा भी बादमें निकला हुआ दूध अधिक मक्खन वाला होता है। जो दूध शीघ्रतासे दूहा जाता है, उसमें मक्खन विशेष परिमाणमें निकलता है। जो गौएं विलायतकी नकल कर मेशीनसे दूही जाती हैं, उनके दूधमें मक्खन कम हो जाता है। जिस गायका दूध पीला और गाढ़ा अधिक होता है समझना चाहिये: कि उसमें घृतका अंश अधिक है। अधिक सफेद और गाढ़े दूधका दही बहुत स्वादिष्ट होता है और उसमें छेना अधिक पाया जाता है। जिस दूधमें कुछ निलाई पतलेपन को लिये हुए हो, उस दूधमें यद्यपि मक्खन और छेना कम रहता है, किन्तु वह बालक और रोगीके लिये परम लाभदायक है। वह भी उस दूधका खानेमें अच्छा लगता है।

वत्सहीना और बालवत्सा गौका दूध अनुपकारी होता है। इस लिये गौके व्यानेपर दो सप्ताह पर्यन्त उसके दूधका सेवन न करना चाहिये। यह भी एक नियम है कि बछड़ी या बछड़ा ज्यों ज्यों बढ़ता जायगा, त्यों त्यों गायके दूधमें गाढ़ापन आता जायगा।

मथित दुग्ध लघुपाक पुष्टिकारक एवं वायु पित्त और कफका नाशक होता है। दोपहरमें दूधका सेवन करनेसे कफ व पित्तके प्रशमनके साथ अग्नि दीप्त होती है। जर्मनीमें मथित दूध बच्चोंके

आहारके लिये व्यवहारमें लाया जाता है। बचपनमें बालकोंको नियमित रूपसे दूधका सेवन करानेसे उनके शरीरका गठन दृढ़ होता है। दुग्ध सेवन नेत्रोंकी ज्योति बढ़ानेका भी साधन है। रात्रिमें दूध भोजनके थोड़ी देर बाद पीकर सोया जाय तो अन्नकी पचन-क्रिया अच्छी तरह हो जाती है। तुरन्त दूहा हुआ दूध धारोष्ण कहा जाता हैं। धारोष्ण दूध कच्चा ही पीया जाता है और वह बलकारक, लघु, शीतल अमृतके समान, अग्नि दीपक एवं त्रिदोषका नाशक होता है। कच्चे दूधको अधिक समय तक पड़ा रखनेसे उसमें रोग पैदा करने वाले परमाणु (वैक्टरिया) उत्पन्न हो जाते हैं। गर्म किया हुआ दूध अधिक समय तक खराब नहीं होता, कच्चा दूध भी अधिक ठण्डमें या बरफमें रखनेसे देर तक अपने असली रूपमें रह सकता है थोड़ा जल मिला कर साधारण अग्नि पर चढ़ा देनेसे भी दूधके खराब हो जानेका डर नहीं रहता।

दूधका सेवन.

दूधको गर्म करके पीना चाहिये। अधिक गर्म या अधिक ठण्डा किंवा वासी दूध खाने पर पचता नहीं और उससे पेटमें रोगका भी पैदा होजाना सम्भव है। दूध अधिक औटाने पर भारी हो जाता है और वह पचता भी बड़ी देरमें है। ताजा दूध वीर्य-बर्द्धक माना गया है आयुर्वेदके मतसे गर्म दूध, कफ और वायु नाशक और ठण्डा पितघ्न होता है।

हां,दूधमें बैक्टेरिया पैदा होनेका कारण जिन बर्तनोंमें दूध निकाला जाता है उनका सफा न होना है। हमारे देशके दूहनेवाले अपने हाथोंकी स्वच्छताकी ओर भी ध्यान नहीं देते, यही कारण है कि उनकी इस नासमझीसे अमृतोपम दूध विष बन जाता है और असंख्य बच्चे उस दूधको पीकर असमय ही अपने माता-पिताकी गोद खालीकर जाते हैं। विज्ञानके एक लेखमें हमने पढ़ा था कि बहुधा गौओंके थनमें धूल या गोबर जिसमें बैक्टेरिया अधिक होते हैं, लग जाता है। दूहते समय उसके कण दूधमें गिर पड़ते हैं जिससे असंख्य बैक्टेरिया उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये गायके थनोंको खूब धो लेना चाहिये जैसा कि गो-दोहन प्रसङ्गमें लिखा जा चुका है। दूहनेके बाद कुछ दूध स्तनोंके अग्र भागमें रह जाता है और वायुके योगसे उसमें जीवाणु प्रविष्ट हो जाते हैं, वही जीवाणु दूसरी बार दूहनेपर दूधमें आ जाते हैं, वास्तवमें दूधके फट जानेका कारण यही होता है। कच्चा दूध अधिक देरतक रहनेपर उसमें जो खटाई आजाती है वह भी दूषण है। उसमें माइक्रो आर्गेनिजम द्वारा लेक्टिक एसीड बढ़ जाता है। आगपर चढ़ाकर गर्म करनेसे जीवाणु नष्ट हो कर दूधका दोष निवृत्त हो जाता है।

दूधमें पानीकी जाँच

दूधमें पानी मिला रहनेसे उसके रङ्गमें कुछ नीलापन आजाता है। कांचके साफ गिलासमें दूध रखनेसे पानीका हिस्सा साफ

दिखने लगता है। दूधमें जलके जांचनेका एक कांचका यन्त्र आता है उसे 'लेक्टोमीटर' कहते हैं। उसके नीचे एक गांठ (Bulb) होती है। उसमें पारा भरा रहता है। ऊपरके भागकी नलीमें W और M तथा बीचमें एक दो तीन आदि अङ्क रहते हैं। W पानीका और M दूधका निशान समझा जाता है। एक छोटे गिलासमें दूध भरकर पूर्वोक्त यन्त्र लेक्टोमीटरको उसमें डुबाना चाहिये। विशुद्ध दुग्ध होनेसे यन्त्र M तक डूबेगा और जल होनेपर W तक, दूधमें जितना पानीका हिस्सा होगा वह १।२।३ आदि अङ्कोंमें मालूम हो जायगा। किन्तु कहा जाता है कि दूधमें बताशा मिला देनेसे लेक्टोमीटर भी पानी पकड़ नहीं सकता और चालाक ग्वाले ऐसा ही करते हैं। इसके लिये सहज और सीधी तरकीब यह है कि दूधमें सुईको डुबाना चाहिये, पानीका मिलावट होनेसे दुग्ध सुईको स्पर्श नहीं करेगा और विशुद्ध दुग्ध सुईके अग्र भागके साथ उठ आयेगा। यह दूधमें पानीकी परीक्षा करनेकी अनुभूत प्रक्रिया हैं।

दही।

दही भी हमारे नित्यके व्यवहारकी आवश्यक वस्तु है। दही जमानेकी क्रियाका यहां उल्लेख करना अनावश्यक है। क्योंकि सभी जानते हैं कि दूधको औटा लेनेके बाद ठण्डाकर जरा गर्म रहते जामन दिया जाता है और वह प्रायः ५ घण्टेमें दही बन जाता है। अधिक सर्दी होनेपर दही जिस बर्तनमें जमाया जाय,

उसे कपड़ेसे ढांप देना पड़ता है। कच्चे दूधमें भी जामन देनेपर दही जमाया जाता है। परन्तु उसमें ६।१० घण्टेका समय लगता है। दूधकी भांति ही आयुर्वेदमें दहीके गुणोंका वर्णन मिलता है। हेमन्त, शिशिर और वर्षा ऋतुमें दहीका सेवन करना बड़ा उपकारी बताया जाता है। दहीकी प्रकृति स्निग्धकर बलकारक अग्निदीपक पुष्टिकारक रुचिकारक एवं वायुनाशक होती है। चीनी या नमक मिलाकर यथारुचि दही भोजनके साथ खाया जाता है। वैज्ञानिकोंके मतसे दूधको दहीके रूपमें बदल देनेवाले लेकटिक एसीड बैक्टेरिया हैं और कहा जाता है कि ये बीजाणु पाकस्थलमें पहुंचकर बुढ़ापा पैदा करनेवाले वीजाणुओंका नाश कर देते हैं और शरीरको पुष्ट बनाते हैं। योरपमें आजकल दही प्रचुर परिमाणमें बरता जाने लगा है।

इस प्रकार दूधसे दही बनता है और दहीसे तक्र (छाछ) तक्र के गुण आयुर्वेदमें विस्तारसे लिखे हुए हैं। संक्षेपमें यहां इतना ही लिखना पर्याप्त होगा कि तक्र, लघु, सुपथ्य होनेके साथ वायुनाशक और मेह, गुल्म अतिसार, शूल, प्लीहा, अरुचि प्रभृति रोगोंमें बड़ा उपकारी है।

घृत।

घृतके विषयमें लिखकर बतानेकी आवश्यकता नहीं। दूधकी तरह घृत भी हमारे जीवन धारणका प्रधान उपादान है। आयुर्वेदमें

घीके विषयमें बहुत कुछ लिखा मिलता है। आयुर्वेदके मतसे गायका घृत परिपाकमें मधुर, शीतल वायुपित्त नाशक, पुष्टिकर और कान्तिवर्द्धक है। इस समय देशवासियोंके शरीरमें जो कमजोरीने घर बना लिया है, भांति भांतिके रोगोंने जड़ जमाली है, इसका मुख्य कारण शुद्ध घी और दूधका अभाव ही है। जिस समय भारतवर्षमें दूध और घीकी नदियां बहती थीं, उस समय न तो अबकी तरह अकाल मृत्यु ही होती थीं और न रात दिन लोगों को खटियापर पड़े पड़े वैद्य डाक्टरोंकी दवा खाते खाते अपना समय गुजारना पड़ता था। उस समय सभी .स्वस्थ, हृष्ट-पुष्ट बलीष्ठ थे। अब भी दूध घीका अभाव दूर होनेसे सभी रोग दूर हो सकते हैं, किन्तु दूध घीके अभावकी निवृत्ति गोवंशकी रक्षापर निर्भर है। इसलिये गोवंशकी रक्षा और बृद्धिके लिये हमारे प्रत्येक देशवासी भाईको व्रती होना चाहिये।

गोवर और गोमूत्र।

गोवर और गो-मूत्र—इन दोनोंकी ही पवित्रता और उपयोगिता हिन्दू-शास्त्रोंमें वर्णित है। शुद्धि-कार्यमें गोवर और गोमूत्र व्यवहारमें लाये जाते हैं। हिन्दू-शास्त्रकार कहते हैं कि—"गवां मूत्र पुरीषञ्च पवित्रं परमं मतं"। गोवरमें दूषित परमाणुओंके नाश करनेकी विलक्षण शक्ति है। गोवरके गुणमें फिनाइल (जो दुर्गन्ध नाशके लिये खूब बरता जाता है) से कोई भाव कम नहीं।

खेतकी उपजाऊ शक्ति बढ़ानेके लिये गोबरकी खाद बड़ा काम देती है। वैज्ञानिकोंके मतसे गोबरमें फास्फोरिक एसीड चूना मेग्नेसियाँ और सेलिका नामक वैज्ञानिक पदार्थ रहते हैं। गोबरका परिमाण और गुण गौओंके खाद्य और उनको अवस्थापर निर्भर है। हां, गोबरमें नाइट्रोजनका भाग भी रहता है। गायका गोबर घोड़ेकी लीदसे बहुत अधिक स्निग्ध होता है। गौके गोबरकी अपेक्षा सांढ़के गोबरमें लाइम (चूना) का भाग अधिक होता है। (गोबरकी खाद अच्छी तरह खेतीके काममें लायी जाय तो पैदावारमें दूनी ड्योढ़ी वृद्धि हो सकती है। इङ्गलैण्डकी रायल एग्रिकलचरल सोसाइटीने परीक्षा कर यह सिद्धान्त स्थिर किया हैं कि गोबरको धूप और वर्षामें पड़ा रखनेसे उसकी खादका गुण नष्ट हो जाता है। उस गुणकी रक्षा करनेके लिये यह उपाय करना चाहिये कि गोबर खेतमें स्थान स्थानपर न फेंका या डाला जाय। उसके लिये एक गढ़ा बना लेना चाहिये और उसीमें सवेरे शामको गोबर डाल दिया जाय। गोबर डालते डालते जब वह गढ़ा भर जाय तब उसका मुंह बन्द कर छप्पर या टीन छा देनेसे खादके नष्ट हो जानेका डर नहीं रहता। अनन्तर यथा समय निकालकर गोबर खादके काममें लाया जाय। यह ध्यान रखना चाहिये कि गोबरकी खादमें बड़ी उपजाऊ शक्ति होती है।) गोबरकी थापड़ी (ऊपले) सुखाकर जलानेके काममें भी लायी जाती है। गोबरसे एक लसदार अपूर्व पदार्थ निक-

बनता है, जिससे कागज जोड़नेका काम लिया जाता है। गोबर-की भस्म शीत निवारक मानी गयी है। यही कारण है कि साधु सन्त अपने शरीरमें भस्म लपेटे शीतकालमें भी नङ्ग धड़ङ्ग फिरते रहते हैं। अनुभवी लोगोंका कहना है कि गोबरके छानेकी राख मलनेसे दन्तशूल आदि दांतोंकी बीमारियां दूर होती हैं और दांतोंकी जड़मजबूत बनती है। किसी ऊंचे स्थानपरसे गिरकर कोई चोट खा बैठे तो गोबरको गर्मकर बांध देनेसे चोटकी वेदना कम हो जाती हैं। गोबरके सेकसे वात व्याधि भी नष्ट होती है। कटे घावपर ताजा गोबर बांध देनेसे तुरन्त खून बन्द हो जाता है और दो चार दिन लगातार बांधनेसे घाव भी भर जाता है। परन्तु कटे घावपर वही गोबर बांधना चाहिये, जो ताजा हो।

गो-मूत्र आयुर्वेदके मतसे क्षार, कटु तिक्त, कषाय रस, तीक्ष्ण उष्णवीर्य दीप्तिकर और पित्तोत्पादक हैं। वात शूल, गुल्म, उदर रोग, कण्डु, नेत्र रोग, मुखरोग, कृमि, आमवात, वस्तिरोग, कुष्ठ रोग, कास, श्वास, शोथ और पाण्डु आदि रोगोंको समूल नष्ट करनेकी गोमूत्रमें पूरी शक्ति है। रासायनिक परीक्षकोंने बताया हैं कि गोमूत्रमें फास्फेट प्रोटास लवण नाइट्रोजन आदि वस्तुओंका सन्निवेश है। नाइट्रोजनमें यूरिया एवं यूरिक एसीड भी है। खेतोंकी उपजाऊ शक्ति बढ़ानेके लिये जो खाद काममें लायी जाती हैं उन सबमें यह चीज बड़ी कामकी मानी जाती है। हिन्दू शास्त्रोंकी दृष्टिसे तो गो-मूत्रका पान पापोंका नाशक और गोमूत्रका मार्जन शरीरको पवित्र करनेवाला है।

बीसवां अध्याय।

सर जान उडरफके विचार।

कलकत्ता हाईकोर्टके माननीय विचारपति सर जान उडरफने सन् १९१७ के दिसम्बर मासमें अखिल भारतवर्षीय गो महा सभा-के प्रथमाधिवेशनके सभापतिकी हैसियतसे जो वक्तृता दी थी, उससे उनकी निस्सीम गोभक्तिका परिचय मिलता है। हमारी रायमें सर उडरफकी वक्तृता बड़ा वजन रखती है और इसलिये उसके महत्वपूर्ण अवतरण यहां उद्धृत किये जाते हैं:—

......"मेरा व्यक्तिगत विश्वास है, कि ऐसा कोई प्रश्न नहीं है कि जिसका अन्तमें धर्मसे सम्बन्ध न हो। जो व्यक्ति पशुओंके प्रति दया का बर्ताव करते हैं, चाहे उन्हे मारते हों या नहीं, वे मनुष्य अपनी दयाकी मात्रातक प्रकृत धार्मिक हैं। जो मनुष्य सर्वसाधारणकी भलाईके लिये परस्पर सहयोग करते हैं या ईमानदारीके साथ सेवा करते हैं वे भी धार्मिक हैं। एकमात्र अर्थनीति ही यथेष्ट प्रेरणा या आदर्श नहीं है। निदान अर्थनीति पर निर्भर करलेसे ही काम नहीं चल सकता है।".........

......"सभी जातियां चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान या ईसाई,

जिस विषयपर हम लोग विचार करना चाहते हैं, उससे कम या वेश सम्बन्ध रखती हैं।”...... “सभीके लिये गौ दूध, मक्खन और घीको खान है। और देशोंकी तरह इस देशमें भी दूध बच्चोंका खाद्य है। अधिक उम्रके अधिकांश मनुष्य दूध, घी और मक्खन खाते हैं। चायके साथ भी जिसकी खपत दिनोंदिन बढ़ रही है, बहुत दूध पीया जाता है। दूसरी बात यह है, कि भारतमें सभी जातिके मनुष्य मिठाइयां बनानेमें बहुत दूध खपाते हैं। इस देशके सभी मनुष्य बैलोंसे हल जोतते हैं, घोड़ोंसे नहीं। हमारी कमेटियोंमें ईसाई और मुसलमान दोनों सम्मिलित हैं। मुसलमान भाई विशेष धन्यवादके पात्र हैं क्योंकि वे हिन्दुओंको सहायता पहुंचानेमें डरे नहीं हैं और गौ शब्दका नाम सुनते ही सन्देहवश डरके मारे दूर नहीं भागे हैं।”...

......“कुछ वर्ष पहले एक विदेशी प्रोफेसर मेरे एक हिन्दुस्तानी मित्रके साथ घूम रहे थे। छोटे टूटे और बाँके सींगवाले दुवले पतले कुछ पशु, जिन्हें दुर्भाग्यवश वैसी हालतमें रास्तेमें देखना पड़ता है, वहां चर रहे थे। प्रोफेसर महाशयने कहा “देखो यह देश इतना गिर चुका है, कि यहांकी गायोंके सींग भी नहीं उगते।” यह सम्मति सचमुच युक्ति पूर्ण है। जिस देशकी गो जाति उत्तम है, वह देश धन धान्यसे परिपूर्ण है। जो व्यक्ति इस विषयकी खोज करता है, उसे दरिद्रता, अज्ञान, गफलत, और कहीं कहीं अत्याचार देख पड़ता है। कहीं कहीं सद्भाव, सदुसङ्कल्प और मनु-

ष्यत्व भी देख पड़ते हैं, इसकी साक्षी इस देशकी पिञ्जरापोलें और गौशालाएं दे रही हैं। इनकी संख्या ५५५ हैं। परन्तु इनमे भी सुधारकी बड़ी गुञ्जाइश है। गौके महत्वके सम्बन्धमें लम्बी चौड़ी बातें होनेपर भी गफलत और अत्याचार देखा जाता है। एक प्रकारसे ग्वालोंकी घृणा और अत्याचारपूर्ण बर्ताव सबसे निकृष्ट उदाहरण नहीं हैं। ग्वाले व्यापारी हैं और वे अधिकसे अधिक लाभ उठाना चाहते हैं, तो भी इनमें दया और धार्मिक भाव है। मूर्ख बैलगाड़ी हांकनेवालोंकी उदासीनता भी उतनी निकृष्ट नहीं है, परन्तु कुछ भद्र पुरुषोंकी उदासीनता और गफलत सारी हानियां पैदा करती हैं। उनका कर्त्तव्य है, इस विषयमें वे जानकार बनें और अच्छा काम करें।"........

......"मैं सुनता हूं कि आजकल कुछ हिन्दुस्तानी घरानोंमें स्त्रियोंने प्राच्य भाव और रीतियां त्यागकर गायोंकी सेवा करना छोड़ दिया है। इनकी माताएं और दादियां गो सेवा करती थीं। परन्तु ये अब मेरे ख्यालमें अपनेको मेमसाहिबा समझने लगी हैं, और अपने नौकरोंपर गोसेवाका भार छोड़ देती हैं। गोसेवा जैसे कामोंको वे अपने योग्य नहीं समझती हैं। इसका नतीजा सम्भवतः यह हुआ है, कि गफलत, बुरा बर्ताव और कुछ अंशमें भूखों मरनेका दृश्य देख पड़ता है। यह बात मैं जानता हूं। प्रायः बछड़ोंको जो दूध मिलना चाहिये वह उन्हें न देकर वे भूखों मारे जाते हैं। बिना दूध वाली और बूढ़ी गायें बेकार समझी जाती हैं और वे

ध्यान देने लायक नहीं समझी जातीं।"

"डाक्टरजोशीका कथन है, कि शहरके ग्वाले साधारणतः बछड़े नहीं पालते, क्योंकि उनसे धन नहीं प्राप्त होता है। प्रायः गफलतके कारण वे मरजाते हैं और कहीं कहीं वे जीवतावस्थामें ही मैलेकी गाड़ीमें फेंके जाते हैं। जहां सींगवाले पशुओंपर इस प्रकार अत्याचार होता है, वहां कल्याणकी आशा कैसे कर सकते हैं? आदिम निवासी कोल (जङ्गली) जातिका व्यवहार यद्यपि कठोर है, तथापि वह पृथक् और उत्तम है। कोल दूध नहीं पीता क्योंकि प्रकृतिने बछड़ेके लिये जो वस्तु प्रदान की है, उससे वह बछड़े-को वंचित करना नहीं चाहता। उच्चकुलकी उस मुसलमान लेडी का (महिलाका) उदाहरण क्या ही उत्तम है, जिसके लड़केने अङ्ग-रेज कलेक्टरके कहनेसे बिना दूधकी गायोंको बेकार समझकर उन्हें बेचना और मारना चाहा था। किन्तु माताने लड़केको जबाब दिया था, कि "गायको पीछे मारो पहले मेराही काम तमाम करदो।"

......"गत कई वर्षोंसे कुछ मनुष्योंकी यह इच्छा थी, कि गोकान्फरेन्स करें। अन्तमें यह हो ही गयी। जिससे यह पता लगता है, कि वर्त्तमान बुराईको मिटानेके लिये लोगोंमें कमसे कम गो-प्रेम पुनः प्रकट हुआ है। परन्तु इसका बातोंमें ही अन्त हो जाय, यह न होने देना चाहिये। हम लोगोंको बहुत अधिक उमङ्ग भी न करनी चाहिये और यह न समझना चाहिये कि सफलता पास है। उत्तम भावोंकी जागृति

ही काफी नहीं है, जबतक कि वे भाव कार्यरूपमें परिणत न कर दिये जांय। हम चमकीली. आतिशबाजी जो थोड़ी देर जलकर ठण्डी हो जाती है, देखना नहीं चाहते। परन्तु गर्म, उज्ज्वल और स्थायी रोशनी देखना चाहते हैं, चाहे उसका फैलाव थोड़ा हो। सरकारी रिपोर्टोंसे पता लगता है, कि गत कई वर्षोंसे सरकार इस बारेमें काम कर रही है। परन्तु सरकारकी इच्छा सार्व्व-जनिक (पबलिक) सहायताके बिना पूरी नहीं हो सकती है। आओ इसे पूरा करनेके लिये दृढ़ संकल्प करलें।"........

......"भारतके खाद्यपदार्थोंके साधारण प्रश्नमें बहुतसे लोग लगे हुए हैं। खाद्यपदार्थोंमें से कुछ बहुत ही आवश्यक चीजोंके अर्थात् दूध, मक्खन और घीके प्रश्नोंसे हमारा सम्बन्ध है। बहुत-से स्थलोंमें इस देशमें सजीवताका जो अभाव देख पड़ता है, उसका कारण कई लोग इस देशकी आबहवा बताते हैं। और और कारणोंकी भांति इसका भी प्रभाव पड़ता है सही, परन्तु यह यथेष्ट कारण नहीं है, क्योंकि आबहवा सदासे वर्त्तमान है, परन्तु इसका जो विषम फल बर्ताया जाता है, वह पहले नहीं देख पड़ता था। सजीवताका अभाव हिन्दुस्थानियोंके किसी स्वाभाविक दोष या यहांकी आबहवाके कारण उत्पन्न नहीं हुआ है, परन्तु भोजन, जल, हवा और स्वास्थ्यके सुप्रबन्धके अभावके कारण उत्पन्न हुआ है। अनेक मनुष्योंने देखा है, कि देशमें उदासीनता फैली हुई है। यह तन्दुरुस्तीके न रहनेके कारण

है। जब भोजनका अभाव है तब शिकायत करनेसे तथा बड़ी बड़ी औषधियोंका प्रयोग करनेसे कुछ भी लाभ नहीं हो सकता। ऐसी हालतमें शरीर तन्दुरुस्त नहीं रह सकता। काम करनेकी शक्तिकी कमी है ही और जो ज्यादा शक्ति होनी चाहिये, उसकी और भी कमी है। काफी भोजन न मिलनेसे हम सच्चा विचार भी नहीं कर सकते। मैं प्रायः कहता आया हूं, कि भारतको अधिक शक्तिकी आवश्यकता है। यह शक्ति अन्तमें अन्नपर निर्भर है, क्योंकि संसारमें अन्न ही दैविक और भौतिक शक्तियोंका मूल है।"

"यदि हिन्दुस्थानियोंको काफी भोजन प्राप्त होता रहे तो भारत फिर सच्चा भारत बन जाय और मन तथा शरीरसे भारतवासी फिर मजबूत बन जायं। उस दिन हिन्दुस्थानी लेखकका एक लेख मैंने पढ़ा था। उसमें लिखा हुआ था कि, (इस देशकी) मानसिक दुर्बलता न्यायसंगत है। परन्तु मैं इस बातको अस्वीकार करता हूं। कोई भी मानसिक दुर्बल नहीं है। यदि कोई मानसिक दुर्बल है, तो उसमें कुछ बुराई है। भारतकी भावी भलाईके लिये भोजनका प्रश्न सबसे महत्व-पूर्ण है। भोजनके प्रश्नके पीछे भारतकी दरिद्रता है। इसके पीछे जो कारण हैं, उनका मैं यहां जिक्र नहीं कर सकता।"......

......"इस देशके करोड़ों निरामिषभोजी मनुष्योंका दूध और उससे उत्पन्न पदार्थ ही प्रधान खाद्य है (यदि मिले तो)। इन पदा-र्थोंमें स्वास्थ्य और बल देनेवाले उपादान हैं। हम लोगोंका

आज इसी खास विषयसे सम्बन्ध है। दूधका प्रश्न विशुद्ध खाद्यपदार्थोंके बड़े प्रश्नका अङ्ग मात्र है। मामूली तौरसे देखनेसे दूधका प्रश्न सहज मालूम हो सकता है। परन्तु गहरी खोज करनेसे पता लग जाता है, कि सार्वजनिक स्वास्थ्य-रक्षाके प्रश्नोंमें दूधका प्रश्न अत्यन्त जटिल है। डाक्टर जोशीने दिखलाया है, कि कई कारणोंसे दूधकी समस्या उपस्थित हुई है। पहली बात यह कि दूध प्रायः सभी मनुष्योंका खाद्यपदार्थ है। दूसरी बात है कि दूध जब बिगड़ जाता है या मिलावटी बनाया जता है तब उसमें राजयक्ष्मा जैसी कई बीमारियोंके छोटे छोटे कीड़े पैदा हो जाते हैं।

भारतके किसी शहरमें दूधके १४०० नमूने परीक्षा किये गये थे, जिसमें से ४।५ भाग नमूनोंमें जल मिला हुआ था और सैकड़े प्रति ६० नमूनोंमें छोटे छोटे जीव मिले हुए थे, जिससे मालूम होता था, कि प्रत्येक नमूनेमें मैला मिला हुआ है। तीसरी बात यह है, कि आजकल यत्न और सफाईके साथ रखा हुआ दूध मिलना अत्यन्त कठिन हो गया है। चौथी बात यह है, कि इस देशकी आब-हवा ऐसी है, कि अन्य खाद्य पदार्थोंकी अपेक्षा दूध जल्दी खराब होजाता है। इस लिये यह अनुमान किया जा सकता है, कि सम्भवतः दूधका नमूना स्वास्थ्यके लिये हानिकारक होगा। अतएव यह कोई आश्चर्य्य की बात नहीं, कि जब देखते हैं, कि बम्बईके एक्जिक्यूटिव हेल्थ (स्वास्थ्य)

अफसर डाक्टर टर्नरने भारतके बड़े बड़े शहरोंकी दुग्ध-व्यवस्था-की असन्तोषजनक अवस्थाका वर्णन किया है। यद्यपि बड़े शहरोंमें साधारणतः बुराई अधिक है, तथापि इस देशके अन्यान्य स्थानोंके दूधका प्रश्न भी तुरन्त ध्यान देने योग्य है। विशुद्ध दूधकी कमी और घीकी मिलावटने प्रत्येक मनुष्यके सामने इस विषयको उपस्थित कर दिया है। यदि हम भूत और वर्तमान अवस्थाओंपर विचार करें तो हमारी आजकी सभाको आवश्यकताका पता लग जाय। भूत अवस्था-ओंसे मेरा सतयुगसे, चाहे वह कल्पित या यथार्थं क्यों न हो, सम्बन्ध नहीं है, परन्तु उस भूतकालसे हैं, जिससे वर्तमान जीवित मनुष्य परिचित हैं। पचास वर्षके मनुष्योंको याद है, कि एक समय वह था, जब रुपयेमें १२ सेर दूध मिलता था और १ या २ सेर दूध तो सिर्फ मांगनेसे ही मुफ्त मिल जाता था। आजकल दूधकी दर बहुत अधिक चढ़ गयी है और किसी भी दरमें विशुद्ध दूधका मिलना कठिन हो गया है! बड़े शहरोंमें ४ आना सेरसे कम दरमें विशुद्ध दूधका मिलना कठिन हो गया है और यह दर योरप और अमेरिकाके शहरोंके दूधकी दरसे भी अधिक है। इससे यह स्पष्ट है कि दूधकी पैदावार और खपत में कोई भारी त्रुटि है। खासकर जब देखते हैं कि योरप और अमेरिकाकी अपेक्षा भारतमें मजदूरी सस्ती है।"

"हालमें अच्छे पशुओंकी कीमत भी बढ़ गयी है। इससे गरीबोंपर

बहुत भारी बोझ पड़ गया है और बहुतोंको तो किसी भी तरहसे दूध मिलनेमें कठिनाई झेलनी पड़ती है। कुछ गरीब बच्चोंको पीनेके लिये दूध मिलता ही नहीं है।"

"भारतके अधिकांश मनुष्य मांसाहारी नहीं हैं और उनके भोजनमें दूधका बड़ा भाग रहता है, इसलिये मैं बता चुका हूं, कि दूधका प्रश्न अधिक महत्वका है। समग्र भारतमें गो-जातिकी संख्या कितनी है, उसके आंकड़े हमें नहीं मिले हैं, परन्तु उदाहरण स्वरूप संयुक्त प्रान्तकी प्रान्तीय रिपोर्टपर नजर डालनेसे मालूम होता है कि, संयुक्तप्रान्तमें सन् १९०४ और १९१५ ई० के बीच बैलोंकी संख्या ६ लाख, गायोंकी ५॥ लाख और बछड़े बछड़ियोंका संख्या १॥ लाख घट गयी है, परन्तु चाहे गोवंशकी संख्या घटी हो या बढ़ी हो, यह बात स्पष्ट है, कि भारतमें दूध देनेवाली गायोंके गुणमें कमी हुई है। उत्तम पशुओंकी संख्या दिन प्रति दिन घटती जा रही है। परन्तु यहां ही अन्त नहीं हो गया, जो कुछ पशु हैं वे भी दुर्बल और कमजोर हैं।"

दूधकी आमदनी घटनेके दो ही मुख्य कारण देख पड़ते हैं, अर्थात् गायोंकी संख्या घट जाना और उनकी दूध देनेकी शक्तिका कम हो जाना, परन्तु पिछला कारण सबसे मुख्य है। इसके बाद मुख्य कारण हैं,—बुरी तरहसे नसल बढ़ाना, कम और बुरा चारा खिलाना, बुरा बर्ताव करना, बीमारी और अकाल मृत्यु होना और नौजवान गायों और बछड़े-बछड़ियोंकी हत्या होना।"

......"डाक्टर वेलेकर अपनी "भारतीय कृषिकी उन्नति" नामकी पुस्तकमें गोचर-भूमिका रहना ही एकमात्र आवश्यक नहीं सम-, झते। उनके कहने मुताबिक हर समय यह बात सत्य नहीं है कि जहां गोचर-भूमि काफी है, वहां ही सबसे उत्तम गो-जाति रहे।"........

"सर्व प्रथम मैं नस्ल बढ़ानेका जिक्र करूंगा। इस विषयमें लोगोंकी सम्मति पृथक् पृथक् है कोई देशी सांढ़ोंसे और कोई आमदनी किये हुए साढ़ोंसे नस्ल बढ़ाना पसन्द करते हैं।"......

पशुओंकी भावी उन्नतिके लिये हमारा कर्तव्य है, कि हम सर्व.प्रथम अच्छी नस्लके सांढ़ तैयार करें और अच्छी गायोंसे बुरी गायें पृथक कर उन्नति करें। इस देशमें दूधके लिये गायोंकी, और बोझ तथा हल खींचनेके कामके लिये बैलोंकी जरूरत है। इसलिये अच्छी दूध देनेवाली गाय और उत्तम खींचनेवाले बैल पैदा करना एक उद्देश्य बतलाया गया है। उत्तम जाति और नस्लके पशुओंसे सांड़ चुन लिये जायं। योग्य सांड़ोंका जो अभाव है, उसे मिटानेके लिये उपाय करना चाहिये। बङ्गाल कृषि-विभागके डाइरेक्टर मिस्टर ब्लैकउड साहब सरकारी मर्दुमशुमारीमें लिखते हैं, कि इस प्रान्तमें गोजातिकी उन्नतिके विरुद्ध ये बातें हैं,—आव-हवा गोचर-भूमिका अभाव, नस्लके योग्य सांड़ोंकी कमी, कम उम्रके सांड़ोंसे गायें गाभिन कराना, धर्म-सांड़ोंकी संख्या घट जाना और बछड़ियों और बछड़ोंको भूखों

मारना, जो गोजातिकी सजीवता नष्ट करनेमें एक प्रधान शक्ति है। इन नियमोंसे धर्म-साड़ोंकी संख्या घटनेके वारेमें कुछ कहूंगा। कृषि-विभागके डाइरेक्टरकी राय है कि गोचर-भूमिकी कमीके कारण यह घटी अधिक हुई है। मेरी रायमें इसके और भी कई कारण हैं। हाईकोर्टों ने फैसला किया हैं कि श्राद्धोंमें हिन्दू जो धर्म्म-सांड़ छोड़ते हैं, वे किसीको भी सम्पत्ति नहीं हैं। ये सांड़ इधर उधर घूमते फिरते थे, गांव वाले उनसे अपनी गायें गाभिन करवानेका काम लेते थे। परन्तु हाईकोर्टोंके फैसलोंके कारण अव कोई भी व्यक्ति साड़ोंको पकड़कर मार सकता है। मैंने सुना है कि कुछ सांड़ मैलेकीगाड़ियोंमें जोते जाते हैं, कुछ कसाइयोंके हाथ मारे जाते हैं। विदेशी कानूनी भावोंके बिना सोचे समझे इस देशमें प्रयोग करनेसे जो हानि होती है, हाईकोर्टके उक्त फैसले इस बातके उचित उदाहरण हैं। धर्मवश सार्वजनिक व्यबहारके लिये सांड़ छोड़नेकी बात विलायती कानूनमें नहीं है। परन्तु इसका कोई सबब नहीं है कि इसकी उपकारिता क्यों नष्ट की जाय। माननीय मिष्टर के० के० चन्दाने इसलिये एक मसविदा कौंसिलमें पेश किया है जिसका उद्देश्य इन फसलोंसे जो बुराई पैदा हुई हैं, उसका प्रतिकार करना है। इस बिलका (मसविदेका) आशय है, कि धर्म्म-सांड़ोंका भार राज्यको प्रदान किया जाय जो गायोंको गाभिन करनेके लिये उनकी रक्षा करे। धर्म्म-सांड़ोंपर कितना

अधिक विश्वास स्थापित किया जा सकता है, मुझे, इस विषयमें सन्देह है। जिस धर्मभावने इन्हें स्वतन्त्र बनाया था, वह अब दिनोंदिन घटता जा रहा है। सर्वसाधारणके हितके कई अन्य धार्मिक कार्य जैसे—तालाव खुदाना, पेड़ लगाना, इत्यादि जो गत पीढ़ियोंमें प्रचलित थे, उनका भी अब ह्रास हो रहा है। इस स्थितिमें यह सन्देह जनक है, कि धर्म्म-सांड़ोंका छोड़ना जारी रहेगा या नहीं। आजकल लोगोंमें नि;स्वार्थ भाव नहीं रहा है, यही कारण है कि लोगोंने धर्म्म-सांड़ छोड़ना त्याग दिया है।"

"आज हम लोगोंको आर्थिक दृष्टिसे विचार करना और देखना चाहिये, अर्थात् जिससे धन पैदा हो और सर्वसाधारणका स्वार्थ सिद्ध हो। इसके लिये पशु-पालनेवालोंको सुविधाएं प्रदान की जायं और सरकारी पशु उत्पादनके फर्मोंसे मदद और सहायता दिलायी जाय।"

"परन्तु पशु पैदा करनेसे कुछ लाभ नहीं है, यदि उसको उचित रूपसे भोजन न मिले। भारतकी दूधवाली गायोंकी अवनतिके कारणोंमेंसे कम चारा और लापरवाही पालन, आंशिक कारण हैं। इस देशकी थोड़ी पूंजीवाले प्रायः गायोंको कम खाना देते हैं। कुछ बड़े बड़े डेरी फार्मोंमें (गोशालाओंमें) तथा अन्यान्य स्थानोंमें नौकर लोग उचित रूपसे पशुओंकी देख-भाल नहीं करते। यह पिछला उदाहरण बेईमानी या गफ़लतकी

सेवाका एक उदाहरण है, जा बहुतसी बुराइयोंका कारण है। ये बुराइयां जिन्हें हम नष्ट करना चाहते हैं, सिर्फ आर्थिक प्रार्थनासे नहीं नष्ट होंगी; परन्तु शुद्धाचारपूर्ण प्रार्थनासे काम लेना पड़ेगा।"

"अब हम गोचर भूमि और चारेके प्रश्नोंपर विचार करेंगे। मिष्टर ब्लेकउडका कथन है, कि बङ्गालमें आबहवाके सिवाय गोवंशकी उत्पत्तिको धक्का पहुंचानेवाले कारणोंमेंसे सबसे बड़ा कारण गोचर भूमिकी कमी है। साधारण कृषक इससे सुपरिचित हैं और गो-जातिकी अवनतिके कारण जब उससे पूछे जाते हैं, तो वह कहता है, कि गोचर भूमिका अभावही अवनतिका मूल है। मिष्टर ब्लेकउडका कहना है, कि प्रतिकारके कई उपाय बताये जाते हैं, परन्तु मेरी रायमें अधिकांश उपाय अच्छी तरहसे सोचे नहीं गये हैं और वे कामके नहीं है। उनसे भलाईके बदले बुराई अधिक होगी। इस विषयमें आपका ध्यान उनकी खोज या जांचकी ओर आकर्षित करता हूं। प्राचीन स्मृतियोंका उपदेश है, कि प्रत्येक गांव और शहरमें गोचरभूमि छोड़नी चाहिये। वर्तमान समयमें गोचर भूमिका बड़ा ह्रास हुआ है, कारण थोड़ी पूंजीवाले मनुष्योंको गोचर-भूमि रखनेकी अपेक्षा उसे बेचनेसे अधिक लाभ होता है। अधिक आर्थिक लोभके कारण दूसरोंकी (गोजातिकी) भूमि छीनी जा रही है। साधारणतः सभी सहमत हैं, कि गोचर भूमिके लिये प्रचुर

सुविधाएं प्रदान करनी चाहियें। परन्तु विरोधी स्वार्थोंके कारण तथा अन्य कारणोंसे किन उपायोंसे काम लिया जाय, इसके बारेमें मतभेद है। कई लोगोंकी राय है, कि गोचर भूमिकी रक्षाके लिये कानूनसे काम लेना चाहिये और जो गोचर भूमि हड़प की गयी है, उसका फिर उद्धार होना चाहिये। दूसरे मनुष्योंका कहना है, कि सरकारी खजानोंसे सरकारको नयी गोचर भूमि खरीदनी चाहिये। अर्थात् अन्यायपूर्वक जो गोचर भूमि हड़प की गयी है, उसके उद्धारके लिये देश धन प्रदान करे। यह भी कहा जाता है, आर्थिक दृष्टिसे गोचर-भूमिका हड़पना न्याय सङ्गत है और इस विषयमें हस्तक्षेप होनेसे आर्थिक प्रश्नमें बाधा पहुंचेगी और आजकलके लिये वह भयङ्कर होगा। यह भी कहा जाता है, कि खेतीके लिये गोजातिकी जरूरत है, इसलिये वैसे वैसे गाय बैलोंकी कीमत जरूर बढ़ेगी, जैसे जैसे बाकी गोचर भूमिपर आक्रमण बढ़ेंगे। अन्तमें जैसा कि मिष्टर मोरलैण्ड कहते हैं,—"ऊसर जड़-भूमिको गोचर भूमि बनाना पड़ेगा।"

..."मिष्टर ब्लेकउड इस प्रश्नके निपटारेके लिये राय देते हैं, कि चारेके लिये जुवार, घास तथा ऐसे ही पदार्थोंकी खेती करनी चाहिये या जमीनमें एक बार चारेकी खेती और दूसरी बार अनाजकी खेती कर मिश्रित खेतोंसे काम निकालना चाहिये। जमीनमें चारेकी खेती करनेसे उसे विश्राम भी मिल

जायगा और भावी अनाजको खेतीके लिये भूमिकी उत्पादिका शक्ति बढ़ानेमें गोबर बड़ी अच्छी खाद है। लेकिन आपकी राय है, कि छोटे छोटे जमीनके टुकड़ोंमें खेती करनेवाले किसान उक्त उपाय अवलम्बन नहीं कर सकते हैं। परन्तु कोई उपाय जरूर निकालना पड़ेगा। यदि गोचर भूमिका फिर उद्धार किया जाय या प्राप्त की जाय, तो लोगोंने मुझे सलाह दी है, कि प्रत्येक गांवमें खेतीके योग्य जितनी भूमि हो उसका दसवां हिस्सा गोचर भूमिके लिये छोड़ दिया जाय और उसमें एक तालाब भी रहे। आजकल गाय व बैलोंको काफी चारा नहीं मिलता और हलमें जोते जानेवाले पशुओंसे न्यायसे अधिक परिश्रम लिया जाता है। मेरे ख्यालमें पाराशर स्मृतिमें लिखा हुआ है, कि प्राचीन समयमें चार जोड़े बैलोंसे काम लिया जाता था। जिससे प्रत्येक जोड़ेको विश्राम मिल जाता था। परन्तु आज कल एक ही जोड़े बैलोंसे दिनभर परिश्रम कराया जाता है। मैं और एक उपायसे काम लेना उचित समझता हूं, यद्यपि वह उपाय आर्थिक दृष्टिसे उत्तम नहीं है, तो भी वह ख्याली भीनहीं है:—अर्थात् जिन्होंने अन्याय पूर्वक गोचर भूमि छीनी है, वे उसे लौटानेके लिये बाध्य कियेजायं। आशा है, कि यदि उचित रूपसे प्रार्थना की जाय और गोचर भूमिसेदेशके कल्याणका कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है, ये बातें सर्वसाधारणको समझा दी जायं तो लोग स्वार्थको त्याग कर इस ओर जरूर ध्यान देंगे।"

"अन्यान्य विषयोंकी भांति इस सम्बन्धमें भी सबसे अधिक जरूरत इस बातकी है कि सार्वजनिक भलाईके लिये सार्वजनिक भावोंका सर्वत्र प्रचार करना पड़ेगा, जिससे नीच स्वार्थियोंका मुंह काला हो जायगा। भूमिकी उत्पादिका शक्तिके ह्रासका कारण कृषिकाय सम्बन्धी ज्ञानका अभाव है।"

"स्वस्थ अवस्थामें और बीमारीकी हालतमें पशुओंके साथ अनुचित बर्ताव किया जाता है। इस बारेमें स्कूल, कालेज और विश्वविद्यालयोंमें कृषि-ज्ञानके प्रचारकी आवश्यकता है। विश्व-विद्यालयोंका कर्तव्य है कि क्लासोंमें अध्यापकोंके द्वारा शिक्षा देनेके सिवाय अमेरिकाकी भांति घूम घूमकर कृषि-सम्बन्धी व्याख्यान दिलानेका प्रबन्ध करें। आजकल आवश्यकतासे अधिक कानूनी शिक्षा पर ध्यान दिया जाता है। परन्तु कानूनी ज्ञानसे अधिक उपयोगी कई प्रकारकी शिक्षाएं हैं। हर साल सैकड़ों वकील बनते हैं। वास्तवमें उनकी कोई आवश्यकता नहीं है। इन बेचारोंमेंसे बहुतसे वकील तो स्वयं वकालत पसन्द नहीं करते हैं। काल्पनिक डिप्टी मजिस्ट्रेटसे तथा इसी प्रकारकी सरकारी और अधीनताकी नौकरियोंसे लोगोंका ध्यान हटानेमें पहले कुछ कठिनाईका सामना करना पड़ेगा। परन्तु जब भूखों मरनेकी नौबत आ जायगी तब यह कठिनाई न रहेगी। वह समय आ रहा है जब प्रत्येक मनुष्यको चाहे जो काम मिले, करना पड़ेगा। अभाव ही अक्लको ठिकाने लावेगा।"

..."कहा जाता है कि पशु-चिकित्सामें प्रवीण डाक्टरोंकी वृद्धिसे उपकार होगा।, परन्तु मेरा ऐसा विश्वास नहीं है मैं किसी भी प्रकारके सरकारी अफसरोंकी अत्यधिक संख्या वृद्धिका विरोधी हूं। साधारण लोगोंमें पशु-चिकित्सा-ज्ञान और पद्धतिका प्रचार होनेसे लाभ हो सकेगा। प्रत्येक प्रान्तमें हिन्दुस्थानी और योरपीय ढङ्गसे पशुचिकित्सा करनेवाले मनुष्योंके नाम और पते सहित फिहरिस्तें तैयार कराकर बंटवाना लाभदायक होगा।"...

"प्राचीन ज्ञानको मरने न दो, जैसे कि आयुर्वेदिक चिकित्सा कुछ दर्जे तक मर चुकी है। आजकलकी सभी बातोंसे पुराने आदमी जानकार न होनेपर भी वे मूर्ख नहीं थे, जैसा कि अपनी गफलतके कारण कितने ही मनुष्योंका झूठा खयाल हो रहा है। उचित बर्ताव न करनेके सबबसे गोवंशकी अकाल और रुकनेवाली मृत्यु हो रही है। अनुचित बर्ताव, स्वल्प और अनुपयोगी चारा (विशेषतः गाभिन गायोंके बारेमें) और कलकत्ता जैसे बड़े बड़े शहरोंमें गाय और बछड़ोंके लिये व्यायामका अभाव और बुरी तरहसे नसल बढ़ाना (जिससे कमजोर संतान पैदा होती है) ये सब उक्त मृत्युके कारण हैं।"

"अन्तिम विषय नौजवान गाय और बछड़े, बछड़ियोंकी हत्या है। नौजवान गायसे मतलब यह है, कि जो गायें तीनबार नहीं बियायी हैं और जिनकी दूध देनेकी शक्ति नष्ट नहीं हुई है और बछड़ियां जो गाभिन हो सकती हैं। कुछ समय

पहले कलकत्ता म्युनिसिपलटीने फीस बढ़ाकर इस हत्याको रोकनेकी चेष्टा की थी। परन्तु ऐसा हुल्लड़ मचा कि, जिसके सामने म्युनिसिपलटीको उक्त नियम रद्द कर देना पड़ा, जैसी कि आजकलकी रिवाज हो गयी है। जिन आदमियोंके स्वार्थमें हानि पहुंचेगी, वे हुल्लड़ मचाया ही करेंगे। तो भी समाजका कर्तव्य है, कि वह उस कामको जबर्दस्ती करावे जिसमें सर्व्व-साधारणका (पबलिकका) भला हो, चाहे लोगोंके स्वार्थ-मार्गमें हानि पहुंचे। सभी माननीय नियमोंका यह सार-तत्त्व है। यह प्रश्न बड़ा जरूरी है, कारण उत्तम उत्तम दूध देनेवाली गाये शहरोंमें भेजी जा रही हैं और जब उनका दूध सूख जाता है, तब वे बड़ी संख्यामें मारी जाती हैं। इसका यह विषमय फल हुआ है, कि उत्तम गायोंकी संख्या घटी जा रही है।"

यूरोप, अमेरिका और उपनिवेशोंमें दो मतलब से गाये पाली जाती हैं—(१) गोमांसके लिये (२) दूधके लिये। साधारणतः कोई भी आदमी दूधवाली उत्तम गायको मारनेका विचार भी नहीं करता और गोमांसके लिये अलग गाये पाली जाती हैं, जिससे दूध देनेवाली गायोंको मारनेकी वहां कुछ भी जरूरत नहीं है। वहां सिर्फ बछड़े ही मारे जाते हैं, बछड़ियां नहीं। फौजी और मुल्की यूरोपियनोंके सिवाय इस देशमें गोमांस प्रायः कोई नहीं खाता है। इससे यूरोप और अमेरिकाकी भांति

मांसके लिये गोपालनकी आवश्यकता भारतमें आजतक उपस्थित नहीं हुई है। परन्तु इन जातियोंके लिये गोमांसकी जरूरत रहेगी, जैसा मैंने कहा है।"

"न जाने किस कारण फौजके लिये विदेशोंसे गोमांस मंगवाना सरकारने अस्वीकार किया था। यदि विदेशोंसे गो-मांस आने लगता तो भारतीय गोजातिकी हत्या बहुत रुकजाती। अधिकांश भारतवासी मांसाहारी नहीं हैं, या कम पशुमांस खाते हैं। भारतवासियोंके लिये हल चलाने और बोझ ढोने तथा दूधके लिये गोजातिकी आवश्यकता है।"

"गोमांसके खास उद्देश्यके लिये गोपालन न होनेके कारण गोमांसाहारियोंके स्वार्थके लिये गाय और बैलोंपर आक्रमण किया जाता है। परन्तु एकके स्वार्थके लिये दूसरोंका स्वार्थ क्यों नष्ट किया जाय? थोड़े से गोमांसाहारियोंके लिये गोहत्या जारी रहे और जिनक दूधका स्वार्थ है, वे सच्ची चिल्लाहट मचाकर ही रह जायं, कि हमें व्यर्थ कष्ट क्यों दिया जा रहा है! मैं इसको रोकनेके तीन उपाय सोचता हूं। पहली बात यह है, कि यूरोपियन सिपाहियोंके लिये सरकार विदेशोंसे मांस मंगवाये।"......

"यह बात भी ध्यान देने योग्य है, कि भारतीय गाय, बैल विदेशोंमें भी भेजे जाते हैं और यह रफ्तनी भी रोक दी जाय या नियमित कर दी जाय।"......

"यह भी कहा जाता है, कि शहरोंमें गायोंका रहना म्युनि-

सिपलटियों द्वारा बन्द कर दिया जाय। कारण शहरोंमे बुरी तरहसे गाय, बैल आदि तङ्ग स्थानमें ठसाठस भर दिये जाते हैं, जहां वे चल फिर नहीं सकते हैं। यह बात प्रसिद्ध है, कि उनके आस-पासमें इतना मैला जमा रहता है, कि देखनेवालेके मनमें घृणा पैदा होती है। घृणित "फूका" के जरिये ग्वाले पशुओंके साथ बड़ा बुरा बर्ताव करते हैं। यह सच है, कि "फूका" करना कानूनसे रोका गया है, परन्तु इसके तथा पशुओंपर और जो अत्याचार होते हैं उनके रोकनेके लिये और भी कड़ी दण्ड व्यवस्था रहनी चाहिये।" म्युनिसिपलटीके कम तनखाह पाने-वाले कर्मचारी कानूनी नियमोंके तोड़नेपर भी जो आना-कानी कर देते हैं, उसके लिये कठिन दण्ड-व्यवस्था रहनी चाहिये। जहांतक सम्भव हो मूर्ख और स्वार्थी ग्वालोंके हाथसे, जिनकी आदतें मैली होती हैं, यह विषय छीन लेना चाहिये और दूध लानेके लिये सुविधाएं कर गायें शहरोंके आस-पास स्थानोंमें रहनी चाहियें। वहां पशुओंको स्थान और हवा मिल सकेगी तथा उनकी सम्हाल भी हो सकेगी।"

"दूधकी परीक्षा और सार्टिफिकेटके लिये कानून बनाया जाय। मैं जानता हूं, इस काममें दिक्कतें बहुत हैं और इसपर बड़ी सावधानीके साथ विचार करना पड़ेगा। दिनो दिन बढ़ती हुई शहरोंकी आबादीके कारण और बीमारियोंके फैलनेकी बड़ी सम्भावना रहनेके सबबसे कई प्रकारसे गायका प्रश्न सबसे

अधिक जरूरी हो गया है। हिसाब लगाया गया है, कि कलकत्तेमें प्रति दिन प्रायः ३००० मन दूध (या दूध नामका कोई पदार्थ) खपता है। दूध सिर्फ महंगा ही नहीं, मिश्रित और बिगड़ा हुआ भी है। यह बात पूछी जाती है, कि कम्पनियां या साहूकार लोग बड़े रूपसे दूधकी व्यवस्थाका भार उठानेके लिये आगे क्यों नहीं बढ़ते हैं? यह भी सच है, कि यूरोपियनोंके कई सुप्रबन्धित दुग्धालय (डेरी फार्म) हैं, परन्तु वे बड़े आदमियोंके फायदेके लिये ही हैं। मिष्टर ब्लेकउडने, जिनका जिक्र कर आया हूं, कारण बतलाये हैं, कि क्यों लोग इस काममें धन नहीं लगाते। जबतक सर्वसाधारणकी दरिद्रता दूर न हो और जो लोग पूंजी लगावें, उनके अनुकूल अवस्थाएं उपस्थित न हों, तबतक पूनेकी कृषि कानफरेन्समें दुग्ध-व्यवस्थाके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव पास हुए थे, उसके अनुसार काम किया जाय। "कमिटीकी राय है, कि "लोगोंकी स्वास्थ्य-रक्षाके लिये तथा समाजकी भावी भलाईके लिये पर्याप्त दूधकी व्यवस्था होनेकी इतनी जरूरत है, कि अन्य शिल्पोंको सरकारी सहायताकी जितनी आवश्यकता रहती है, दूधकी व्यवस्थाका फिरसे प्रबन्ध करनेके लिये उससे भी अधिक सहायता देनेमें सरकारको तैयार रहना चाहिये।"

"मेरी समझमें यही खास बातें हैं, जो मैंने आपके सामने पेश की हैं। आपको और भी बातें मालूम होंगी। प्रतिकारोंके

सम्बन्धमें इस बातकी बड़ी जरूरत है, कि पब्लिककी भलाईके लिये सहानुभूति और सद्भाव हों। वर्तमान अवस्थामें राज्य-शक्ति प्रजाकी भलाई या बुराईमें बड़ा भाग लेती है। परन्तु प्राचीन भारतका जो मुख्य सिद्धान्त सेवा-धर्म है, उसमें लोगों-की चेष्टा और ध्यान हो, इसके लिये उत्साह बढ़ाना चाहिये। जब शक्ति पूर्ण हो जायगी, तब राज्यकी सहायताकी जरूरत न रहेगी। कानून, अर्थनीति तथा और और बाहरी कारणोंसे जो समस्याएं, जिनका प्रायः सरलताके साथ समाधान नहीं होता है, उपस्थित होती हैं वे हल हो जायंगी।

"धन हीन जनता इच्छुक होनेपर भी, दरिद्रताके कारण गौ-ओंको उचित रीतिसे नहीं पाल सकती। वह घर, जहां गौ बास नहीं करती हैं, श्मशान सदृश है—यह पुराणोंकी पुरातन शिक्षा है। इसपर भी धनी-मानी लोग अपने घरोंमें गाय नहीं रखते, जो कुछ दूध खर्च होता है, वह बाहरसे खरीद लिया जाता है और गोपालनका काम ग्वालोंको सौंप दिया गया है, जो उनसे हदसे ज्यादा दूध दूह लेते हैं। अथवा इसका भार धन-हीन लोगोंपर छोड़ दिया गया है, जो अपना ही पेट भरनेमें अस-मर्थ होनेके कारण पशुओंकी यथेष्ट रक्षा नहीं कर सकते। कृषक जाति, जिसपर पशुओंके पालन और संरक्षणका भार है, दिनपर दिन दरिद्र होती जाती है।"......"प्रोफेसर नाइटके कथना-नुसार गाय बैलोंकी दशा अच्छे सांड़ न होनेके कारण बिगड़ती

जाती है ; चारे और भूसेका वह हाल है कि जापानमें जो लम्बाई चौड़ाईमें हिन्दुस्तानका नवां हिस्सा है, यहांसे आधी गोचर भूमि है। अर्थात् यहांसे चारगुनी गोचर भूमि वहांपर है। लकड़ी और कोयला मंहगा होनेके कारण गोबर जलानेके काममें लाया जाता है और इस तरह एक अच्छी कीमती खादका अभाव हो जाता है। गर्भिणी गायें भी मारी जाती हैं और बछड़े जन्मतेही घातकोंके हाथ बेच दिये जाते हैं। ऐसा कहा जाता है कि, जीवित दशामें ही कतिपय पशुओंकी खाल खींच ली जाती है। भारत सरकारके सहकारी मन्त्री मि० हूसके कथनानुसार अनेकानेक पशु मारे जाते हैं और विदेश जानेवाली खालकी संख्या जो संन् १८६५–६६ में साठ लाख थी, सन् १६१४ में बढ़कर तेरह करोड़ तक हो गयी ! मिष्टर जस्सावाला कहते हैं कि अनुमान डेढ़ लाख पशु प्रतिवर्ष गोरे सिपाहियोंके लियेमारे जाते हैं। समाचाररोंसे यह भी मालूम हुआ कि एक साल मरीके कारण लगभग १ करोड़ पशु इस संसारसे कूच कर गये।”......

“सर्व शक्तिमान ईश्वर हमारे प्रयत्नोंको सफलीभूत करें जिससे यह देश ऋद्धि–सिद्धिको प्राप्त हो। यह ऋद्धि-सिद्धि हमें तभी मिलेगी, जब हम अपनेको इस योग्य बनावेंगे और यह तभी हो सकेगा, जब हम पशुओंके साथ और अन्य जीवधारियोंके उचित व्यवहार करेंगे तथा अपने भाइयों सहित अपने कर्तव्यका पालन करेंगे।”

इक्कीसवां अध्याय।

गोजातिके रोग और उनका प्रतिकार।

मनुष्यकी भांति ही पशु-शरीरपर रोगका प्रभाव पड़ता है। इसलिये जिस प्रकार मनुष्यके स्वास्थ्यकी रक्षा और रोग-प्रतिकार करनेके लिये सचेष्ट रहनेकी आवश्यकता हैं, उसी प्रकार पशुओंकी स्वास्थ्यरक्षाका सदा ध्यान रखना प्रयोजनीय है। यदि पशु किसी रोगसे पीड़ित देखा जाय तो उस रोगकी निवृत्तिका उपाय करनेमें विलम्ब न करना चाहिये। साथ ही इसके रोगी पशुको नीरोग पशुओंसे अलग रखनेकी व्यवस्था करना कर्तव्य है।

गौआदिक पशुओंको प्रतिदिन विशेष दृष्टिसे देखते रहना चाहिये और इस बातकी पूरी संभाल रखनी चाहिये कि गाय बैल या बच्छे बच्छी उदास तो नहीं हैं; चारा दाना स्वाभाविक रूपसे खाकर जुगाली करते हैं या नहीं? गोबर गाढ़ा होता है या पतला? बार बार उठ बैठकर पशु बेचैनी तो नहीं दिखा रहे हैं?



दवा पिलानेकी तरकीब।

नाड़ी परीक्षा।

रोगी गौ-बैलोंकी चिकित्सा करनेमें उनके स्वस्थ शरीरकी गर्मी, नाड़ीकी गति और श्वास-प्रश्वासकी संख्याओंके ज्ञानकी विशेष आवश्यकता है। जाबड़ा (jaw) के नीचे वा ऊपर कानके पास हाथ रखनेसे गौ-बैलोंकी नाड़ीकी गतिका अनुभव किया जा सकता है। पूंछकी जड़ अथवा प्रथम पञ्जरास्थिका मध्यस्थान भी नाड़ी परीक्षाकी जगह है। नाड़ी समान है, वा छिन्न, दुर्वल है किंवा दृढ़,—सबसे पहले यही जानना जरूरी है। साधार स्वस्थ-गौ-बैलकी नाड़ीकी धड़क ५० से ५५ तक प्रति मिनट होती है। बच्छे बच्छीकी नाड़ी ६२ से १३२ वार तक एक मिनटमें चलती है। रोगका आक्रमण होनेपर नाड़ीकी चालमें तेजी आ जाती है और अधिक दुर्वलता होनेपर सुस्ती।

श्वास-प्रश्वास क्रिया।

एक वार सांस लेना और एक वार सांस छोड़ना—इसीका नाम श्वास-प्रवास क्रियाकी एक मात्रा है। नाड़ीके ४ वार होनेपर श्वास-प्रश्वास क्रियाकी एक मात्रा होती है। इस प्रकार स्वस्थ-गाय-बैलकी श्वास-क्रिया एक मिनटमें १५ से २५ वार तक होती है। इसमें विशेष घटाव, बढ़ाव होना रोगका लक्षण है।

शरीरकी गर्मी।

गौ-बैलोंके शरीरकी गर्मीकी जांच करनेके लिये एक क्लि-

निकल थर्मामिटर (ताप मापक यन्त्र) पास रहना चाहिये। गुह्य स्थान वा योनिद्वारमें तोन चार मिनट तक थर्मामिटरको रखनेसे शरीरकी अवस्था मालूम हो सकतो है। स्वस्थ-पशुके शरीरकी गर्मी (Temperature) साधारणतः १०० से १०१०८ दर्जे होती है। साधारण बुखारमें १०५ डिग्री तक गर्मी पहुंच जाती है। बहुत अधिक जोरका बुखार होनेपर १०६ वा इससे भी अधिक गर्मी बढ़ जाती है। १०० डिग्रीसे नीचे सर्दी हो जाती है।

औषधकी माता।

पूरी उम्रके गाय-बैलके लिये औषधकी मात्रा मनुष्यकी औषध-मात्रासे ६से १० गुणी अधिक निर्दिष्ट है। मध्यम स्थितिकी गायको दवाकी ८ गुणी मौताज देनेसेफायदा हो सकता है। बङ्गाल की दुबली-पतली गायके लिये ६ गुणी मात्रा ही काफी है। अवश्य ही हरियाना, गुजराज, नेलोर नागोर और मैशोर आदि प्रान्तोंकी हृष्ट पुष्ट गौओंको मनुष्योंकी औषध-मात्रासे १० गुणी अधिक मात्रा दी जानी चाहिये। एक महीनेसे ६ महीनेतकके बच्छे बच्छीको औषधकी आधी मात्रा देना उचित है। एक महीनासे कम उम्रके बच्छे बच्छीको पूरी मात्राका चौथा हिस्सा देना ठीक है।

औषध-सेवन ।

गाय-बैलको औषध खिलानेमें बड़ी होशियारीसे काम लेना चाहिये। औषधमें मीठे अथवा नमकका संयोग होनेसे पशु इच्छा पूर्वक खा लेते हैं और तरल पदार्थको जीभसे भी चाट लेते हैं। किन्तु न खानेकी दशामें पीने लायक औषध बांसकी नली तैयार कराकर उसकी सहायतासे पशुके पेटमें पहुंचा देनी चाहिये। दो आदमी पशुको थाम लें और तीसरा औषध उसके गलेमें उतारदे। उस समय बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। सांसकी नलीमें औषध पहुंच जानेपर पशुका सांस उचट जाता है और वह बड़े जोरसे खांसने लगता है। औषध पिलानेकी तरकीब चित्रमें दिखायी गयी है।

स्वास्थ्य-रक्षाका उपाय।

गोजातिकी परिपाक-शक्ति बड़ी प्रबल होती है। इस लिये गौ-बैलोंको यत्न पूर्वक रखा जाय तो सहज ही में वे रोगाक्रान्त नहीं होते। रोगसे बचानेके लिये गो-बैलोंको शुद्ध जल और नियमित आहार देना चाहिये। अधिक सर्दी और अधिक गर्मीसे पशुओंको बचाना चाहिये। वर्षाकालमें खुले स्थानमें गौ-बैलोंको रखना उन्हें बीमार बनाना है। दुर्गन्धयुक्त दूषित वायु और गीले स्थानसे सदा पशुओंको अलग रखना चाहिये।

चेचक (माता)।

गो जातिके लिये चेचक (माता) का रोग सबसे अधिक संक्रामक (छूतका) और मारात्मक है। बङ्गलामें इसका नाम वसन्त और अङ्गरेजीमें Rinder-Pest है। इस रोगके रोगी पशुको निरोग पशुओंसे अलग रखना चाहिये।

लक्षण:—पहले शरीरमें गर्मी बढ़ती है और १०५से१०७ डिग्रीतक पहुंच जाती है। शरीरमें फुनस ,.नकलने पर गर्मी कम होने लगती है। नाड़ी चञ्चल किन्तु दुर्बल हो जाती है। नाड़ीकी धड़कका परिमाण प्रति मिनट ६० से १२० तक हो जाता है। सुदक्ष पशु-चिकित्सकोंने चेचकके रोगको तीन अवस्थाओंमें बांटा है। जिसमें पहली अवस्थामें पशुका सुस्त होजाना, कांपना, शरीरका चमड़ा सख्त होजाना, मुंहका गर्म और भीतरसे लाल बनजाना कानोंका लटक आना, पेटमें कब्जी रहना, गोबर आंव मिलाहुआ आना, भूख कम लगना, प्यास बढ़ना, सारे शरीरकी रगें खासकर पीठ और कन्धेकी नसोंका खिंचजाना, चारों पावोंका सिकुड़ जाना, जुगाली धीरे धीरे और कम करना, दांत पीसना और शरीरके बाल खड़े होजाना इत्यादि। ये लक्षण दो तीन दिन रहते हैं।

दूसरी अवस्थामें—मुंह, कान, सींग, पांव और शरीरके दूसरे दूसरे हिस्सोंकी गर्मी स्थिर नहीं रहती। कभी शरीर गर्म और कभी शीतल—यही ढङ्ग रहता है। सांस जोरसे चलता है।

शरीर कांपता है। आंखें लाल हो जाती हैं और उनसे पानी बहने लगता है। रीढ़का दर्द बढ़ जाता है। मुंहके भीतरी हिस्सेमें ललाई आजाती है। गोबरमें आंव और खून गिरने लगता है। शरीर अधिक तनजाता है और नाड़ीकी गति बड़ी तेज हो जाती है। पशु कमरपर मुंह रखे पड़ा रहता है। जीभपर कांटेंसे हो जाते हैं जिससे चरा नहीं जाता। जुगाली करना भी बन्द हो जाता है। यह दशा चार पांच दिन रहती है।

तीसरी अवस्थामें मुंह, आंख, और कानसे श्लेष्मा (कफ) गिरता है और निःश्वाससे दुर्गन्ध आती है। जीभ, नाक आंखके भीतर छाले पड़जाते हैं। दांत ढीले होजाते हैं। गोबर पतला बदबूदार, आंव, खून और छिछड़े मिलाहुआ होने लगता है। सांस कष्टसे लिया जाता है। गर्भवती गाय होनेसे बच्चा निकल जाता है। नाड़ी हाथ नहीं लगती। गोबर आंव और खून मिलाहुआ गाढ़ेपनको लिये हुए आता है। कमजोरीके कारण पशुकी खड़े होनेकी हिम्मत नहीं होती। इस अवस्थाकी अवधि १६ दिनतक होती है।

यदि शरीरमें दाने निकल आवें तो रोगका दोष हलका हो जाता है। किन्तु दाने अधिक भरजायं, आंव तथा खूनके साथ अधिक पतला गोबर होने लगे और पेट लटक जाय तो अवस्था बड़ी बुरी समझनी चाहिये।

प्रतिकार ।

चेचक छूतकी बीमारी है और वह शरीरमें एक तरहका जहर पैदा होनेसे उत्पन्न होती है। इस लिये यह स्मरण रखना चाहिये कि दूषित पदार्थ बाहर निकले बिना पशु निरोग नहीं हो सकता। इसके सिवा बड़ी सावधानीसे रोगी पशुकी सुश्रूषा की जाय और उचित खुराक खानेको दीजाय। रोगकी प्रथमावस्थामें पशुको कब्जी देखी जाय तो उसे दूर करनेके लिये खानेका साधारण नमक या एक तरहका नमक जिसे अङ्गरेजीमें एप्सम साल्ट कहते हैं एक छटांक से डेढ़ छटांक तक दिनमें एक या दो बार कब्जी दूर न होनेतक दिया जाय। क्योंकि कोठेकी सफाई इस बीमारीमें बहुत जरूरी है। अलसी या चावलके मांडमें नमकको ऊपर लिखी मात्रा देनी चाहिये। यदि पतला दस्त पहलेसे ही होता हो तो इस रेचक प्रयोगके देनेकी आवश्यकता नहीं। तेज जुलाब देना भी हानिकर है, क्योंकि उससे कमजोरी बढ़जाती है। यदि नमक से भी दस्त न आवें और आवश्यकता प्रतीत हो तो गरम पानी और तेलकी पिचकारी.दी जा सकती है। इसके विपरीत चौबीस घण्टेसे अधिक यदि गोबर बहुत पतला आंव और खूनके साथ बार बार आता रहे तो नीचे लिखी औषध-मात्रा चावलके मांडके साथ देनी चाहियेः—

कपूर ६ माशे, सोरा ६ माशे, धतूरेके बीज ४॥ माशे, चिरायता ६ माशे और देशी शराब आधपाव।

रोगकी दूसरी अवस्थामें २४ घण्टेसे अधिक दस्त लगते रहें तो उक्त औषध-मात्रामें १ माशे माजूफलका चूर्ण मिलाकर उसी तरह चावलके मांडके साथ दवा पिलादेनी चाहिये। जब-तक मल-भेद बन्द न हो जाय, तबतक १२ घण्टेके अन्तरसे औषध बराबर दी जाय। हड़े बहेड़े आंवला एक एक छटांक दो सेर पानीमें आगपर चढ़ाकर आधसेर पानी बचजाने पर छानकर पिलाना चेचक की सब अवस्थाओंमें लाभदायक है। इसके सिवा कण्टकारी भी चेचककी अनुभूत महौषध है।

पथ्य-चावल और कलाई खूब पकाकर उसका गाढ़ा मांड देना चाहिये। दस्त लगनेकी हालतमें प्यास अधिक लगती है और पशु पानीपर टूट पड़नेकी चेष्टा करता है किन्तु पानी जितना कम दिया जायगा, उतना ही अच्छा। क्योंकि पानी अधिक पीनेसे दस्त अधिक लगने लगते हैं। अवश्य ही कब्जी होनेकी हालतमें पानी पिलाना हानिकर नहीं। जब दस्त बन्द होजायं, तब औषध देना बन्द कर देना चाहिये और खानेके लिये दलिया या थोड़ी हरी घास देनी चाहिये। दलियेमें कुछ नमक मिला देना भी अच्छा है। इस बीमारीमें सख्त चारा कभी खानेको नहीं देना चाहिये, क्योंकि वह हजम नहीं हो सकता।

मुष्टियोग।

(क) बिना फूलवाली कण्टकारीकी जड़के ४ टुकड़े और २१ कालीमिर्च—खूब घोटकर चेचकका आक्रमण होनेकी सम्भा-

बना होनेपर पशुको खिलादी जाय तो चेचकका विष शरीरमें घुस नहीं सकता। रोगी पशुके लिये भी यह योग हितकर है।

(ख) कच्ची हलदी ४ तोले, ४ तोले गुड़के साथ दिनमें तीन बार ४।५ दिन लगातार पशुको खिलायी जाय, तो चेचक रोगके होनेका डर नहीं रहता।

(ग) होमियोपाथिक मतसे सलफर टिंचरकी २० बूंदें सवेरे। तीन दिन लगातार खिलानेसे चेचक रोग होनेकी सम्भावना बहुत कम रहती है।

खांसी

खांसी बड़ी बुरी व्याधि है। इससे पशु व्याकुल हो जाता है और रोगके बढ़ जानेसे कभी कभी गर्भवती गायका तो बच्चा तक गिरजाता है। खांसी गर्मीसे होती है या सर्दीसे—खांसी के साथ कुछ ज्वर हो जाता है और सांसकी गति भी बढ़ जाती है। पशुकी चरनेकी इच्छा नहीं होती और वह दिनोंदिन दुबला होने लगता है। आंख नाकसे पानी गिरता है। साधारण सर्दीकी खांसीमें तरल श्लेष्मा निकलता है।

चिकित्सा—तुलसीके बीज ७॥ तोला, बच १। तोला, मुलहटी ५ तोला, बबूरका गोंद २॥ तोला और पोस्तकी डोडी आठ। इन सबको कूटकर ५ सेर पानीमें आगपर चढ़ादे और जब २॥ सेर पानी जल जाय, तब उतारकर छान लेना चाहिये। इसकी पाव पावकी दिनमें ३ खुराक पशुको दी जाय।

अडूसा (वासक) के पत्तेका रस आधपाव गुड़के साथ मिलाकर दोनों समय पिलानेसे भी सर्दीकी खांसी चली जाती है। अदरखका रस एक छटांक, काली मिर्चका चूर्ण एक छटांक गुड़के साथ पशुको खिलाना भी सर्दीकी खांसीमें विशेष हितकर है। गलेमें घाव मालूम हो तो किसी लोहेको तपाकर धीरे धीरे बाहरसे सेकना चाहिये। बच्चोंके गलेमें कीटाणु पैदा होकर खांसी कर देते हैं। उस दशामें तारपीनका तेल ३ तोला और अलसीका तेल तीन छटांक, गर्म जलमें मिलाकर पिलानेसे बड़ा लाभ होता है। अनारके सूखे छिलके एक छटांक पीसकर छटांकभर मक्खनके साथ खिलानेसे खांसी दूर होती है। केले के सूखे पत्तेकी राख २ तोले, मक्खन ४ तोले और कच्चा दूध १० तोले एक साथ मिलाकर तीन दिन तक सबेरे पशुको देनेसे खांसी नहीं ठहरती।

पथ्य—नरम घास या चावल तथा अलसीका गर्मागर्म मांड नमक डालकर खिलाना चाहिये।

अकड़।

इस बीमारीमें पशुका समस्त शरीर अकड़ जाता है। पशु सुस्त हो जाता है। चलने फिरनेकी उसको हिम्मत जाती रहती है। सांस भी कठिनतासे लिया जाता है।

चिकित्सा—इस अकड़ रोगमें गन्धक आधपाव, अलसीका तेल एक पाव और सोंठ सवा तोला। इन सबको मिलाकर

आधसेर पानीके साथ पशुको पिलादेना चाहिये। १२ घण्टेके अन्तरसे तीन खुराक दे देनी चाहियें। प्यास लगनेपर नमक मिलाहुआ शुद्ध जल पिलाकर ऊपरसे छाये हुए मकानमें बांध देनेसे पशुका रोग शान्त हो जायगा।

अफरा (पेट फूलना)

अधिक चारा दाना वा मौसमी चारा खा जानेसे यह बीमारी होती है। अजीर्ण ही इसकी उत्पत्तिका कारण है। इसमें पशुका पेट फूलकर ढोलकी भांति बन जाता है। पेटके बायें पसवाड़ेमें भारी पन अधिक होता है। घास और चारे-दानेको छोड़कर पशु उदास हो जाता है और जुगाली भी नहीं करता। पेटमें दर्द और बेचैनी भी पैदा हो जाती है।

औषध—अधपाव पीसी हुई राई, गर्म पानी मिलाकर पिला देनेसे तुरन्त लाभ होता है। अथवा सोंठका चूर्ण २ तोले, हींग ३ माशे नमक दो छटांक, काली मिर्च ६ मासे और तारपीनका तेल आधी छटांक, एक सेर पानीमें घोटकर रोगी पशुको पिला दे—ताजा गोबरकी दोनों कोखोंपर मालिश भी लाभ पहुंचाती है। इसके सिवा आध सेर एप्सम साल्ट वा साधारण नमक एक सेर अण्डी वा सरसोंके तेलमें मिलाकर पिलाना भी रोगी पशुके लिये उपकारक है।

पथ्य—जब तक पेट साफ न हो जाय, तबतक चरनेको कुछ न देना चाहिये। छायामें बांधनेकी व्यवस्था अवश्य रहनी चाहिये।

अतिसार।

(पतले दस्त)

खाने पीनेकी अव्यवस्थासे किंवा दस्त होनेकी दवा लेनेसे अथवा अधिक धूप या ठण्डक लग जानेसे बहुत पतला गोवर-बार बार होने लगता है। दूधवाली गायाका दूध कम हो जाता है। पेटमें दर्द होना भी अतिसारका लक्षण है। इस बीमारीसे पशु बहुत कमजोर हो जाता है।

औषध—खड़िया मिट्टीका चूरा पौने चार तोले, पलासका गोंद पौन तोला, अफीम साढ़े चार माशे और चिरायतेका चूर्ण सवा तोला,—इन सब औषधियोंको खूब पीसकर छटांकभर देशी शराबमें मिलावे और एक सेर चावलके मांडमें डालकर पशुको पिला दे। चावलका मांड और जौका सत्तू पानीके साथ देना भी हितकर है। इसके सिवा मांजूफल दो तोले, चिरायता दो तोले, खड़िया मिट्टी दो तोले, कूट छानकर चावलके मांडमें सुबह खिलानेसे भी पतले दस्त बन्द हो जाते हैं।

आधी छटांक पिसा हुआ काला नमक और एक तोला हीराकसीस जौके आटेमें मिलाकर पशुको खिलानेसे दस्तोंका रोग दूर हो जाता है। बेलकी गिरी दो छटांकमें, आधी छटांक खड़िया मिट्टी मिलाकर दो मात्रा बना रखे। एक एक मात्रा सवेरे और शामको गायका आधसेर मट्ठा मिलाकर देनी चाहिये।

पथ्य—पशुको आराम करने दे और चावल मूंगकी पतली खिचड़ी खिलावे अथवा सूखी जमीनका पतला घास चरावे। पानी भी थोड़ा पिलाना चाहिये।

रक्तातिसार।

यह बड़ी ही भयानक बीमारी है अजीर्णतासे यह पैदा होती है। पहले सूखी मींगनीसा गोबर होता है, जिसके साथ आंव आती है और बादमें खूनके दस्त होने लगते हैं। बड़ी दुर्गन्ध आती है। मुंहमें छाले पड़कर घाव हो जाते हैं और मुंहसे राल गिरने लगती है। पशु चरना छोड़कर बड़ा सुस्त हो जाता है। यह व्याधि संक्रामक है। नीरोग पशुओंसे रोगी पशुको बिलकुल अलग कर देना चाहिये और जिस जगह उसका गोबर गिरा हो उस स्थानको साफ कराकर वहां चूनेका पानी छिड़क देना चाहिये।

औषध—पावभर आंवला मिट्टीके पात्रमें रातको भिगो दे और सवेरे छानकर उस पानीमें दही एक पाव ईशबगोल एक छटांक और शक्कर एक पाव मिलाकर दिनमें दो बार रोगी पशुको लावे। आंवलेके अभावमें धनियां व्यवहारमें लाया जा सकता है।

पथ्य—नरम चारा और दो सेर मोटे चावल रांधकर पशुको खिलाना चाहिये।

प्रसूतका बुखार।

प्रसूतका बुखार प्रसूत-समयके कष्टोंसे होता है। बच्चेके शरीरसे उतरा हुआ खून वा चमड़ेकी पतली झिल्ली या जेरके अन्दर रह जानेसे भी यह रोग हो जाता है।

औषध—नमक दो छटांक, गन्धक डेढ़ छटांक, सोंठ सवा तोला, राब डेढ़ छटांक और थोड़ा घी मिलाकर पिलावे।

पथ्य—सहजमें पचनेवाला चारा दाना ही इस दशामें खिलाना चाहिये।

सर्दीका रोग।

(न्यूमोनिया)

इस बीमारीमें पशुकी नाकसे लाल पानी गिरनें लगता है, खांसीकी ठसक रहती है और श्वास भी धीरे धीरे आता है। सर्दीकी मौसिममें ही यह रोग प्रायः होता है। पशु खाना पीना भी छोड़ देता है और उदास रहता है। नाककी झिल्लीका रङ्ग लाल हो जाता है। बुखार रहता है।

औषध—मेथी २ छटांक, चायकी पत्ती आधी छटांक, सोंठ २ छटांक, अजवायन २ छटांक और गुड़ आधसेर—इन सबको पानीमें औटाकर देनेसे बड़ा लाभ होता है। कलमीशोरा ६ माशे, कपूर ६ माशे धतूरेके बीज ६ माशे और देशी शराब आध पावको २॥ तोले मुलहटीके काढ़ेके साथ पिलानेसे भी न्यूमोनिया रोग शान्त होता है।

पथ्य—पशुको देखकर आधसेर गेहूंका आटा और एक पाव अलसीको सेरभर पानीमें पकाकर एक सेर दूध और पावभर गुड़के साथ पशुको पिलावे। दिनमें दो बारसे अधिक पानी न पिलाना चाहिये। गर्म स्थानमें पशु रखा जाय।

मस्सा वा रसौली।

पशुओंके पेट कोंख अथवा थोथकी जगह एक गोल सूजन हो जाती है जिसे लोग मस्सा या रसोली कहते हैं। यद्यपि वह एक मांसपिण्ड होता है, उसमें कोई वेदना नहीं होती किन्तु उससे पशुकी सुन्दरतामें अन्तर आ जाता है।

औषध—नाइट्रिक एसिड ३।४ वार लगानेसे रसौली बैठ जाती है।

लकवा।

लकवा उस बीमारीका नाम है जिसमें पशुके अङ्गका कोई हिस्सा सुन्न हो जाता है। जब पशुका कोई अङ्ग हिल डुल न सके अथवा निकम्मा हो जाय तो समझ लेना चाहिये कि लकवा हो गया है।

औषध—अदरख (पीसा हुआ) दो तोले, देशी शराब एक छटांक और भुना हुआ हींग ६ माशे—इन सबको मिलाकर पशुके गलेमें उतार देना चाहिये। दो दो घण्टेके अन्तरसे यह औषधि दी जाय। इससे कोई लाभ न दिखायी दे तो किसी

अंग्रेजी दवाफरोशसे लाकर कुचलेका अर्क बीस बूंद ठंडे पानीके साथ रोगी पशुको दिनमें २ बार पिलाना चाहिये। नीमके पत्तोंको उबालकर उसमें नमक मिला 'सुन्न' स्थानपर मलना भी अनुभवी लोगोंके मतसे लाभदायक है।

धनुष्टंकार।

यह रोग बड़ा कष्टदायक है। शरीरमें आघात लगने या खाने पीनेमें विकृति होनेसे इसकी उत्पत्ति मानी गयी है। इसमें पशुके चारों पांव चिंगुर जाते हैं और उसे चलनेमें बड़ा कष्ट होता है। उसकी गर्दन सीधी रहती है। गोबर भी साफ नहीं होता।

औषध—जमालगोटा डेढ़ माशा और नमक तीन छटांक चावलके आधसेर गर्म मांडमें मिलाकर पशुको पिला देना चाहिये। इससे उसका पेट साफ हो जायगा। अनन्तर तोलाभर हींगकी चार मात्राएं चारबार करके पानीके साथ पिला देनी चाहियें।

साढू रोग।

इस रोगका आक्रमण थनोंपर होता है जिससे ऊंची सूज जाती है। पीछेके पांवसे गाय लंगड़ाकर चलती है। थनोंका हिस्सा लाल हो जाता है और दर्दके कारण पशु उसे छूने नहीं देता। इस रोगवाली गायका दूध निकालकर फेंक देना चाहिये। बीमारी न बढ़नेकी दशामें बच्चेको दूध पीने देनेकी

रुकावट नहीं। यह बीमारी बच्चे-बच्छोंके अधिक समयतक थनोंको लबड़ते रहनेसे, गोबर करते समय पुट्ठोंपर लाठी मारनेसे, समयपर दूध न निकलनेसे, थनोंपर चोट लग जानेसे अथवा दूधको थनोंमें छोड़ देनेसे होती है।

चिकित्सा—आधसेर सेजनेकी पत्तियोंको भांगकी भांति रगड़ छानकर २॥ तोले काली मिर्च और एक छटांक नमक मिलाकर तीन दिनतक पिलावे। शीतकाल हो तो नमकमें तेल और अजवायन मिलाकर कांसीके पात्रसे पुट्ठेपर मालिश करनी चाहिये। दही आधसेरके साथ पावभर तिल्लीका तेल मिलाकर तीन वार देनेसे भी बड़ा लाभ होता है। पोश्तकी डोडी और नीमके पत्तोंको उबालकर उसके वफारेसे सेक देना चाहिये।

साधारण जुलाब।

कब्ज होनेकी हालतमें जब पशु मन लगाकर नहीं चरता, तब यह साधारण जुलाब दी जा सकती है:—

गन्धकका चूर्ण डेढ़ छटांक पप्सम साल्ट वा खानेका नमक दो छटांक, सोंठ सवा तोला, राब डेढ़ छटांक।

दो सेर गर्म पानीमें उक्त औषधियां मिलाकर ठण्डी हो जानेपर पिलावे।

सख्त जुलाब।

कोठा बहुत कड़ा हो या सख्त जुलाब देनेकी जरूरत हो तो नीचे लिखे नुसखे काममें लाये जांय।

(१) अलसीका तेल एक पाव गन्धकका चूर्ण दो छटांक सोंठ सवा तोला चावलके आधसेर गर्म मांडके साथ।

(२) इससे भी तेज जुलाबका नुसखा यह है।

(३) नमक या अपसम साल्ट डेढ़ पाव मुसब्बर पाव छटांक अलसीका तेल दो छटांक सोंठ पाव छटांक हिन्दुस्तानी शराब एक छटांक।

दो सेर गर्म पानीमें मिलाकर गुनगुना रहते पिलावे।

क्षुधा वर्धक योग।

सोंठ सवा तोला, चिरायता सवा तोला, काली मिर्च सवा तोला, अजवायन सवा तोला और नमक एक छटांक।

इन सबका चूर्ण बनाकर चौथा हिस्सा राब और गर्म माडमें मिलाकर पिलावे। इससे भूख बढ़ती है।

ज्वरनाशक योग।

सोरा सवा तोला, नमक अढ़ाई तोला, चिरायता अढ़ाई तोला और राब डेढ़ छटांक। आधा सेर पानीमें मिलाकर पिलावे।

शक्ति वर्धक योग।

हीरा कसीसका चूर्ण साढ़े चार माशे और चिरायता सवा तोला। खूब पीसकर आधसेर चावल या गेहूंके रंधे हुए दलि-

येके साथ एक सप्ताह या १५ दिन देनेसे पशुकी ताकत बढ़ जाती है।

पिचकारी बनानेकी विधि।

कमजोरीकी हालतमें पशुको दवा पिलाना कठिन हो उस समय पिचकारी देनेकी जरूरत होती है। पिचकारी दस्त रोकनेके लिये भी दी जाती है और दस्त लगानेके लिये भी। पिचकारी बनानेकी विधि यह है कि एक फुट लम्बे और आध इंच मोटे बांसके टुकड़ेके सिरोंको तराशकर गोल बना ले। अनन्तर एक चमड़ेकी थैली जिसमें डेढ़ सेर पानी समा जाय जो डेढ़ फुट लम्बी ओर चार इञ्च चौड़ी हो, बनाले और उसे बांसको नलीके मुंहसे एक दम मिलाकर ऐसी मजबूत बांध दे कि पानी निकल न जाय। पिचकारी देनेके समय बांसके एक सिरेको तेल लगाकर चुपड़ दे और पशुकी पूंछके नीचे गुह्य स्थानमें एक हाथसे थामकर इञ्च भर डाल दे और दूसरे हाथसे थैलीका खुला हुआ मुंह पकड़कर जानवरकी पीठसे ऊंचा उठावे और किसी दूसरेको उस थैलीमें पिचकारीकी दवा डाल देनेके लिये कहे। इस विधिसे सहजमें औषध पशुकी अंतड़ियोंमें पहुंचकर अपना असर कर देती है।

दस्तावर पिचकारोकी दवा।

दो सेर गर्म पानी थोड़ा साबुन और डेढ़ छटांक सरसोंका तेल।

दस्त रोकनेकी पिचकारीकी दवा।

चावलका मांड़ एक सेर और अफीम पौन तोला।

थनका मारा जाना।

दूधवाली गायके थनमें किसी रोगके हो जानेसे वह थन मारा जाता है वा बन्द हो जाता है। फिर उसमेंसे दूध नहीं निकलता। यह रोग यद्यपि असाध्य है तथापि गोपालनके लेखकके मतसे निम्न लिखित प्रयोग इसमें लाभदायक हो सकता है:—

"जिस गायका थन मारा जाय उसको गाभिन होनेपर एक पाव सरसोंका तेल प्रत्येक मासकी शुक्ला २ को ब्याने-तक देता रहे और जब उसके ब्यानेकी तैयारी हो, तब एक या दो घण्टे पहले आधी छटांक हींग चने वा जौकी रोटीमें रखकर खिला देवे। इस प्रयोगसे गायके ब्यानेपर थनसे फिर दूध आने लगता है। यदि किसी कारणसे थन दो चार दिनसे ही बन्द हो गया हो तो आधपाव कालीजीरी और आधपाव काली मिर्चका चूरा बनाकर आधसेर गर्म घीमें मिलाकर तीन दिनतक दिनमें दो बार पिलावे।

खुर और मुंहका रोग।

यह एक तरहका छूतका बुखार है। खुर, खुरपका खुरहा, खुसीटा मुंहपांग आदि कई इसके नाम हैं। इसमें पशुके मुंह पांव और बाखमें फुंसीकी तरह दाने निकल आते हैं, जो कि

फटकर घाव भी हो जाते हैं।

इस रोगमें पशु बुखारके कारण उदास रहता है और ऊस-से चरा भी नहीं जाता। मुंहसे लार टपकती है और (यदि गाय हो) थन फूल जाते हैं। बुखार चढ़नेसे पहले पशु कांपता है और बादमें उसके मुंह सींग और शरीर गर्म हो जाते हैं। पशु बार बार हौंठ चाटता हैं। फुंसी या दानेका आकार सेमके बीजके समान होता है। १८।२० घंटेमें फुंसी फूटकर लाल दाग बन जाता है। ये फुंसियां प्रायः मुंहमें जीभपर अधिक होती हैं। इस बीमारी और चेचकमें अन्तर सिर्फ इतना ही है कि चेचकमें दस्त लगते हैं और पांवोंपर दाने नहीं निकलते।

उपाय—एक सेर गर्म पानीमें अढ़ाई तोले फिटकरी मिलाकर उससे मुंह, पांव और थन धो डालने चाहियें। और भी जहां जख्म हो, गर्म पानीसे सेंकना अच्छा है। कपूर एक तोला, मीठा तेल चार तोले और तारपीनका तेल चार आने भरका मर्हम बनाकर घावोंपर लगाना चाहिये। खुरोंके घावोंमें कीड़े पड़ जानेकी दशामें तिल-तेलमें तारपीनका तेल समान भाग मिलाकर लगावे। इसके अभावमें नीला थोथा ४ तोला, तीन पाव गर्म पानी-में गलाकर घावोंपर छिड़का जा सकता है।

मक्खियोंको नहीं बैठने देना चाहिये। क्योंकि उनसे कीड़े पड़ जानेका डर रहता है। तेल और कपूर लगा देनेसे मक्खियां नहीं बैठतीं। बुखार तेज हो तो कपूर ६ माशे, शोरा १ तोला

और देशी शराब आधी छटांककी मात्रा दिनमें दो बार दे। गुड़ पुराना एक सेर और सौंफ पावभरको एक सेर गर्म पानीमें खौलाकर पिलाना भी इस रोगमें हितकर है।

पथ्य—चोकर या चावलका मांड, आधी छटांक नमक मिलाकर और कोई नरम खुराक। बीमार गायका दूध निकालकर फेंक देना चाहिये।

पित्ती।

पित्तीसे पशुके शरीरमें ददोड़ेसे पड़ जाते हैं। रोंगटे खड़े होकर सूजन भी हो जाती है। यह अजीर्ण और कब्जीका फसाद होता है। इसमें जुलाब देकर पशुका पेट साफ कर देना चाहिये। साथ ही कम्बल या झूलसे शरीरको ढांक दे। गेरू आधपाव और शहत आधपावको एक पाव गर्म पानीमें मिलाकर देना रोगकी शान्तिका उपाय है।

कृमिनाशक योग।

हींग सवा तोला और गन्धकका चूर्ण एक छटांक। आधसेर गर्म पानीमें मिलाकर ३।४ दिन लगातार पशुको पिलाना चाहिये, इससे कीड़े मर जाते हैं। घावमें कीड़े पड़जानेपर तारपीनके तेलमें कपूर मिलाकर लगाना अच्छा है। मरवेके पत्तेकी टिकड़ी बनाकर कीड़ेवाले घावपर रख ऊपरसे मुलतानी मिट्टीका लेप करनेसे भी कृमि नष्ट हो जाते हैं।

खुजली।

खुजली खूनकी खराबीसे होती है। पशुकी इच्छा शरीरको रगड़ डालनेकी रहती हैं और दीवार या पेड़का सहारा पाते ही वह उससे शरीरको घिसने लगता है। गन्धक आधी छटांक तमाखू आधी छटांक किरासिन तेल दो तोले और मीठा तेल आधपाव, इन सबको मिलाकर एक वर्तनमें रख छोड़ना चाहिये। जिस पशुको खुजली हो, उसके शरीरमें इसकी मालिश कर देनेसे रोग मिट जाता है।

घावका मर्हम।

नीला थोथा साढ़े चार माशे, तारपीनका तेल साढ़े चार माशे, अलसीका तेल दो छटांक, कपूर और मोम आधपाव। मोमको तेलमें गलाकर तारपोनका तेल और नीला थोथा उसमें डाल दे। यह मर्हम घावपर लगानेसे बड़ा लाभ पहुंचता है। फिटकरी अढ़ाई तोले, अलसीका तेल डेढ़ छटांक, मोम डेढ़ छटांक और तारपीनका तेल १। तोला—इन सबका मर्हम भी घावके लिये मुफीद है।

घाव धोनेका पानी।

नीमकी पत्तियोंको पानीमें उबालकर घाव धोनेसे घाव साफ हो जाता है। पानी पावभरमें साढ़े चार माशे नीला थोथा मिलावे और जब पानी ठण्डा हो जाय तब घावपर लगावे। इससे

घाव अच्छा होता है। सवा तोला फिटकरीको आधसेर गर्म पानीमें मिलानेसे भी घाव भरनेका एक अच्छा पानी तैयार हो जाता है।

रक्त-शोधक योग।

(१) मुसब्बर सवा तोला, हीराकसीस पौन तोला और सोंठ सवा तोला। (२) अथवा गन्धक अढ़ाई तोले, शोरा पौन तोला और सोंठ अढ़ाई तोले (३) किंवा नमक अढ़ाई तोले और गन्धक अढ़ाई तोले।

उक्त तीनों योगोंमेंसे कोई एक कूट छानकर चावलके पतले मांडके साथ दूसरे तीसरे दिन पशुको दिया जाय, उसके खूनमें कोई खराबी पैदा नहीं होगी

सींग टूटना।

पशु लड़कर सींग तुड़ा बैठते हैं। यदि जड़से सींग टूट जाय तो छोटी बेरीके पत्ते पीसकर घावमें भर देने चाहियें और ऊपरसे नीमका तेल डालता रहे। आधा सींग टूटनेपर मनुष्यके सिरके बाल उड़दकी पीठीमें लपेटकर सींगपर बांध दे और ऊपरसे नीमका तेल डाल दे। नीमका तेल बनानेकी विधि यह है कि नीमकी कच्ची पत्तियोंको पीसकर एक टिकड़ी बनावे, बादमें पावभर मीठा तेल आगपर चढ़ा दे। जब तेल खौलने लगे तब वह टिकड़ी उसमें छोड़ दे, जब टिकड़ी खूब पक जाय तब

निकालकर फेंक दे और तेलको ठण्डाकर काममें लावे। एक हिस्सा कपूर, चार हिस्से मोठा तेल और एक हिस्सेका चौथा हिस्सा तारपोनका तेल मिलानेसे भो टूटे सींगपर लगानेका अच्छा मर्हम बन जाता है। मोटे कपड़ेपर इस मर्हमको लगाकर सींगपर लपेट देना चाहिये।

मांड बनानेकी विधि।

अलसी और चावलके मांड रोगी पशुओंके लिये बड़े आवश्यक हैं। इसलिये उनके बनानेकी तरकीब यहां लिखना अयुक्त न होगा। डेढ़ पाव अलसीको चार सेर पानीमें घण्टेभर आगपर जोश देनेसे अलसीका मांड तैयार होगा। पांच सेर पानीमें तीन पाव चावल आगपर चढ़ाकर डेढ़ घण्टे उबाल देता रहे। चावलका मांड बन जायगा। मांड बन जानेपर कपड़ेसे छानो और ठण्डा होनेके बाद नमक मिलाकर काममें लाओ।

पाण्डु रोग।

पाण्डु रोगका नाम पीलिया है और लोग कमलकी बीमारी भी इसको कहते हैं। इसमें पशुको आंखों और मुंहपर पीलापन छा जाता है और मूत्र भो पीला होने लगता है। गोवर साफ नहीं होता और उसका रङ्ग सफेदपनको लिये हुए होता है। औषध—नमक एक पावको आधी छटांक सोंठके साथ मिलाकर चावलके एक सेर मांडमें दिनमें दो बार पिलाना चाहिये।

थनोंका फटना ।

बच्चेके अधिक देर दूध पीते रहनेसे, चोट लग जाने किंवा दूहनेवालेका नख चुभ जानेसे थनोंपर घाव हो जाते हैं। उनका उपाय यह है कि दूध निकालनेके बाद दोनों समय घी वा मक्खन में थोड़ी हलदी और नमक मिलाकर थनोंके घावोंपर लगावे। लोहेके गर्म तवेपर दूधकी धार मारनेसे भी वफारा लगकर घाव नर्म पड़ जाते हैं।

चोटका लगना ।

आपसमें लड़ने या किसी अन्य कारणसे चोट खा जानेसे पशुके खोड़ जाती है। इस लिये चोट लगनेका निश्चय होते ही छटांकभर फिटकरी, आधी छटांक हलदी सेरभर दूधके साथ पिला देनी चाहिये। नोसादर और शोरा समान भाग लेकर दो सेर ठण्डे पानीमें मिला रखे और चोटवाले स्थानपर इसे डालता रहे। अथवा पीपलकी हरी छाल आधसेरको पांच सेर पानीमें आगपर चढ़ा दे और जब दो सेर पानी रह जाय, तब नीचे उतारकर गुनगुनाते हुए पानीसे चोटकी जगहको सेक दे।

हलकमें रोक ।

हलकके पास दो नलियां हैं जिनमेंसे एकके द्वारा पेटमें खाना पहुंचाता हैं और दूसरीसे सांस आता है। कभी कभी मोटा चारा या गुठली वगैरहके खानेकी नलीमें अटक जानेसे पशुको बड़ा

कष्ट होता है। वह मुंह बढ़ाकर खांसने लगता है और गर्दन सीधी रखता है। चारा दाना भी उससे नहीं खाया जाता। उस दशामें आधपाव अलसीका तेल और आधपाव शराब मिला कर गर्मकर एकएक छटांक पशुको पिलावे। इससे नली और उसमें रुकी हुई चीज चिकनी होकर भीतर चली जायगी या बाहर निकल आयगी। यदि चीज हलकमें अटकी हो तो, हाथ मुंहमें डालकर अंगुलियोंसे निकाल लेनी चाहिये। दो मजबूत आदमियोंको पशुका मुंह पकड़ा दे, जिससे हाथके चबानेका डर न रहे।

गला फूला।

यह बड़ा बुरा रोग है। खूनमें जहर होनेसे इसकी उत्पत्ति मानी गयी है। बुखारके साथ कानोंके नीचे और जाबड़ोंके बीच गांठें होकर जबान तालू और गलेमें सूजन हो जाती है। पशुके लिये सांसतक लेना कठिन हो जाता है। यह प्राणघातक व्याधि है, जो दम घोटकर मार डालती है। इससे सांस लेनेकी जगहको बचाकर जाबड़ोंके पास गर्म लोहेसे दाग देना चाहिये। फिटकरी ६ माशेमें आधसेर पानी मिलाकर मुंहको धो दे और सेरभर गर्म पानीमें थोड़ा साबुन और डेढ़ छटांक सरसोंका तेल मिलाकर पिचकारी लगावे। धतूरेके बीजका चूर्ण साढ़े चार माशे, कपूर नौ माशे और देशी शराब दो छटांक, चावलके एक सेर पतले मांडमें नमकके साथ मिलाकर पशुको पिलावे।

गन्धककी धूनी रोगी पशुको सामने रखकर ऐसे ढङ्गसे लगावे कि उसके सांसके साथ धुआं भीतर फेफड़ेमें चला जाय। लोहेसे दाग न देनेकी अवस्थामें निर्दिष्ट स्थानपर आकके दूधसे ऐसा "+" निशान भी कर दिया जाता है।

जहर खाना या खिला देना।

पशु या तो चारेके साथ किसी कारणसे बिना जाने जहर खाकर मर जाते हैं या स्वार्थी नीच चमड़ेके लालचसे उन्हें मार डालनेके लिये जहर खिला देते हैं। जहर खाये हुए पशुके मुंहमें थूकका नाम नहीं रहता। आंखें लाल और शरीर गर्म हो जाता है। बेहोश होकर पशु गिर जाता है।

इस दशामें डेढ़ माशा जमाल गोटा और तीन छटांक नमक चावलके आधसेर मांडमें मिलाकर तुरन्त पिला देना चाहिये। जबतक पेटका दर्द न जाय और दस्त बन्द न हों, तबतक पानी न पिलावे। इस तेज जुलाबके बाद केलेके पेड़के रसमें कपूर मिलाकर देनेसे जहरकी गर्मी शान्त होती है।

पथ्य—खलीको पकाकर उसके साथ चोकर और एक दो दिन बाद हरा घास।

प्रमेह रोग।

प्रमेह रोगसे प्रायः सांड और बैल पीड़ित रहते हैं। यह पशुओंको निस्तेज बना देता है। गायें भी इस रोगसे पीड़ित

देखी जाती हैं। गौओंके मूत्र स्थानमें एक तरहका सफेद और धूसर रङ्गका 'जेरा' लगा रहता है, वही प्रमेहका मोटा लक्षण है। रोग पुराना होनेसे 'जेरा' हलदीके रङ्गमें बदल जाता है। उसमें बड़ी दुर्गन्ध होती है। इस रोगवाली गाय गर्भ-धारण नहीं कर सकती और यदि गाभिन हो जाय तो उसके तू जानेकी अधिक सम्भावना रहती है। सांड और बैलको प्रमेह होनेसे पेशाब करनेमें बड़ा कष्ट होता है और पूंछको भी वह इधर उधर करता रहता है। उदासीके कारण उसकी शक्ति क्षीण हुई सी जान पड़ती है।

उपाय—शोरा आधा तोला और कबाबचीनी चार आने भर चावलके आधसेर मांडके साथ प्रतिदिन रोगी पशुको पिलावे। गायको सांड और बैलसे और बैल या सांडको गायसे अलग रखे।

रक्तमूत।

रक्तका दूषित हो जाना ही इस रोगकी उत्पत्तिका कारण है पशु खाये हुए चारे दानेको पचा नहीं सकता और बिना पचन-क्रियाके रक्त उत्पन्न नहीं होता। खराब पानी पीने और सड़ी गन्दी जगहका घास खानेसे भी यह बीमारी हो जाती है।

लक्षण—पशु ताजा नहीं होता और न अच्छी तरह खाता पीता ही है। उदास रहता है। जुगाली नहीं करता। दुधारी गायका दूध कम हो जाता है। रोएं फट जाते हैं

और शरीरका चमड़ा खुश्क मालूम होता है। पशु अन्य पशुओंसे अलग खड़ा रहता है। आरम्भमें दो तीन दिन दस्त होते हैं और फिर पेटमें कबज़ी हो जाती है। कोख पिचक जाती है, पेशाबका रङ्ग लाल—सुर्ख हो जाता और पेशाब करते समय पशुको कष्ट भी होता है। पेशाबका भी लाली अधिक रहनेसे रङ्ग काला दिखाई देता है और उसमें दुर्गन्ध भी आती है। आंखें बैठ जाती हैं और मुंहके भीतरकी झिल्ली फीकी पड़ जाती है। कान और पांव ठण्डे रहते हैं। नाड़ी कमजोर और सांसकी गति तेज हो जाती है। पशु पड़ा रहता है, उसमें उठनेकी शक्ति नहीं रहती। इस रोगको अवधि ५।६ दिनसे २५ दिन तक है।

उपाय—इस दशामें पशुको सोंठ २॥ तोले; मुसब्बर १। तोला, नमक १॥ पाव, गन्धकका चूर्ण ५ तोले, गुड़ आधपाव और गर्म पानी आध सेर। दवा कूट छान और मिलाकर पिला दें इससे उसका पेट साफ हो जायगा। यदि यह जुलाब अपना असर न करे तो १२ घण्टेके बाद इसकी आधी मात्रा फिर दे देनी चाहिये। इसके बाद पशुकी कमजोरी दूर करनेके लिये हीराकसीस छै आनेभर और चिरायता १। तोला कूट छानकर आधसेर चावलके मांडके साथ पिला दे। अजवायन १। तोला चिरायता १। तोला, सोंठ १। तोला और काली मिर्च १। तोलामें चौथे हिस्सेका गुड़ मिलाकर गर्म मांडके साथ खिलानेसे भी

पशुमें शक्तिका सञ्चार होता है। जुलाब देनेपर दस्त लगते ही रहें और बन्द होनेका कोई लक्षण दिखाई न दे तो खड़ी मिट्टी १ छटांक, सोंठ १। तोला, अफीम ६ आनेभर कत्था आधी छटांक और शराब १ छटांक डेढ़ पाव पानीमें मिलाकर पशुको पिला दे।

पथ्य—चावलका मांड और पुष्टिकर कोमल घास।

प्लेग नाशक योग .

पशुपर प्लेगका आक्रमण होनेपर 'गला फूला' रोगके समान ही लक्षण देखे जाते हैं। इसके सिवा समस्त शरीर लाल हो जाता है। रोंगटे खड़े हो जाते हैं और बुखारका बेग बढ़ जाता है। सन्धि स्थान फूल उठते हैं। पशु बड़ा व्याकुल हो जाता है।

उपाय—इस महाव्याधिमें भी गला फूला रोगकी चिकित्सा लाभ पहुंचाती है।

सबसे पहले जुलाब देकर पेट साफ कर देना चाहिये। इसके बाद भांग १ तोला, कपूर १ तोला, सहजनीके बीज १ तोला, एरण्डके बीज १ तोला, पिप्पली १ तोला—इन सब औषधोंको कूट छानकर तीन मात्रा बना रखो और दिनमें तीन बार अलसीके मांडके साथ पशुको पिलाओ। धतूरेके पत्ते २ भाग बाबची या तुलसीके पत्ते १ भाग और समुद्र फेन १ भागको रगड़ और गर्म कर फूले हुए स्थानपर लेप करो।

पथ्य—नर्म घास तथा चावलका मांड नमक डालकर।

चमत्कारी चुटकुले।

(१) भुना हुआ सुहागा घावमें भर देनेसे घावका खून बन्द हो जाता है।

(२) समान भाग लाख और नोसादरको मीठे तेलमें पकाकर घावपर लगानेसे शान्ति आ जाती है।

(३) पशुके शरीरके बाल गिर गये हों, तो एक सप्ताह तक पानीमें तिल पीसकर लगाने चाहियें।

(४) आधपाव गर्म घीमें एक तोला मोम मिलावे और उसमें सिन्दूर, मुर्दाशंख तथा नीलाथोथा चार चार तोले कूट.छानकर डाल दे। यह नासूरकी दवा बन गयी। इसकी बत्ती बनाकर जबतक नासूर भर न जाय, तबतक उसमें लगाता रहे।

(५) गधेकी लीदको खब महीन पीसकर घावपर बुरकानेसे घाव सूख जायगा।

(६) बैलके कन्धेपर बोझ ढोनेसे घाव हो जाता है, उसपर तीन माशे अफीम, और एक तोला हलदीको सरसोंके तेलमें मिलाकर लगानेसे अच्छा हो जायगा। अलसीका तेल मलनेसे भी फायदा होगा।

(७) पशुके शरीरका कोई हिस्सा आगसे जल जाय.तो उसपर प्याजका पानी या केलेके पेड़का रस मल देना चाहिये। चूनेकी कलीको पानीमें भिगोनेके बाद जब पानी स्वच्छ ऊपर आ जाय,

तब पानीको अलग कर शहत मिलाओ और जले हुएपर लगा दो।

(८) जीभके ऊपर छोटे छोटे कांटे हो जाते हैं, उससे पशु चर नहीं सकता। ऐसे रोगी पशुके मुंहमें हलदी और नमक मिलाकर दिनमें दो चार बार मल देना चाहिये। कालीजीरी काली मिर्च और हलदी समान भाग कपड़छानकर लगानेसे भी फल होता है।

(९) गेरूं आधपावमें पानी मिलाकर पिलानेसे शरीरका कांपना बन्द होता है। गलेमें तूंबेको बेल बांध देनी चाहिये।

(१०) पशुकी आंखोंसे पानी गिरनेकी दशामें रात्रिको त्रिफला (हड़ बहेड़ा आंवला समान भाग) भिगोकर प्रातःकाल उठ पानीसे आंखे धो डालो।

(११) गठिया वा जोड़के (Rheumatism) दर्दमें एक सेर पिसी हुई मेथीमें आधसेर गुड़ और एक छटांक अजवायन मिलाकर प्रतिदिन खिलावे।

(१२) चींचड़ी 'जइये' किलनी वा कलीली (चाहे जो कुछ भी कहिये कई नाम हैं) थनों पूंछ और अगल बगलमें चिपकर पशुका खून पी लेती हैं। उससे पशु व्याकुल रहता है और दूधवाली गायका दूध भी कम हो जाता है। नमक ४ भाग सरसोंका तेल ४ भाग और किरासनका तेल एक भाग मिलाकर लगानेसे कलीलियां नष्ट हो जाती हैं।

(१३) अवस्था हो जानेपर भी गाय न ब्यावे और बांझ रह जाय तो उसे सात छुहारे गुठली निकालकर जौकी रोटीमें ७ दिनतक खिलावे। इसके सिवा हर समय सांडके पास रखे।

(१४) सांप काटनेपर काटे हुए स्थानको कसकर रस्सीसे बांध दे जिससे जहर शरीरमें फैलने न पावे और "परमेंगनेट पोटाश" पांचभाग, ६५ भाग पानीके साथ पिचकारीसे उस स्थानमें भर दे।

(१५) नांकसे खून गिरनेपर देखना चाहिये कि जोंक तो नहीं लगी है। इसके बाद वर्तनमें सूखी मट्टी रखकर पानी भर दे और उसे पशुकी नांकमें लगावे। यदि होगी तो, मिट्टीकी गन्धसे जोंक उसमें गिर जायगी। चोट या धूपसे खून गिरनेकी हालतमें सिरपर ठण्ढा पानी डालना चाहिये।

(१६) पशु घास या चारेके साथ जहरीला कीड़ा खाकर उसी समय गिर जाता है और उसकी चलने फिरनेकी शक्ति मारी जाती है। ज्यों ज्यों जहर चढ़ता है उसकी बेहोशी बढ़ती जाती है। इस स्थितिमें आध सेर सज्जीको दो सेर पानीमें घोल कर पशुको पिलावे। चूल्हेकी राख एक सेर पानीमें मिलाकर पिलानेसे भी बड़ा फायदा करती है।

(१७) बच्चेके पेटमें दूध न पचकर जम जाता है। उस समय वह पतला और बदबूदार गोबर करता है। इस रोगमें छाछ एक पावमें आध पाव सरसोंका तेल और आधा छटांक नमक मिला-कर उसे पिलावे।

(१८) गन्दे पानीके पीजाने और सड़ा चारा दाना खाजानेसे बच्छोंको दस्त लगते हैं। उस समय आधी छटांक ईसबगोल एक छटांक आंवलेके पानीके साथ देनेसे बड़ा लाभ होता है।

(१६) सूखी धांसीमें बच्छे बच्छोको केलेके सूखे पत्तेकी राख बनाकर एक पैसेसे दो पैसे भरतक—आधी छटांक घी और एक पाव कच्चे दूधमें मिलाकर पिलावे।

(२०) जीभपर घाव या छाले पड़जायं तो पीपलको छालकी भस्म लगानेसे बड़ा लाभ होता है।

(२१) प्रसवके बाद कितनी ही गायोंके दूधका रङ्ग लाल हो जाता है और वह व्यवहार करने योग्य नहीं रहता। ऐसी दशामें एक छटांक अलसी वा रेंड़ीके तेलके साथ मुर्गीका एक अण्डा खिलाना चाहिये। एक सप्ताह इस प्रकार करनेसे दूध का रङ्ग सफेद हो जाता है।

(२२) मूत्रस्थानके फट जानेपर एक छटांक लहशुन तेलमें पकाकर उससे २।३ दिन सेकना चाहिये।

(२३) मोटे ताजे गौ-बैलोंको मृगीका रोग प्रायः होजाता है। विषेशकर गाभिन गायें अधिक परिमाणमें खली आदि उत्तेजक चीजें खाकर बीमार हो जाती हैं। इस रोगमें पशुका सिर घूमने लगता है। सारा शरीर कांप उठता है। दांत कड़कड़ाते हैं और मुंह बन्द हो जाता है। मुंहसे कभी कभी झाग गिरने लगते हैं। मूर्छा हो जाती है। इस रोगमें गो-मूत्र सुंघाने

से तुरन्त लाभ होता है। तेलके साथ लहसुन खिलानेसे भी मूर्छा दूर होती है।

(२४) गर्भ गिरनेकी बीमारी भी छूतकी है। इसलिये जो गाय 'तू' जाय, उसको जेर दूर डालनेका ध्यान रहे। पांच तोले तूतियाको पांच सेर गर्म पानीमें मिलाकर उससे गायका कमल और घाव धो डालने चाहिये।

(२५) पशुके जिस अङ्गको लकवा मारजाय उसपर सुई चुभानेसे दर्द नहीं होता। आधी छटांक सरसों पीसकर उसमें गर्म पानी इतना मिलाया जाय कि वह गाढ़ा लेप बनजाय। यह लेप लकवा मारे स्थानपर लगाना चाहिये।

(२६) गो-बैलोंकी आंखोंसे सदा पानी गिरता रहनेकी बीमारीका नाम ढरका है। दोनों सींगोंके बीच जो गढ़ा होता है, उसमें ५। ७ दिन रेंड़ी या तिलका तेल भरनेसे ढरका रोग दूर होता है।

(२७) चन्दन, अगर, लोद, बहड़ा और तुस—समान भाग लेकर घोटो और जहां सर्प आदि जहरी जन्तुने काटा हो वहां लेप करो। फायदा होगा।

विशेष द्रष्टव्य।

मनुष्यके रोगाक्रान्त होनेपर जिस औषधका प्रयोग किया जाता है उसी रोगसे पीड़ित होनेपर गो-बैलोंको भी वही

औषध दी जा सकती है और उसका फल भी अच्छा होता है। केवल मात्रा बढ़ा देनी चाहिये। मनुष्य और गोजातिके रोग और चिकित्सामें साम्य होनेका कारण यह है कि पशुओंमें गोवंशही ऐसा है जिसके प्रसवका समय मनुष्योंकी तरह नौ महीने और १० दिन निर्दिष्ट है। एक विकार-ग्रस्त गौको केवल मकरध्वजके प्रयोगसे आरोग्य होते देखा गया है।



रालट एक्ट।

यदि आप जानना चाहते हैं कि, समस्त भारतवासियों और कौंसिलके सभी गैरसरकारी मैंबरोंके विरोध करने पर भी यह भारतियोंकी स्वाधीनता हरण करने वाला कठोर कानून क्यों पास किया गया, विरोध में व्यवस्थापिका सभाके गैरसरकारी मेम्बरोंने क्या भाषण दिये, सरकारका क्या वक्तव्य था, माननीय मालवीयजी, मिस्टर जिन्ना आदिने कौंसिलकी मेम्बरीसे क्यों इस्तीफे दिये, कहां कहां दंगे हुए, निर्दोष भारत वासियों पर गोलियां क्यों चलीं, कितने मरे तथा दिल्ली और पंजाब आदिमें कैसे कैसे अत्याचार हुए तो आप इस पुस्तकको एक बार अवश्य ही पढ़ें।

इसमें सत्याग्रह आंदोलनका पूरा इतिहास, पंजाबके आत्याचारोंके विरोधमें दिया हुआ कवि सम्राट रविन्द्रनाथ ठाकुरका वह जोरदार पत्र जो उन्होंने "सर"की उपाधि लौटा लेनेके लिये वायसरायको लिखा था तथा रालट एक्ट सम्बन्धी अन्यान्य अनेक आवश्यकीय विषय दिये गये हैं। इस एक पुस्तकसे ही रालट एक्टका पूरा पूरा रहस्य जान सकते हैं। ४०० पृष्टोंकी सचित्र पुस्तकका मूल्य केवल २) सुन्दर सुनहली जिल्द बन्धीका २॥)

लोकमान्य तिलक।

इसमें लोकमान्य पं० बालगङ्गाधर तिलकको जीवनी और

उनके महत्वपूर्ण व्याख्यानोंका संग्रह है। यदि आपको यह जाननेकी अभिलाषा है कि, लोकमान्य तिलकने जननी जन्मभूमिके उद्धारके लिये क्या क्या यत्न किये, उन्हे कैसी कैसी यातनाएं सहनी पड़ीं, किन किन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा तो आप इस पुस्तकको अवश्य ही पढ़ें। मूल्य ॥) मात्र

जर्मनीकी राज्य व्यवस्था

जिस जर्मनी देशके नामसे आज सभी परिचित हैं इस पुस्तकमें उसी जर्मनीकी राज्य व्यवस्थाका पूरा पूरा वर्णन है। राज्य व्यवस्था सम्बन्धी जानने योग्य प्राय: सभी बातें इसमें आ गयी हैं। मूल्य ॥)

सत्याग्रह मीमांसा

इस पुस्तकमें सत्याग्रहके उच्च सिद्धान्तोंका बड़ी ही ओजस्विनी भाषामें वर्णन किया गया है। सत्याग्रह क्या है यह इस पुस्तकसे ही मालूम होगा। पुस्तक बड़े महत्वकी है। मूल्य केवल ।)

आपको हिन्दीकी किसी भी पुस्तककी आवश्यकता हो तो हमें लिखें। बड़ा सूचीपत्र मुफ्त भेजा जाता है।

हिन्दीमें नयी चीज

भारतीय दर्शन शास्त्र उपक्रमणिका खण्ड।

दर्शन शास्त्रकी आलोचनात्मक विशद वर्णना। सम्पादककी गवेषणा पूर्ण विस्तृत प्रस्तावना सहित छपकर तैयार है। स्वर्गीय पं० माधवप्रसादजी मिश्रकी संक्षिप्त जीवनी और चित्रके साथ भारतीय दर्शनाचार्योंका सुन्दर भाव पूर्ण चित्र दिया गया है। मूल्य १॥) सजिल्द २)

चार्वाक् दर्शन--भारतीय दर्शन-शास्त्रका दूसरा खण्ड-श्रीमाधवमिश्र-ग्रन्थावलीकी यह दूसरी संख्या छप रही है। इसमें चार्वाक् दर्शन मूल सानुवाद और उसके आचार्यकी जीवनी, चित्र एवं क्रमिक विकासका इतिहास तथा अन्यान्य दर्शनोंसे तुलना, माधवाचार्य प्रदर्शित स्वरूप इत्यादि विषय विशद और विस्तृत रूपसे सरल भाषामें वर्णन किये गये हैं। हिन्दी साहित्यमें यह बिलकुल अनोखी चीज है।

आख्यायिका सप्तक—स्वर्गीय पं० माधवप्रसादजी मिश्रकी रसमयी रचनाका यह आख्यायिका रूप फल है। इसमें मिश्रजीकी धार्मिक और सामाजिक ७ आख्यायिकाओंका संग्रह है। धर्मके स्वरूप और समाजकी दशाका प्रकृत चित्र देखनेकी इच्छा रखनेवालोंको इसे अवश्य पढ़ना चाहिये। हिन्दीके गल्प साहित्यमें यह मौलिक रचना है।

भारतीय-गोधन—चिरकालके अन्वेषण और अनुशीलनसे यह ग्रन्थ तैयार हुआ है। इसका सङ्कलन ऐसे सर्वाङ्गीण भावसे किया गया है कि कोई विषय बच नहीं गया है। गोवंश माहात्म्य, गोवंशकी उपयोगिता, विलायती और देशी गौओंमें प्रभेद, गोचर भूमि, गोरक्षाका उपाय, गोपालकका कर्तव्यो गर्भवती गौकी सेवा, दूधका व्यवसाय, गौओंका आहार, घास और उनकी रक्षा, कहांकी गौएं कैसी होती हैं, दूध दही घृत आदिके गुण एवं गौओंकी चिकित्सा प्रभृति,—कहांतक गिनावें गौओंके संबन्धमें जो कुछ भी आप जानना चाहें, भारतीय गोधन पढ़कर जान सकते हैं। बहुतसे सुन्दर हाफटोन चित्र दिये गये हैं। भगवान् कृष्णकी छवि देखकर आखें तृप्त हो जायंगी। पृष्ट संख्या ३०० से ऊपर। मू० २) सुनहरी जिल्द २॥)

मालविका—यह ग्रन्थ कविकुलगुरु कालिदासके ललित कलापूर्ण नाटक मालविकाग्निमित्रका उपन्यास स्वरूप है। इसकी सरस रचना उपन्यास प्रेमियोंके आनन्दको बढ़ानेवाली है। टिप्पणीमें मूल श्लोक भी दे दिये गये हैं। स्थान स्थान पर प्रसङ्ग सूचक सुन्दर चित्र दिये गये हैं। पुस्तकके आरम्भमें महाकवि कालिदास और उनकी रचनापर विस्तृत आलोचनात्मक प्रस्तावना है। हिन्दी संसारमें इस ढङ्गका उपन्यास अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ।

मिलनेका पता—

भारत पुस्तक भण्डार।
नं०२६, बड़तल्ला स्ट्रीट
कलकत्ता।